साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२२ अंक-३ ❖ पृष्ठ ९२ | आश्विन-कार्तिक, संवत्-२०७३ | अक्तूबर २०१६

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
विदेश में
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

संपादकीय

भारतीय मन का अक्षय प्रकाश पर्व ४

प्रतिस्मृति

अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए/ *महादेवी वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, अज्ञेय, गोपालदास 'नीरज', गोपाल सिंह नेपाली, हरिवंशराय बच्चन, सुमित्रानंदन पंत, सोहनलाल द्विवेदी* ५

कहानी

आना मेरे घर/ *तुलसी देवी तिवारी* ९

पछतावा/ *एम.डी. मिश्रा आनंद* १८

हवाएँ चुप नहीं रहतीं/ *मृदुला बिहारी* २४

दीपावली की मंगलकामनाएँ/ *सत्यनारायण भटनागर* ३४

गुलमोहर के फूल/ *दुर्गा प्रसाद* ५२

एकांत/ *विजय कुमार सिंह* ६२

आलेख

श्रीलाल शुक्ल : पत्रों के आईने में/ *रमेश चंद्र शाह* १४

एक पुरानी विधा में नए संदर्भों के प्रतिमान/ *बी.के. वर्मा 'शैदी'* २२

कृषि पंडित सुखराम वर्मा/ *परदेशी राम वर्मा* ३८

शक्ति पर्व : नवरात्र व विजयादशमी/ *रिचा शर्मा* ५४

दीवाली आई, रात सुहानी ले आई/ *नलिनी मिश्र* ६४

लघुकथा

आत्मीय/ *मृणालिनी घुले* २३

कविता

आओ फिर से दीया जलाएँ/ *अटल बिहारी वाजपेयी* ८

एक दीपक लड़ रहा है.../ *बालकवि बैरागी* १७

गोधूली की मधुवेला में/ *धीरेंद्र प्रसाद सिंह* ५१

जनमानस का है आह्वान/ *वेदभूषण त्रिपाठी* ५३

एकात्म मानववाद/ *इंदुशेखर तत्पुरुष* ५७

किसलाया नव चैतन्य/ *दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'* ६३

मेलजोल के बोल सुनाए/ *राजा चौरसिया* ७१

स्मरण

राष्ट्रीय चेतना के उद्घोषक उदय प्रताप सिंह/ *राहुल* ३०

व्यंग्य

दीवाली पर निबंध मत लिखाइए/ *पूरन सरमा* ६०

राम झरोखे बैठ के

फुटपाथ के रैन बसेरे/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४१

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

नगीनेवाली अँगूठी/ *गुरदयाल सिंह* ५८

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

शत्रु/ *एंटन चेखव* ६६

यात्रा-संस्मरण

एक लंबा अंतराल और स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी/ *राजेंद्र नागदेव* ७२

लोक-साहित्य

बेटा विवाह के गीतों में विविध भाव/ *मृदुला सिन्हा* ७८

बाल-संसार

चल्लो''मुझे ओढ़ नईं खेलना/ *मंजुरानी जैन* ८०

वर्ग-पहेली ८३

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८४

साहित्यिक गतिविधियाँ ८६

संयुक्त-संपादकीय

भारतीय मन का अक्षय प्रकाश पर्व

भारतीय मन बुनियादी तौर पर उत्सवधर्मी है। गहन नैराश्य में भी पर्व-त्योहारों के स्मरण मात्र से ही खुशी के महासागर में तैरने लगता है। लेकिन पर्व-त्योहार मनाने की भारतीय दृष्टि केवल मनोरंजन केंद्रित नहीं है, क्योंकि उसमें तात्कालिकता की बजाय शाश्वतता और सनातनता है। सतही उमंग-उल्लास के प्रदर्शन की बजाय उसमें निजी और सामुदायिक, यानी वैयक्तिक और सामाजिक उत्थान का भाव है। पर्व असल में आत्मा को निरंतर समृद्ध एवं मनुष्यता को विकसित करने के उपक्रम हैं। ये हमारी सामाजिक सहभागिता को मजबूत करते हैं।

असहनीय ग्रीष्म को शांत करती हुई तीज आती है और तन-मन को शीतल करनेवाले त्योहारों के बीज बिखेरकर चली जाती है। प्रकाश पर्व दीपावली स्वयं दस त्योहारों का समुच्चय है। धनतेरस, नरक चतुर्दशी, लक्ष्मी पूजन, गोवर्धन पूजा, गोपाष्टमी पर्व अर्थात् पर्वों की एक संपन्न शृंखला जीवन के असमतल को संतुलन देती है।

आज हम भौतिक वस्तुओं में मैचिंग ढूँढ़ते हैं। मेल खाते कपड़े और दीवारों के रंग से मिलते परदे—यह सब इसलिए कि जीवन एक अंतहीन दौड़ में पड़कर बेमेल हो गया है, अंदर के रंग फीके हो गए हैं। जीवन से उत्सवधर्मिता विलुप्त हो गई है। आज सारा संघर्ष भीतर और बाहर में सामंजस्य बिठाने का है। अगर यह संभव हो गया तो हर दिन दीपावली है। दीपपर्व हमें इसे संभव करने का रास्ता बताता है। घरों, कार्यालयों को ही साफ नहीं करना, मन के उन कोने-अंतरों को भी स्वच्छ करना है, जो बेकार की चीजों से भर गए हैं। व्यर्थ की अभिलाषाएँ वहाँ भरी पड़ी हैं, उन्हें उठाकर बाहर फेंकना है। अपने लिए नए संकल्प करने हैं और उन्हें पूरा करने के लिए जुट जाना है। जो इच्छाएँ पूरी नहीं हो सकीं, उनकी जगह नए सपने देखने हैं। उन सपनों को कर्म से अर्थ देना है। क्योंकि कुछ सपनों के मर जाने से जीवन नहीं मरता है। वह अंतहीन है। जब व्यक्ति में यह संकल्प जागता है तो क्रांति घटित हो जाती है। मन में रंग फूट पड़ते हैं। ये ऐसे रंग हैं जो उजले हैं। उन अँधेरे कोनों में भी दीपक जलाना है, जहाँ सदियों पुरानी अप्रसन्नता का अँधेरा पसरा है; एक छोटा सा दीया उसे हटाने में समर्थ है।

अस्वच्छता और अस्वस्थता को हम ही दूर कर सकते हैं। उसके लिए धनतेरस के दिन एक हाथ में अमृत कलश, दूसरे हाथ में आयुर्वेद शास्त्र, तीसरे हाथ में वनस्पति और चौथे हाथ में शस्त्र धारण किए धन्वंतरि नहीं प्रकट होंगे। उनके चारों हाथ हमारे पास हैं। उन्हें हमें अपने भीतर देखने की जरूरत है।

दीपावली अनेक महापुरुषों के जन्म और निर्वाण से जुड़ा पर्व भी है। कई भारतीय धर्म इसी दिन अस्तित्व में आए। इसका एक महत्त्व गौचारण संस्कृति से भी जुड़ा है। मथुरा, वृंदावन, नाथद्वारा, द्वारका, काशी के अन्नपूर्णा इत्यादि पर्व इस दिन अपने होने को सार्थक करते हैं। इस संदर्भ में कृष्ण उस व्यक्ति का प्रतिरूप बन जाते हैं, जो इंद्र जैसी अपरिमित और निरंकुश सत्ता को चुनौती देता है। एक सामान्य गौपालक विराट् सत्ता बनकर यह रास्ता दिखाता है कि संकल्पवान मनुष्य के लिए कुछ भी असंभव नहीं है। उसे सबसे मामूली व्यक्ति पर विश्वास करना होगा और उससे पहले उनके मन में यह विश्वास भरना होगा कि वह सबकुछ कर सकता है। आवश्यकता केवल आत्मबल को जाग्रत् करने की है। गोबर का गोवर्धन पर्वत अपने मामूली अर्थसंदर्भ छोड़कर बड़े अर्थ देने लगेगा। मुश्किल वक्त में सबको एकजुट होकर संघर्ष करना होगा। कृष्ण और राम का संघर्ष दीपपर्व में ही बड़े अर्थ ग्रहण करता है। इससे पता चलता है कि घनघोर अंधकार के बाद उजाला-ही-उजाला है।

प्रकाश पर्व यह विश्वास भी जगाता है कि सत्य को कितना ही अकेला कर दिया जाए, आखिरकार विजय सत्य की ही होती है। असत्य का अँधेरा क्षणभर का ही होता है। यही कारण है कि असत्य सत्य के सामने थरथराता रहता है। उसकी गर्जना निर्णायक क्षणों में गिड़गिड़ाहट में बदल जाती है। असत्य अंततः नष्ट हो जाता है।

अकेला और निहत्था होते हुए भी सत्य दसों दिशाओं में व्याप्त रावण रूपी असत्य को धराशायी कर देता है। अंतर में पैठ गए अज्ञानता और भय के दशानन को भी बार-बार जलाना होता है। जलना और राख होना उसकी नियति है, इसलिए उससे डर कैसा?

दीपावली के दिन प्रदर्शनप्रिय नासमझ लोग ध्वनि और वायु प्रदूषण फैलाने को ही उत्सव मनाना समझते हैं। इसका पर्यावरण पर बुरा प्रभाव पड़ता है। पटाखों के शोर से लोग बीमार और बच्चे परेशान हो जाते हैं। इसका दुष्प्रभाव देखना हो तो पशु-पक्षियों पर देखना चाहिए। वे कई दिन तक असामान्य बने रहते हैं। पटाखों को त्यागकर दीपों से दीपावली मनानी चाहिए।

दीपावली जीवन-मूल्यों में आस्था के बचे रहने का भी प्रतीकार्थ संप्रेषित करनेवाला पर्व है। सबका शुभ हो, मंगल हो—इन्हीं शुभेच्छाओं के साथ 'साहित्य अमृत' के पाठकों को दीपावली की हार्दिक मंगलकामनाएँ।

संयुक्त संपादक
(हेमंत कुकरेती)

अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए

मेरे दीपक

● **महादेवी वर्मा**

मधुर-मधुर मेरे दीपक जल!
युग-युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल;
प्रियतम का पथ आलोकित कर!

सौरभ फैला विपुल धूप बन, मृदुल मोम-सा घुल रे मृदु तन;
दे प्रकाश का सिंधु अपरिमित, तेरे जीवन का अणु गल-गल!
पुलक-पुलक मेरे दीपक जल!

सारे शीतल कोमल नूतन, माँग रहे तुझसे ज्वाला-कण;
विश्वशलभ सिर धुन कहता मैं, हाय न जल पाया तुझमें मिल!
सिहर-सिहर मेरे दीपक जल!

जलते नभ में देख असंख्यक, स्नेहहीन नित कितने दीपक;
जलमय सागर का उर जलता, विद्युत् ले घिरता है बादल!
विहँस-विहँस मेरे दीपक जल!

द्रुम के अंग हरित कोमलतम, ज्वाला को करते हृदयंगम;
वसुधा के जड़ अंतर में भी, बंदी है तापों की हलचल!
बिखर-बिखर मेरे दीपक जल!

मेरे निश्वासों से दुततर, सुभग न तू बुझने का भय कर;
मैं अंचल की ओट किए हूँ, अपनी मृदु पलकों से चंचल!
सहज-सहज मेरे दीपक जल!

सीमा ही लघुता का बंधन, है अनादि तू मत घड़ियाँ गिन;
मैं दृग के अक्षय कोशों से तुझमें भरती हूँ आँसू-जल!
सजल-सजल मेरे दीपक जल!

तम असीम तेरा प्रकाश चिर, खेलेंगे नव खेल निरंतर;
तम के अणु-अणु में विद्युत्-सा अमिट चित्र अंकित करता चल!
सरल-सरल मेरे दीपक जल!

तू जल-जल होता जितना क्षय, वह समीप आता छलनामय;
मधुर मिलन में मिट जाना तू उसकी उज्ज्वल स्मित में घुल-खिल!
मदिर-मदिर मेरे दीपक जल!

दीप से दीप जले

● **माखनलाल चतुर्वेदी**

सुलग-सुलग री जोत दीप से दीप मिलें,
कर-कंकण बज उठे, भूमि पर प्राण फलें।

लक्ष्मी खेतों फली अटल वीराने में
लक्ष्मी बँट-बँट बढ़ती आने-जाने में,
लक्ष्मी का आगमन अँधेरी रातों में
लक्ष्मी श्रम के साथ घात-प्रतिघातों में,
लक्ष्मी सर्जन हुआ
कमल के फूलों में
लक्ष्मी-पूजन सजे नवीन दुकूलों में।

गिरि, वन, नद-सागर, भू-नर्तन तेरा नित्य विहार
सतत मानवी की अंगुलियों तेरा हो शृंगार,
मानव की गति, मानव की धृति, मानव की कृति ढाल
सदा स्वेद-कण के मोती से चमके मेरा भाल,
शकट चले जलयान चले
गतिमान गगन के गान,
तू मिहनत से झर-झर पड़ती, गढ़ती नित्य विहान।

उषा महावर तुझे लगाती, संध्या शोभा वारे

रानी रजनी पल-पल दीपक से आरती उतारे,
सिर बोकर, सिर ऊँचा कर-कर, सिर हथेलियों लेकर
गान और बलिदान किए मानव-अर्चना सँजोकर,
भवन-भवन तेरा मंदिर है
स्वर है श्रम की वाणी,
राज रही है कालरात्रि को उज्ज्वल कर कल्याणी।

वह नवांत आ गए खेत से सूख गया है पानी
खेतों की बरसन कि गगन की बरसन किए पुरानी,
सजा रहे हैं फुलझड़ियों से जादू करके खेल
आज हुआ श्रम-सीकर के घर हमसे उनसे मेल।
तू ही जगत् की जय है
तू है बुद्धिमयी वरदात्री,
तू धात्री, तू भू-नव गात्री, सूझ-बूझ निर्मात्री।

युग के दीप नए मानव, मानवी ढलें,
सुलग-सुलग री जोत, दीप से दीप जलें।

यह दीप अकेला

● **अज्ञेय**

यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।
यह जन है : गाता गीत जिन्हें फिर और कौन गाएगा
पनडुब्बा : ये मोती सच्चे फिर कौन कृति लाएगा?
यह समिधा : ऐसी आग हठीला बिरला सुलगाएगा।
यह अद्वितीय : यह मेरा : यह मैं स्वयं विसर्जित
यह दीप, अकेला, स्नेह भरा,
गर्व भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।

यह मधु है : स्वयं काल की मौना का युग-संचय
यह गोरस : जीवन-कामधेनु का अमृत-पूत पय,
यह अंकुर : फोड़ धरा को रवि को तकता निर्भय
यह प्रकृत, स्वयंभू, ब्रह्म, अयुतः
इसको भी शक्ति को दे दो।
यह दीप, अकेला, स्नेह भरा,
गर्व भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।

यह वह विश्वास, नहीं जो अपनी लघुता में भी काँपा,
यह पीड़ा, जिस की गहराई को स्वयं उसी ने नापा,
कुत्सा, अपमान, अवज्ञा के धुँधुआते कड़वे तम में
यह सदा-द्रवित, चिर-जागरूक, अनुरक्त-नेत्र,
उल्लंब-बाहु, यह चिर-अखंड अपनापा।
जिज्ञासु, प्रबुद्ध, सदा श्रद्धामय,
इसको भक्ति को दे दो।

यह दीप, अकेला, स्नेह भरा
है गर्व भरा मदमाता, पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।

जलाओ दीये पर रहे ध्यान इतना

● **गोपालदास 'नीरज'**

जलाओ दीये पर रहे ध्यान इतना,
अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए।

नई ज्योति के धर नए पंख झिलमिल
उड़े मर्त्य मिट्टी गगन-स्वर्ग छू ले,
लगे रोशनी की झड़ी झूम ऐसी
निशा की गली में तिमिर राह भूले;
खुले मुक्ति का वह किरण-द्वार जगमग,
उषा जा न पाए, निशा आ न पाए।

जलाओ दीये पर रहे ध्यान इतना,
अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए।

सृजन है अधूरा अगर विश्व भर में

कहीं भी किसी द्वार पर है उदासी,
मनुजता नहीं पूर्ण तब तक बनेगी
कि जब तक लहू के लिए भूमि प्यासी;
चलेगा सदा नाश का खेल यों ही,
भले ही दीवाली यहाँ रोज आए।

जलाओ दीये पर रहे ध्यान इतना,
अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए।

मगर दीप की दीप्ति से सिर्फ जग में
नहीं मिट सका है धरा का अँधेरा,
उतर क्यों न आएँ नखत सब नयन के
नहीं कर सकेंगे हृदय में उजेरा;
कटेंगे तभी यह अँधेरे घिरे अब
स्वयं धर मनुज दीप का रूप आए।

जलाओ दीये पर रहे ध्यान इतना,
अँधेरा धरा पर कहीं रह न जाए।

यह दीया बुझे नहीं

● **गोपाल सिंह नेपाली**

घोर अंधकार हो
चल रही बयार हो,
आज द्वार-द्वार पर यह दीया बुझे नहीं,
यह निशीथ का दीया ला रहा विहान है।

शक्ति का दिया हुआ
शक्ति को दिया हुआ,
भक्ति से दिया हुआ,
यह स्वतंत्रता-दीया,
रुक रही न नाव हो
ज़ोर का बहाव हो,
आज गंग-धार पर यह दीया बुझे नहीं,
यह स्वदेश का दीया प्राण के समान है।

यह अतीत कल्पना
यह विनीत प्रार्थना,
यह पुनीत भावना
यह अनंत साधना,
शांति हो, अशांति हो
युद्ध, संधि, क्रांति हो,
तीर पर, कछार पर, यह दीया बुझे नहीं,
देश पर, समाज पर, ज्योति का वितान है।

तीन-चार फूल हैं
आस-पास धूल है,
बाँस है, बबूल है
घास के दुकूल हैं,
वायु भी हिलोर दे
फूँक दे, चकोर दे,
कब्र पर मजार पर, यह दीया बुझे नहीं,
यह किसी शहीद का पुण्य-प्राण दान है।

झूम-झूम बदलियाँ
चूम-चूम बिजलियाँ,
आँधियाँ उठा रहीं
हलचलें मचा रहीं,
लड़ रहा स्वदेश हो
यातना विशेष हो,
क्षुद्र जीत-हार पर, यह दीया बुझे नहीं,
यह स्वतंत्र भावना का स्वतंत्र गान है।

आत्मदीप

● **हरिवंशराय बच्चन**

मुझे न अपने से कुछ प्यार,
मिट्टी का हूँ, छोटा दीपक,
ज्योति चाहती, दुनिया जब तक,
मेरी, जल-जल कर मैं उसको देने को तैयार।
पर यदि मेरी लौ के द्वार,
दुनिया की आँखों को निद्रित,
चकाचौंध करते हों छिद्रित

मुझे बुझा दे, बुझ जाने से मुझे नहीं इनकार।
केवल इतना ले वह जान

मिट्टी के दीपों के अंतर

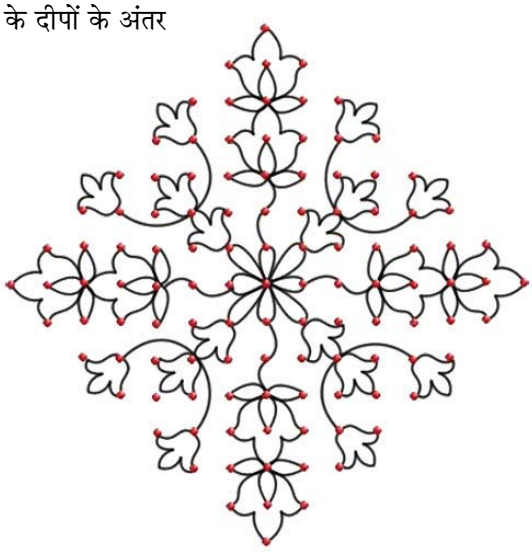

मुझमें दिया प्रकृति ने है कर
मैं सजीव दीपक हूँ मुझ में भरा हुआ है मान।
पहले कर ले खूब विचार
तब वह मुझ पर हाथ बढ़ाए,
कहीं न पीछे से पछताए
बुझा मुझे, फिर जला सकेगी नहीं दूसरी बार।

बाल प्रश्न

● **सुमित्रानंदन पंत**

माँ! अल्मोड़े में आए थे
जब राजर्षि विवेकानंद,
तब मग में मखमल बिछवाया
दीपावलि की विपुल अमंद,
बिना पाँवड़े पथ में क्या वे
जननी! नहीं चल सकते हैं?
दीपावली क्यों की? क्या वे माँ!
मंद दृष्टि कुछ रखते हैं?

कृष्ण! स्वामीजी तो दुर्गम
मग में चलते हैं निर्भय,
दिव्य दृष्टि हैं, कितने ही पथ
पार कर चुके कंटकमय,
वह मखमल तो भक्तिभाव थे
फैले जनता के मन के,
स्वामीजी तो प्रभावान हैं
वे प्रदीप थे पूजन के।

जगमग जगमग

● **सोहनलाल द्विवेदी**

हर घर, हर दर, बाहर-भीतर,
नीचे ऊपर, हर जगह सुघर,
कैसी उजियाली है पग-पग?
जगमग जगमग जगमग जगमग!
छज्जों में, छत में, आले में,
तुलसी के नन्हे थाले में,
यह कौन रहा है दृग को ठग?
जगमग जगमग जगमग जगमग!

पर्वत में, नदियों, नहरों में,
प्यारी-प्यारी सी लहरों में,
तैरते दीप कैसे भग-भग!
जगमग जगमग जगमग जगमग!

राजा के घर, कँगले के घर,
हैं वही दीप सुंदर-सुंदर!
दीवाली की श्री है पग-पग,
जगमग जगमग जगमग जगमग!

आओ फिर से दीया जलाएँ

● **अटल बिहारी वाजपेयी**

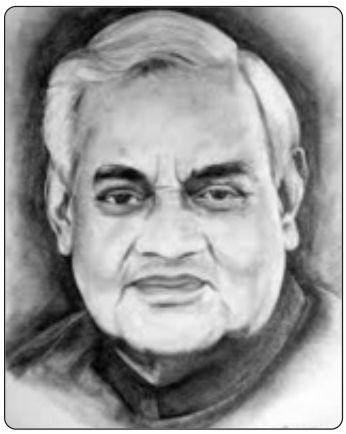

भरी दुपहरी में अँधियारा
सूरज परछाईं से हारा,
अंतरतम का नेह निचोड़ें
बुझी हुई बाती सुलगाएँ।
आओ फिर से दीया जलाएँ!

हम पड़ाव को समझे मंजिल
लक्ष्य हुआ आँखों से ओझल,
वर्तमान के मोहजाल में
आनेवाला कल न भुलाएँ।
आओ फिर से दीया जलाएँ।

आहुति बाकी, यज्ञ अधूरा
अपनों के विघ्नों ने घेरा,
अंतिम जय का वज्र बनाने—
नव दधीचि हड्डियाँ गलाएँ।
आओ फिर से दीया जलाएँ।

आना मेरे घर

● तुलसी देवी तिवारी

पहली रात तो उसकी गोद में सिर रखकर वह फूट-फूटकर रोया था, उसके आँसू गले तक बह आए थे। इस तगड़े से रोबदार नौजवान को इस प्रकार रोते देख वह सहम गई थी। उसने सुना अवश्य था कि यह उसकी दूसरी शादी है, पहली जलकर मर गई थी, दुनिया में लोग दूसरी शादी करते हैं। जो जल-भुन गया, उसके बारे में सोचने की जहमत उसने नहीं उठाई थी। पुलिस की नौकरी है लड़के की, ससुर भी पुलिस विभाग से रिटायर हैं, अच्छी-खासी पेंशन पा रहे हैं। माना कि एक चार वर्ष का बच्चा है, कोई बात नहीं! खाता-पीता पड़ा रहेगा, उसे सँभालने के लिए तो सास-ससुर पर्याप्त हैं।

वैसे भी उसकी तीस की पक्की उम्र हो रही थी, एक तो बाप की गरीबी, दूसरे गाँव की बदनामी, जीवन चुटकी भर सिंदूर के लिए तरस गया था। उसके माता-पिता और स्वयं उसने भी मान लिया था कि अब उसे समझौते वाली शादी करनी पड़ेगी। उसने पूरे मन से अपनी स्थिति स्वीकार की थी। रह गई बात दूसरी औरत के जूठन की, तो कौन जानता है कि कौन निजूठ है ? वही कौन सा इसके लिए अपने को बचाकर रख सकी है ? जीवन जीने के लिए समझौता तो करना ही पड़ता है।

'मैंने उसे जी-जान से प्यार किया था, न जाने क्या हुआ, जो इस प्रकार मुझे छोड़कर चली गई ?' वह सिसक रहा था।

'शांत हो जाइए! तकदीर पर किसका वश चला है ? जितने दिन का संग-साथ लिखाकर लाई थीं, उतने दिन निभाकर चली गईं, यह तो लगता है, मुझे आपकी सेवा का मौका मिलना बदा था। यदि वह होतीं तो मैं भला क्यों आती आपके जीवन में ?'' उसने अपनी कामदार साड़ी के आँचल से उसके आँसू पोंछे। उसकी आँखें भी भरी गागर सी छलक आई थीं।

नादान बच्चे की तरह वह उसकी बातें स्वीकारता रहा।

'आप पुराना सबकुछ भूल जाइए, जैसे वह आपका पिछला जन्म हो, मुझसे जितना बन पड़ेगा, आपकी सेवा करूँगी, समय सबकुछ भुला देता है।' उसने दार्शनिक मुद्रा में समझाया था।

'मेरा एक नन्हा सा बच्चा है, देखा नहीं तुमने उसे ?' उसने उम्मीद भरी निगाहों से उसे देखा।

'देखा है, वह तो पहले ही मेरी गोद में आकर बैठ गया था।' उसने बात समाप्त की थी।

सुपरिचित कथाकार। अब तक सात कहानी-संग्रह, दो यात्रा-संस्मरण, वृहद उपन्यास-१, दस बालोपयोगी पुस्तकें, 'पुकार जगन्नाथ की' (यात्रा-संस्मरण) प्रकाशित। छत्तीसगढ़ी राजभाषा सम्मान, न्यू कबीर सम्मान, राज्यपाल शिक्षक सम्मान, छत्तीसगढ़ रत्न, राष्ट्रपति पुरस्कार।

वह सुबह देर तक सोता रहा, उठा तो बेहद झुँझलाया हुआ, इसे डाँटा, उसे डाँटा, यह तोड़ा वह पटका। माँ दौड़-दौड़कर उसके काम करती रही। ले-देकर वह ड्यूटी गया, बार-बार अंदर-बाहर होते-होते।

दूसरी रात उसने पी रखी थी, पहले घर में घनघोर तमाशा मचाया, माणिक डरकर कहीं छिप गया था, माँ थर-थर काँप रही थी। बाप से कुछ कहते नहीं बन रहा था। उसे काटो तो खून नहीं।

'शराब पीता है! चलो कोई बात नहीं, हमारे सैदा में तो लगभग सभी पीते-खाते हैं, पापा भी तो पीते हैं, वे तो ड्राइवर हैं, उनका पिए बिना कहाँ चलनेवाला है ? यह भी तो पुलिस में है, बहुत तनाव रहता है इनके जीवन में। सब चलेगा।' उसने स्वयं को हर प्रकार के सदमे से मुक्त किया।

'मैं पीता नहीं, शादी की खुशी में दोस्तों ने पिला दी, तुम नाराज तो नहीं ?' कमरे में वह एक अच्छे आदमी की तरह शांत था।

'कोई बात नहीं, हो जाता है कभी-कभी।' ऊपर से वह भी सामान्य लग रही थी। उसकी आँखों में वासना के डोरे उभर रहे थे। सिगरेट की कश के साथ-साथ वह उसके एक-एक अंग की माप-तौल कर रहा था, उसने अनायास उसकी साड़ी खींच दी, उसका आशय समझकर वह गहरे से मुसकराई।

'बड़ी गरमी है!' कहते हुए उसने अपने कपड़े उतारकर कुरसी पर रख दिए। उसने शर्म से अपनी आँखें बंद कर ली थीं।

बाहर एकदम शांति थी। ऐसा लग रहा था जैसे सब सो गए हों। गरमी की रात थी, दो कमरे का क्वार्टर, सामने घेरकर आँगन बना लिया गया था, उसी में सब लोग गरमी की रातों में सोते थे। वैसे तो कमरे में सीलिंग फैन चल रहा था, किंतु लग रहा था जैसे हवा सूरज से मिलकर आ रही हो। उसके शरीर पर जैसे चींटियाँ रेंगने लगी थीं। वह पास आ

गया था, उसकी बाँहों का घेरा सख्त हुआ। वह पलंग पर गिरा दी गई।

'अरे! यह क्या करते हो?' वह पीड़ा से चीख उठी थी। कुछ समझे, इसके पहले ही छाती तथा जाँघों के बीच कई जगह सिगरेट से जल चुकी थी। जलन और अपमान की स्वाभाविक प्रतिक्रिया! उसने उसे परे धकेल दिया।

'मुझे धकेलती है ऽ...ऽ...? मादर...! कहाँ-कहाँ भाड़े पर चली है। मैं नहीं जानता क्या?' उसने एकदम से अपना रंग बदल दिया।

'जलाते क्यों हो मुझे?' उसने कातर दृष्टि से उसे देखा।

'अरे! क्या करूँ, यह शरीर है तेरा! खुरपी से छीलो तब भी कुछ हाथ न आए, तू तो पूरी खोजा है, हाय रे मेरी बड़ी ऽ...ऽ...!' उसने उसाँस भरी। कमर का सारा मांस गोल-गोल होकर जैसे छाती पर सज गया था। नशे के कारण मन की कुंठा जबान पर आ गई।

'अरे! तो इसमें मेरी क्या गलती है? सबके शरीर की बनावट एक जैसी होती है क्या?' वह तिलमिला उठी थी।

'जाओ कमरे से बाहर! मुझे तुम्हारी कोई जरूरत नहीं है।' वह भयानक ढंग से चीख रहा था, उसकी आँखें सूर्ख अंगारे की तरह दहक रही थीं। मुँह से लार निकलकर चेहरे पर इधर-उधर फैल रही थी।

उसे तो जैसे जीवनदान मिल गया। वह तेजी से दरवाजे की ओर भागी थी कि उसने बाँह पकड़कर खींच लिया।

'खबरदार! बाहर निकली तो हमेशा के लिए बाहर!'

'ठीक है, हमेशा के लिए जा रही हूँ।' उसका गला रुँध गया था।

खींचकर बाँहों में जकड़ लिया था उसने। चूम-चूमकर उसे बेहाल कर दिया, न जाने कहाँ से इतना प्यार का सागर उमड़ आया उसके व्यवहार में?

'माफ कर देना मालती, मैंने मजाक किया था। मैं देख रहा था कि तुम कितना सह सकती हो। तुम तो मेरा उजड़ा घर बसाने आई हो, कभी मुझसे दूर मत जाना, वरना मैं तो बिना मारे मर जाऊँगा।' वह जार-जार रोने लगा था।

'मुझे माफ कर दो, वरना अपनी जान दे दूँगा।' वह इधर-उधर कुछ खोज रहा था, जिससे अपना जीवन खत्म कर सके।

'यह रहा बिजली का बटन! इसे उखाड़कर तार छू लेता हूँ।' वह बोर्ड की ओर बढ़ा।

'नहीं-नहीं ऐसा मत कीजिए! मैं भला आपसे नाराज होकर कहाँ जाऊँगी? अब तो जीवन-मरण आपके ही साथ है।' उसने बलपूर्वक उसे अपनी तरफ खींचा। वह चीखती रही, सारे फोड़े फूट गए, देह जैसे कोल्हू में पेरी गई हो, अंग-अंग टूट रहा था उसका। अंतर्मन में घृणा का सैलाब उमड़ रहा था।

सुबह उस दिन वह बड़ा प्रसन्न था। सबसे हँस-हँसकर बातें कर रहा था।

वह दर्द और जलन की मारी कमरे में ही लेटी थी। किसे बताए? चेहरा किसी को दिखाने लायक नहीं बचा। चाल में लँगड़ाहट, चेहरे पर मुर्दनी, वह सुबह जल्दी उठ नहीं पाई, सास ने बुरा सा मुँह बनाए सारा काम निबटाया। वह उसे एक प्याला चाय दे गया था।

'आराम करो। अम्माँ सब सँभाल लेगी!' कहता हुआ ड्यूटी पर चला गया था।

हर रात उसके लिए कालरात्रि थी, सिर पर सिंदूर जलता रहता था आग की तरह।

'मेरी तकदीर ही फूटी है, पहली ने इतने कलंक लगाए, लोगों ने जलाकर मार डालने तक का आरोप लगाया। दस साल के बाद उसे न जाने क्या सूझी, जो एक बच्चा छोड़कर जल मरी, दूसरी लाए तो यह अपने आपको न जाने क्या समझती है? औरत जात का धरम क्या होता है किसी ने बताया नहीं इसे, ऐसा लगता है। अरे! मुँह अँधेरे उठो, घर-बाहर साफ-सुथरा करो, सबका भोजन बनाओ, समय बचे तो कुछ सिलाई-बुनाई करो।' महीना भर सहने के बाद सास ने एक दिन सुना ही दिया था।

'माँ, मैं करना चाहती हूँ, परंतु कर नहीं पाती, जरा देखो! ये दाग किसके हैं? गोल-गोल जले हुए, कुछ ठीक होते हैं तो कुछ नए बन जाते हैं। ये पूरे शरीर पर हैं, इनके दर्द से मैं बेहाल रहती हूँ।' नजरें झुकाए-झुकाए उसने आँचल हटाकर सीने की गोलाइयों पर पड़े घाव दिखा दिए।

'हाय राम! यह किसके दाग हैं? लगता है कोई चर्म रोग है, परंतु ऐसे दाग तो बड़ी के शरीर पर भी दिखते थे!' उसकी आँखें कुछ सोचनेवाले अंदाज में सिकुड़ गईं।

'यह सिगरेट से जलने के घावों से बने दाग हैं।' उसके स्वर से पीड़ा की गागर छलक रही थी।

'कैसे जल जाती हो तुम लोग? रुको! आज रोहन से कहती हूँ कि कमरे में सिगरेट न पिया करे!' उसने सबकुछ समझकर भी अनजान बनते हुए कहा था।

उस रात उसने जरा सा संकेत भर किया था, 'मुझे घर के काम में माँ की मदद करनी चाहिए। ऐसे अच्छा नहीं लगता।'

'माँ ने कुछ कहा, कुछ कह रही थी क्या?' उसकी त्योरियाँ चढ़ गईं।

'कह रही थीं तो क्या गलत कर रहीं थीं? शादी एक ही काम का नाम नहीं, मुझे भी थोड़ी राहत चाहिए। आप आज बाहर सो जाइए!' उसके स्वर में निवेदन था।

वह इस प्रकार उछलकर बाहर निकला, जैसे बिच्छू ने डंक मार दिया हो।

'मेरा जरा सा सुख तुझसे देखा नहीं जाता? तू तो साँपिन से भी ज्यादा जहरीली है! कितने दिन उसे आए हुए, जो उसने तेरा पानी पिंडा नहीं किया? बक-बककर तेरा मुँह खुल गया है। इसी मुँह के कारण बड़ी जल मरी। अब फिर वही शुरू कर रही है?' वह बिफरे साँड़ की तरह आँगन में फेरा दे रहा था।

वह संकोच से मरी जा रही थी, 'क्या सोचेगी सास? आते ही चुगली करके माँ-बेटे को लड़वाने लगी!'

'मैंने ऐसा क्या कह दिया, जो इतना बिगड़ रहा है? मुझसे पूरा काम हो नहीं पाता, इसलिए थोड़ा मदद करने को कहा है।' सास की आवाज एकदम धीमी थी। अपराध-बोध से दबी-दबी सी।

ससुर की बोलती बंद, जाकर दरवाजे के बाहर बैठ जाते हैं। 'तूने जनमाया तू ही भोग अब।'

वह निकलकर माता चौरावाले पेड़ के नीचे जाकर अँधेरे में छिप गई थी। इसके बाद तो उसने रोज उसे गाली-मार खाते देखा। एक दिन उसने ऐसा धकेला कि जाकर नहानी के पत्थर से टकराई। सिर फूट गया। बाप बीच में आया तो वह भी धक्का खाकर गिरा। रोहन उससे लिपट गया था, उसे भी चोट लगी थी।

उससे रहा न गया, उसने उसकी मरहम-पट्टी करके खून बहने से रोका। दूसरे दिन ननद आकर उन्हें अपने घर ले गई।

अब तो रोहन की पाँचों उँगलियाँ घी में, मारे तो सहो, जलाए तो जलो, जब जो कहे पकाकर दो, अब तो मालती के लिए 'मरे बिहान' हो गया। बहुत रोई-गाई तब कहीं एक दिन के लिए मायके ले गया तो पूरे समय साथ-साथ लगा रहा, न माँ-बाप को कुछ पूछने का अवसर मिला, न उसे कुछ बताने का।

'चलो सास-ससुर का टंटा भी छूट गया। अपने आप घर छोड़कर चले गए। बड़ी की जमी-जमाई गृहस्थी, उसके सारे गहने सबकुछ तो अपनी मालती को अनायास ही मिल गया, बहुत है भगवान् का दिया, परंतु इसके शरीर पर ये गोल-गोल दाग कैसे पड़ गए? वह इतनी भकुआई हुई क्यों है?' उनके मन में कुछ प्रश्न थे, जिनका उत्तर देनेवाला कोई नहीं था।

□

ड्यूटी के दौरान शराब पीकर हुल्लड़ करने के कारण उसे सस्पेंड कर दिया गया था। अब तो बस हाजिरी देकर आओ और घर-बाहर बखेड़ा करो!

'मेरे दिन चढ़े हैं जी, अब जरा सँभल जाएँ।' उसने उस रात पहली बार हुलसकर उससे कुछ कहा था।

'दिन चढ़कर क्या होगा? हाँ ऽ···ऽ···ऽ···ऽ···? एक है, उसे ही सँभालते नहीं बनता, कभी उसे गोद में लेकर प्यार किया? बिचारा टूअर टापर जैसे घूम रहा है!'

'अरे! यह कौन बोल रहा है? क्या यह भी अपने बच्चे के बारे में सोचता है?' उसे जोरदार झटका लगा था।

'अभी तो आप से ही फुरसत नहीं है, क्या करूँ, क्या न करूँ।' उसके मुँह से निकला ही था कि उसने खींचकर थप्पड़ जड़ दिया उसके गाल पर। वह दर्द से बिलबिला उठी थी। उसके दुबारा उठे हाथ को उसने कसकर पकड़ लिया था।'

'हाथ पकड़ती है हरहट!' और इसके साथ ही कसकर लात पड़ी कोख पर, जहाँ कोई बसेरा करने लगा था। वह दूर जाकर गिरी थी।

'अरे कोई बचाओ! यह शैतान मुझे मार डालेगा।' वह बेतहाशा चिल्लाने लगी थी। उसकी आवाज सुनकर कोई आता, इसके पहले ही उसने उसके मुँह पर हाथ रखकर उसे बंद कर दिया।

'अरे यह क्या करती है? आपस की बात है, थानेवाले आ गए तो मुझे अंदर कर देंगे, फिर क्या खाएगी? क्वार्टर से निकाल देंगे, कहाँ रहेगी? बेवकूफ!' वह उसकी बाँहों में कसमसाई। पूरी रात वह उसे भाँति-भाँति से मनाता रहा।

सवेरे वह संतुष्ट था और वह बार-बार बाथरूम जाकर कपड़े बदल रही थी। उसकी कमर और पेड़ू में दर्द उठ रहा था। थोड़ी-थोड़ी देर में मरणांतक पीड़ा की लहर उसके उदर में दौड़ रही थी। वह स्वयं उसके लिए एक कप चाय बनाकर ले आया।

'मुझे अस्पताल ले चलिए। मेरी तबीयत बहुत खराब है।' वह कराह रही थी।

'मैं ठीक कर दूँ?' उसकी आँखों में खेल रही शरारत का आशय समझकर वह काँप उठी।

'रहने दो, ठीक हो जाऊँगी!'

'कुछ रुपए हों तो दे दो!' वह नरमी से बोला।

'सारे तो ले गए, अब कहाँ बचे!'

'क्या मैं ही खा गया? जो कुछ करता हूँ तुम्हारे लिए ही तो! क्या सारा सुख मुझे ही मिलता है? तुम्हें कुछ नहीं मिलता मुझसे?' वह सुबह-सुबह फिर लड़ने पर आमादा था।

'वेतन आधा मिलता है तो खर्चे भी कम करो न···ऽ···ऽ···!'

'अरे! अब तू मुझे सिखाएगी? चल, यह टॉप्स दे दे, गिरवी रखूँगा, वेतन मिलने पर छुड़ा लेंगे!' वह उसका सिर अपने आगे करके टॉप्स उतारने लगा।

'एक बात बोलूँ?' उसने स्वयं को संयत रखकर पूछा।

'हाँ बोल!'

'शराब खरीदकर पीने से बहुत महँगी मिलती है। आप सामान ला दीजिए, मैं बना दिया करूँगी। घर की बनी में नशा भी ज्यादा रहेगा और चौथाई दाम लगेगा।' सारा दुःख भूलकर उसने यह सुझाव दिया।

'तुम्हें बनाना आता है?' उसने आश्चर्य से उसे देखा।

'हाँ! हमारे गाँव में तो सभी अपने-अपने पीने के लिए बना लेते

हैं। महुए के फूल सीजन में ही इकट्ठा करके रख दिए जाते हैं। लकड़ी फाटे की कमी नहीं, बस थोड़ी सी मेहनत लगती है।'

'बाप रे! यह तो छुपी रुस्तम निकली।' उसने मन-ही-मन कहा।

'तुम्हें पता नहीं शायद, बिना लाइसेंस के शराब बनाना कानूनन जुर्म है।' वह बेहद गंभीर था।

'मैं यह सब नहीं जानती। जब खरीदकर पीना मना नहीं है तो बनाना क्यों मना है? जैसे अपने लिए खाना बनाते हैं, वैसे ही शराब बना सकते हैं।'

'बेवकूफी भरी बातें मत किया कर! यदि सभी अपने लिए बनाने लगें तो सरकार को टैक्स कहाँ से मिलेगा? हम पुलिसवाले हैं। ऐसे लोगों को पकड़कर सजा दिलवाना हमारी ड्यूटी है और फिर यह पुलिस क्वार्टर है। बात फैलते देर नहीं लगती। दुबारा ऐसी बात मत करना। अच्छा! मैं आता हूँ, तुम कुछ बना लो खाने के लिए।' वह कपड़े पहनकर बाहर निकल गया, जाते-जाते बाहर से दरवाजा बंद करता गया।

'तो क्या सरकार को पैसा देकर आदमी जहर भी पी सकता है···ऽ···ऽ···?' वह जोर से चिल्ला पड़ी। उसके कंठ से रुदन के स्वर फूट पड़े, 'हाय राम! कहाँ फँसा दिया? यहाँ तो अड़ोसी-पड़ोसी बोलते भी नहीं, हमारे गाँव में एक आवाज पर सारा गाँव उमड़ पड़ता है।' वह इतने जोर-जोर से इसलिए बोल रही थी कि दीवार के उस पार से पड़ोसन को सुनाई पड़ जाए।

थोड़ी देर बाद बाहर से साँकल खोली गई, एक अधेड़ औरत ने घर में प्रवेश किया। उसने हठात् मालती को अँकवार में भर लिया।

'मैं तेरी सारी तकलीफें जानती हूँ मेरी बच्ची, परंतु रोहन की दुष्टता के कारण चुप रहती हूँ, यह ले मोबाइल, तुरंत फोन लगाकर अपने पापा को बुला और निकल जा यहाँ से! तू क्या जानेगी कि बड़ी ने दस साल कैसे बरदाश्त किया, अंत में उसे अग्नि-स्नान करना ही पड़ा। स्त्री को पीड़ा देकर ही रोहन को संतुष्टि मिलती है। लगता है, पी-पीकर इसका दिमाग फिर गया है।'

उसने जल्दी से मोबाइल ऑन करके अपने पापा से बात की। माँ की बीमारी के बहाने विदा कराने की बात समझाकर उन्हें तुरंत बुलाया।

पड़ोसन जैसे आँधी की तरह आई थी, वैसे ही तूफान की तरह चली गई। रोहन दर्जन भर अंडे और शराब की बोतल लेकर जल्दी ही वापस आ गया।

'अब तो मेरे नाटक करने की बारी है मिस्टर रोहन! मुझे पता नहीं था आपके बारे में, इसलिए इतना सह लिया।' मालती ने सारे दर्द पर विजय पाकर उसके लिए अंडा-करी, आलू की भुजिया और भात बनाया। गरम-गरम दो पराँठे भी सेंक दिए।

वह अपनी पसंद का खाना देखकर प्रसन्न था।

'मैंने ठीक नहीं कहा जी? रही बात लोगों की तो उन्हें पता नहीं चलेगा। यह मेरा दावा है या फिर मायके जाने दिया करो हफ्ते में एक बार, वहाँ से आठ-दस बोतलें ले आया करूँगी, आपको किसी चीज की कमी नहीं होगी।' वह उससे घुल-मिलकर बातें कर रही थी।

'अस्पताल चलोगी क्या?' वह जरा द्रवित हुआ।

'रहने दीजिए! वैसे ही आपके पास पैसे नहीं हैं, अच्छा लगे तो दो दिन के लिए मुझे सैदा भेज दीजिए!'

'मैं कैसे रहूँगा तुम्हारे बिना?' वह मुँह का कौर चबाते हुए बोला।

'आप भी छुट्टी लेकर आ जाना, फिर दोनों वापस आ जाएँगे।' उसने पटाक्षेप किया।

दूसरे दिन ससुर को आया देख वह हड़बड़ा गया। उसे दाल में कुछ काला प्रतीत हुआ 'वह कल से ही जाने की रट लगाए हुए है और आज यह आ गया बिना किसी सूचना के!'

'कैसे आना हुआ पापाजी का?' उसने मालती से पूछा था।

'माँ की तबीयत खराब है, उन्होंने मुझे बुलाया है, प्लीज न मत करिएगा। पता नहीं कैसी हालत है उनकी।' वह रोहन के आगे गिड़गिड़ा रही थी।

पापा को उसने पहले ही समझा दिया था, फोन की चर्चा न करने के लिए। वह टालमटोल करता रहा, किंतु उसे रोक न सका।

'आपको मेरी कसम है, जल्दी-से-जल्दी आ जाना मेरे घर! मैं आपका इंतजार करूँगी।' मालती ने विधिवत् विदाई ली।

□

'ऐसी क्या बात हो गई बेटी! हम लोग एकदम से हड़बड़ा गए थे। कहीं इस प्रकार फोन किया जाता है?' माँ ने स्नेह भरी झिड़की दी। उत्तर में उसने ब्लाउज उतारकर माँ के हाथ में दे दिया। सीना, कमर, पीठ, पेट सब जगह ढेरों चवन्नी के बराबर जले के घाव, ढेरों दाग, साया उतारकर जाँघों के घाव दिखाए, पेट की चोट से उसका गर्भस्राव हो गया था। रक्तस्राव अब भी जारी था। माँ उसे हृदय से लगाए देर तक रोती रही। पापा ने अस्पताल ले जाकर इलाज करवाया। चार माह में उसका वजन दस किलो कम हो गया था। चेहरा श्रीहीन, गाल पिचके और सामने के दाँत बड़े दिखने लगे थे, वह तो माँ से भी बड़ी नजर आ रही थी।

'कुछ खातिरदारी करनी चाहिए पतिदेव की! आना तो पक्का है।' क्योंकि उसे पूरा विश्वास था कि वह उसके मनोभावों से अपरिचित था।

उसके सारे गोल धब्बे एक साथ जल उठे, वह ऐसे छटपटाई जैसे ताजे फोड़े रगड़ खाकर अभी फूट रहे हों।

वादे के अनुसार घर के पिछवाड़े मटकी चढ़ाकर एक नंबर की दारू उतरवाई। इसके तेज को सहना सबके बस की बात नहीं।

तीसरे दिन एक जिम्मेदार पति की तरह वह आ पहुँचा। सास का हाल-चाल पूछा, सबने पहले जैसे ही मान-सम्मान किया, वह पूरी तरह आश्वस्त था। तालाब से मारकर लाई गई रोहू मछली और हाथ की उतारी शराब! 'मजा आ गया भई ससुराल का।' उसके लिए अलग कमरे की व्यवस्था थी।

'बड़े गुरु हैं। जानते हैं बेटी-दामाद मिलना-जुलना चाहेंगे या हो सकता है मालती ने ही होशियारी से यह व्यवस्था करवाई हो।' नशा गहराता जा रहा था। वह मालती के दबे पाँव आकर बगल में सो जाने का इंतजार कर रहा था। नंबर एक अपना असर दिखा रही थी, आँखें मुँदी जा रही थीं।

नींद और नशे के प्रभाव से वह बेसुध हुआ जा रहा था कि कमरे में कुछ हलचल हुई, कुछ परछाइयाँ झिलमिलाईं। हाथ-पैरों में कुछ तनाव का अनुभव हुआ। लगा जैसे उसे कसकर बाँधा जा रहा है। चढ़ने से पहले ही उसका सारा नशा हिरन हो गया। हाथ में डंडे लिये चार युवक और चप्पल लिए चार युवतियाँ धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ रही थीं। आसन्न संकट देख उसकी सारी हेकड़ी निकल गई। वह घिघियाने लगा।

पहला डंडा पड़ने से पहले ही वह चीखने लगा।

'अरे! मुझे क्यों मारते हो? दामाद की ऐसी खातिर की जाती है तुम्हारे गाँव में···ऽ···ऽ?'

तड़ातड़!···तड़ातड़! चारों ओर से डंडे बरसने लगे। उसकी चीख कमरे में गूँजती रही। लड़कियाँ उसके सिर पर चप्पल बरसा रही थीं।

'जिसने तेरे साथ जीने-मरने की कसमें खाईं, उसे अकेली पाकर मारता है? ये ऽ···ऽ ले ऽ···ऽ जरा ढंग से दो तो दो-चार हाथ!' यह पड़ोस में रहनेवाली लड़की थी, शादी में बहुत लाड़ लड़ा रही थी। उसकी कीलदार चप्पल उसके चेहरे पर पड़ी थी।

'इसके कपड़े फाड़ दो!' एक महिला ने आदेश दिया। किसी ने इधर से खींचा, किसी ने उधर से, कपड़े फट गए, वह नंग-धड़ंग पड़ा था इतने लोगों के बीच।

'इसे जले का दर्द बहुत आनंद देता है, बेचारा दामाद है, खातिर करो इसकी!' वही औरत फिर बोली। चारों युवकों के हाथों में सिगरेटें नाच उठीं।

'अरे! अरे ऽ···ऽ···ऽ···ऽ रे! मुझे मत जलाओ मेरे बाप! छोड़ दो तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ ऊ···ऊ···अरे बाप रे, जला डाला हैवानों ने।' वह चिल्ला-चिल्लाकर रो रहा था।

'पेट, पीठ, बाँहें, चेहरा सब हो गया?'

'अभी जाँघों के बीच बाकी है।' एक ने निर्लिप्त भाव से कहा। 'नहीं बाप! मुझे छोड़ दो। मालती! ओ मालती! कहाँ हो तुम? बचाओ मुझे इनसे!'

'मैं पुलिस का जवान हूँ, बाद की भी सोचो जरा! दूर हटो मुझसे!' वह पलंग पर बँधे-बँधे कसमसा रहा था।

'हाँ ऽ···ऽ!' उसने नि:श्वास छोड़ी

'अच्छा लगा न ऽ···ऽ जीजाजी?' उसने जैसे उसकी बात सुनी ही न हो।

'अब थोड़ा रगड़कर नमक-मिर्च डाल देते हैं, पूरा आनंद ले लीजिए।' वह युवक पूरी तरह संजीदगी से बोल रहा था।

'भगवान् के लिए मुझे माफ कर दो! मैं कान पकड़ता हूँ, किसी को नहीं जलाऊँगा।' वह पूरी ताकत से छटपटाया।

'भैया! बहुत हुआ, अब इसे छोड़ दो! अपनी करनी का फल भोगे जाकर!' मालती दरवाजे पर हाथ जोड़े खड़ी थी।

बी/२८ हरसिंगार, राजकिशोर नगर
बिलासपुर (म.प्र.)
दूरभाष : ९९०७१७६३६१

सुधी पाठकों, लेखकों एवं विज्ञापनदाताओं को
साहित्य अमृत परिवार की ओर से
दशहरा तथा दीपावली
की हार्दिक शुभकामनाएँ

श्रीलाल शुक्ल : पत्रों के आईने में

● रमेश चंद्र शाह

श्रीलाल शुक्ल में लेखकीय प्रतिभा के साथ-साथ एक और प्रतिभा भी थी—संवाद-संलाप की प्रतिभा—जो बहुत कम लेखकों में पाई जाती है। यह प्रतिभा मैंने या तो बालकृष्ण राव में पाई या फिर श्रीलाल शुक्ल में। अकसर मुझे लगता था कि मानो राव साहब के तिरोभाव से उत्पन्न शून्य को भरने में समर्थ लेखक होने के कारण ही उनके प्रति मेरा झुकाव-लगाव पनपा और विकसित हुआ। एक सचमुच के 'कन्वर्सेशनिस्ट' व्यक्तित्व का संसर्ग कितना प्रीतिकर होता है, इसे जाननेवाले ही जान सकते हैं; जिनमें स्वयं भी सुरुचिपूर्ण वार्त्तालाप के प्रति स्वाभाविक रुझान हो।

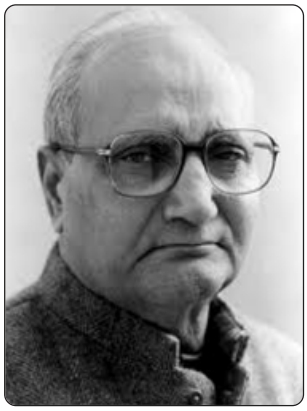

स्व. श्री श्रीलाल शुक्ल

मुझे अच्छी तरह स्मरण है—उनकी जिस पहली-पहली रचना को पढ़कर मेरे मन में उनके प्रति आकर्षण उत्पन्न हुआ था, उसका शीर्षक था—'स्वर्णग्राम में वर्षा'। ठीक-ठीक याद नहीं, वह मैंने कहाँ पढ़ी थी। शायद 'संकेत' में, जो इलाहाबाद से निकला था या फिर 'निकष' में ।'निकष' ही होगा। वह मुझे उत्कृष्ट निबंध-रचना लगी थी। एक नई प्रतिभा के प्राकट्य की पूर्वसूचना। उनका व्यंग्य भी मुझे लेखकों के व्यंग्य से भिन्न और विलक्षण लगा था। इसलिए कि वह उनके नैबंधिक या कथात्मक गद्य के समग्र रचाव का अंग था, न कि अलग से व्यंग्य को एक स्वतंत्र-स्वायत्त विधा की तरह मानने-मनवाने के आग्रह का फल। व्यंग्य अपने आप में कोई विधा नहीं, वह निबंध या कहानी या उपन्यास की समूची रचना में व्याप्त एक गुण की हैसियत से ही अपनी सार्थकता पाता है। न कि लोकप्रियता के अधूरे, संदिग्ध और सच्ची सृजनात्मकता से निरपेक्ष एक स्वयंपर्याप्त और स्वतंत्र वस्तु की तरह प्रचारित होकर। स्वतंत्र और निरपेक्ष विधा आप उसे मानकर बरतें तो फिर इस सच्चाई को स्वीकार करके ही चलना होगा कि वह रचनात्मक साहित्य के सबसे निचले पायदान पर अवस्थित है और व्यंग्यकार कहलाना, व्यंग्यकार की हैसियत से चर्चित-प्रतिष्ठित हो जाना उच्चकोटि की सृजन-ऊर्जा या सृजन-सामर्थ्य का प्रमाण नहीं हो सकता। वैसा मानकर चलना आत्म-प्रवंचना या दुराग्रह ही है। श्रीलाल शुक्ल का गद्य मुझे शुरू से ही ऐसी पहचान या मान्यता का मोहताज कभी नहीं लगा।

श्रीलालजी सहृदय पाठक ही नहीं, किसी रचना की रचनात्मक गुणवत्ता को लेकर कायदे की सटीक और मूल्यांकनकारी टिप्पणी भी बड़े सहज भाव से कर सकनेवाले लेखक थे। जैसे कि स्वयं लेखक-बिरादरी में भी बहुत कम देखने में आते हैं। यह क्षमता उनकी सामान्य वार्त्तालाप के माध्यम से भी प्रगट होती थी और पत्रों में भी। मैंने कहा कि वे उन विरल लेखकों में थे, जो प्रभावशाली संवादी यानी 'कन्वर्सेशनिस्ट' भी होते हैं। पर उनकी इस खूबी को 'संस्मरण' के माध्यम से संप्रेषित नहीं किया जा सकता। उसके लिए तो साक्षात् संभाषण के सिवा और कोई विकल्प नहीं। हाँ, इतना जरूर है कि ऐसे 'कन्वर्सेशनिस्ट' लेखक की चिट्ठी-पत्री में भी वह वृत्ति या विशेषता झलकेगी ही। इस दृष्टि से मुझे लगता है, श्रीलालजी के पत्रों से कुछ उद्धरणों का समावेश इस संस्मरण में करना उचित और सार्थक होगा। हमारे बीच संवाद का एक अनिवार्य सेतु यह चिट्ठी-पत्री भी थी, आखिर हम दूर-दराज के अलग-अलग नगरों के वासी थे—साक्षात् भेंटवार्त्ता के मौके तो विरल ही होते थे। वे भोपाल आएँ किसी गोष्ठी के प्रसंग से या मैं लखनऊ जाऊँ किसी काम से, तभी साक्षात् संवाद की गुंजाइश निकल सकती थी। एकाध ऐसे मौके भी आए, जब गरमियों की छुट्टी में वे भी मेरी तरह पहाड़ की सैर पर निकले और नैनीताल या अल्मोड़ा में उनसे मुलाकात हो गई। कुछ नहीं तो बीसेक पत्र उनके हाथ के लिखे मेरे पास होंगे। यहाँ तीन-चार पत्र ही पूर्णत: या अंशत: उद्धृत करना काफी होगा। तो यह लीजिए, पहला नमूना श्रीलालजी की बतकहिया शैली और सहृदय गुणग्राहिता का—

बी-२२५१, इंदिरानगर, लखनऊ

८.७.९६

प्रिय बंधु,

१ जुलाई का पत्र मिला। सबसे ज्यादा संतोष की बात यह कि रीझकर हो या खीझकर, 'गोबरगणेश' का अंग्रेजी अनुवाद आपने पूरा कर लिया। अब उसके प्रकाशक मिल ही जाएँगे।

'शैतान के बहाने' दिल्ली से लौटने के बाद पढ़ लिया था और उसी के साथ 'आड़ू का पेड़' भी—जो पहले पलटा भर था।

अब मेरा इकबालिया जुर्म सुनें। आपके निबंधों को मैंने न पढ़ने या अनवधान भाव से पढ़ने की मूढ़ता करके आपके साथ जो ज्यादती

की, उससे कहीं बड़ी ज्यादती खुद अपने साथ की। इन निबंधों की कोटि ही अनूठी है। हिंदी में इनकी शैली बिल्कुल अलग है। बख्शीजी के प्रति आपके अत्यंत युक्तिसंगत अनुराग के बावजूद इनकी कोटि उनके लेखन से बहुत भिन्न है और पं. विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, कृष्णबिहारी मिश्र प्रभृति लेखकों की निबंधावली को अपने स्वभाव-वैपरीत्य की छटा द्वारा 'सांस्कृतिक हाय-हाय-वाद' मात्र बनाकर एक किनारे छोड़ देती है। वास्तव में आपका 'निबंध की तलाश में' व्यक्तिगत 'मैनिफेस्टो' होते हुए भी स्वयं उत्तम निबंध का, साहित्यालोचन की लीक से बड़ी होशियारी से कतराकर निकलते हुए, लाजवाब नमूना है। मुझे पता नहीं कि इस निबंध पर कोई साहित्यिक बहसें हुईं या नहीं, पर शायद नहीं हुईं और अगर हमारी साहित्यिक म्रियमाणता का कोई और सुबूत जरूरी हो तो यह बहस-विहीनता अपने आप में उस म्रियप्राणता का सुबूत है।

प्रसंगत: आपने निबंधों में जहाँ-कहीं और कई जगह गीता का संदर्भ दिया है, वहाँ मेरे लिए दिलचस्पी की बात यह रही कि कई अर्थों में वहाँ आपने गीता की भावभूमि की निजी व्याख्या की है, उसकी ताजगी इन निबंधों के पाठ का एक आनुषंगिक लाभ है ।

अब यह कहना कि 'बहुत खूब, लिखते रहिए' तो गुरूकंटालों को ही शोभा देगा, पर इतना जरूर है कि जो एक बार आपके निबंध-रस का आस्वाद ले चुका है, वह (अर्थात् मैं) निश्चय ही 'कुछ और कुछ और' की पुकार लगाएगा।

बच्चे यहाँ आए और हम उनसे मिल नहीं सके, इसकी खिन्नता है। दैवी कृपा से यहाँ अब पारिवारिक वातावरण सहज है और वे यहाँ रुकते तो हमारे लिए आनंद का विषय होता। बहरहाल···

विदेश-यात्रा पर हम दोनों साथ हों तो क्या कहने! जिस जोश में हम दोनों एक जाड़े की रात किसी वीरान प्लेटफॉर्म को देवरिया समझकर उतरे-चढ़े थे, उसे याद करके कोई शक नहीं रह जाता कि हमीं को नहीं, हमारे साथ-साथ वहाँ पहुँचने पर संबंधित देश को भी एक ऐतिहासिक क्षण का अनुभव प्राप्त हो जाएगा।

आशा है, हिमालय से मध्य प्रदेश में आकर आप अब तक अपने ढर्रे में व्यवस्थित हो चुके होंगे। जहाँ तक मेरी बात है, मैं घर की देहरी से इतना बँध चुका हूँ कि तेली के बैल की गति भी प्राप्त हो जाए तो उसे ही चरम प्रगति मान बैठूँगा।

ज्योत्स्नाजी को नमस्कार! पत्रोत्तर अवश्य दें, इसी सबसे अपने बारे में आश्वस्ति-बोध कुछ और मजबूत होता है।

सप्रेम

श्रीलाल शुक्ल।

अब दूसरा पत्र

लखनऊ, दिनांक २३.२.९६

प्रिय भाई,

आपका १६/२ का पत्र मिला। शरद जोशी सम्मान की शायद

हिंदी के सुविख्यात कवि-कथाकार तथा चिंतक। 'जंगल में आग', 'मुहल्ले का रावण' *(कहानी-संग्रह)*; 'शैतान के बहाने', 'आड़ू का पेड़', 'पढ़ते-पढ़ते' *(निबंध-संग्रह)*; 'छायावाद की प्रासंगिकता', 'आलोचना का पक्ष' तथा 'भूलने का विरुद' *(आलोचना)*। भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री'। प्रतिष्ठित 'व्यास सम्मान', 'शिखर सम्मान' समेत कई विशिष्ट पुरस्कारों से सम्मानित।

अभी औपचारिक घोषणा नहीं हुई है।···आपको असुविधा न हो तो मैं वहीं रुकना भी चाहूँगा। इस हालत में मेरा प्रवास एक दिन-रात से ज्यादा न हो पाएगा। आपके बधाई-संदेश के लिए कृतज्ञ हूँ।

वैसे पिछले महीनों में भोपाल से मुझे कई निमंत्रण मिले। पर लखनऊ से बाहर निकलना अब मेरे लिए दुर्लभ जैसा हो रहा है। कारण वही—गिरिजा का गिरता हुआ स्वास्थ्य, जो अब चौबीसों घंटे उनकी देख-रेख की माँग करता है।

एन.बी.टी. आपके उपन्यास 'किस्सा गुलाम' को संभवत: 'आदान-प्रदान' कार्यक्रम में ला रही है। ऐसा हो तो बहुत ही उत्तम है। आजकल वे उम्दा ढंग से छापते हैं और ५० प्रतिशत रॉयल्टी का एडवांस पुस्तक छपते ही दे देते हैं।

'उन्मीलन' का अंक मिला। आपकी गोविंदचंद्र पांडे की पुस्तक पर समीक्षा अभी पढ़ी नहीं, पर बड़ी खुशी हुई और होती रही है आपके सर्जनात्मक व्यक्तित्व के साथ, इस विचारात्मक पक्ष का भी प्रतिफलन देखकर। ऐसे 'संपूर्ण साहित्यकार' किसी भी साहित्य में दुर्लभ होते हैं।

आशा है, आप सानंद हैं। ज्योत्स्नाजी को हमारा नमस्कार कहें और भले ही मुझसे पत्राचार में प्रमाद होता रहे, इस पत्र का उत्तर यह सोचकर न टालें कि मार्च-अप्रैल में तो हमें मिलना ही है।

सप्रेम आपका

श्रीलाल शुक्ल।

श्रीलालजी स्वयं अत्यंत विषम परिस्थिति से जूझ रहे होने के बावजूद अपने मित्रों के सुख-दु:ख में मनसा पूरी तरह शरीक होते थे। उन्हें व्यावहारिक सलाह भी देते थे। एक लेखक के लिए परिस्थितिवश अरसे तक न लिख पाने की वेदना दुस्सह होती है। ऐसे कठिन दौरों से गुजरते हुए श्रीलालजी का धैर्य और स्वयं के प्रति साक्षी-भाव अपनाना मुझे बहुत स्पृहणीय लगता था। यही उन्हें कैसे भी दुर्निवार्य आत्मावसाद की स्थितियों से उबरने की शक्ति देता रहा होगा—यही अपने ही कष्ट-भोग को साक्षी-भाव से देख सकने का सामर्थ्य। उदाहरण के लिए, देखिए, उनका यह पत्र २२.२.२००१ का लिखा हुआ—

लखनऊ, दिनांक २२.२.२००१

प्रिय भाई,

आपके दो पत्र निरंतर मेरी मेज पर मेरे सामने रहे हैं, एक १४/११ का, दूसरा ७/१ का। और मेरा हाल देखिए कि 'हरपीर' मुक्त, पूर्णत: स्वस्थ होते हुए भी लगभग चार महीने मैंने 'मसि-कागद छूयो नहीं' वाली स्थिति में गुजार दिए। एक अजीब सी मानसिक व्याधि, जिसे न अवसाद कह सकते हैं, न पूर्ण उदासीनता ही, पर चरम निष्क्रियता और उससे उपजा अपराध-बोध! मुझे आप पर क्षमाशीलता का पूरा भरोसा है। केवल यही कह सकता हूँ कि यह अर्ध-आत्मघाती दौर अब समाप्तप्राय है और यही आशा कर सकता हूँ कि मेरी निष्क्रियता की सजा अपनी ओर से ऐसी ही चुप्पी दिखाकर न देंगे।

सबसे पहले तो अपने मकान में पहुँचने के लिए बधाई···और जिस सड़क पर निवास कर रहे हैं, वह 'भदभदा रोड' समाप्त होना चाहिए। नगर निगम में इतनी संवेदना तो होनी ही चाहिए कि इस भद्दे नाम की जगह कोई वाजिब नाम सोचे।

'एक लंबी छाँह' बहुत पहले नवंबर में ही पढ़ गया था, कइयों को पढ़ाया भी। अंशत: पत्र-पत्रिकाओं में इसे देख चुकने के बाद एक साथ पूरी पुस्तक को पढ़ने का 'इंपैक्ट' बिल्कुल ही दूसरा था। साहित्य को देशगत सीमाबद्धता से बाहर निकालकर विश्व साहित्य की एकाग्र भावना के साथ वेल्श, आयरिश और इंग्लिश लेखकों-कवियों के प्रति ऐसा निजत्व और ऐसे खुलेपन का भाव—जैसा इस कृति में दिखा, अन्यत्र दुर्लभ है। यही नहीं, इस सहज 'नैरेटिव' जैसे दिखनेवाले लेखन के और भी कई अयाम हैं—एक ओर प्रकृति और मानवीय रचना के नए परिवेशों की संवेदनशील पकड़, दूसरी ओर अकादमीय वाद-संवाद में वैचारिक टकराहटें—सचमुच ही यह अपने ढंग की अनूठी कृति है। मेरे एक सुपठित डॉक्टर मित्र—डॉ. पांडे, जो इंग्लैंड में २७-२८ साल रहे हैं, पूरी किताब एक बैठक में पढ़ गए और वेल्स तथा आयरलैंड के विवरणों से विशेष अभिभूत हुए।

'साहित्य अमृत' में आपका साक्षात्कार पढ़ा था और 'जनसत्ता' में आपका पाक्षिक स्तंभ भी देख रहा हूँ। स्तंभ आपके बौद्धिक स्तर के अनुरूप है और एक दैनिक के पाठक की हैसियत से मुझे यही शिकायत हो सकती है। थोड़ा और हल्कापन—पाठक शायद यही चाहेगा।

इसी सप्ताह उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला से अप्रैल में प्रस्तावित 'अज्ञेय' विषयक संगोष्ठी के लिए बुलावा आया है। आप उसकी परामर्श समिति में हैं। शायद यह निमंत्रण इसी का नतीजा है। मैं निश्चय ही जाऊँगा, विशेषत: इस लालच में कि आपके साथ कुछ वक्त बीतेगा।

विलंब के लिए एक बार फिर माफी माँगना चाहता हूँ। ज्योत्स्नाजी को नमस्कार!

सप्रेम

श्रीलाल शुक्ल।

और अंत में श्रीलालजी का यह एक और पत्र, जो उनकी साहित्यिक समझ और आलोचनात्मक दृष्टि का परिचायक भी है।

प्रिय भाई,

'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू' कल पढ़कर आनंदित हुआ। शुरू के कुछ पन्नों में लड़खड़ाहट महसूस हुई पर 'विभूतियोग' तक आते-आते सबकुछ सध गया। अगर मुझसे मौलिक प्रतिक्रिया की उम्मीद की जाए तो वह व्यर्थ होगी, क्योंकि मैं जो इसके विषय में सोचता, वह कुछ दूसरी भाषा में, अत्यंत सुशिक्षित प्रकाशकीय स्तंभ में पहले ही दिया जा चुका है। उसमें कुछ जोड़ना मुश्किल है।

आपके परिचितों और मित्रों को इस आत्मकथा-विमर्श की जटिलताओं से उबरकर झीने जलावरण में आपका ही चेहरा झलकता हुआ नजर आए तो आपको आश्चर्य नहीं होगा। पर एक बात जो मुझे पूरे उपन्यास में सबसे अधिक आकर्षक लगी, वह है क्रमबद्ध कथा या कथा की ही उपाख्याओं में सूत्रबद्ध ढंग से विस्तार का अभाव। केवल क्षणिक दीप्तियों के समुच्चय से विभूतिबाबू उनके पिता या विभूति बाबू हाथ हिलाते हुए शिखर के मोड़ पर अदृश्य होती लड़की···जैसे प्रसंग जिस प्रकार झिलमिलाते हैं, वह आपकी विशिष्ट उपलब्धि है।

'शेखर : एक जीवनी' का उल्लेख आपने किया है। पर उससे सर्वथा भिन्न और जोरदार तंत्र आपने विभूति बाबू के लिए आविष्कृत किया है। पूरी कृति पढ़कर एक साथ उत्तम काव्य, काव्य की व्याख्या, जीवन की एक साथ व्यावहारिक और तत्त्विक दृष्टि···और पहाड़ से मैदान तक प्रवहमान एक ललित, साथ ही विचलन भरी कथा-यात्रा का सम्मिश्रित सान्निध्य मिलता है।

शिकायत जो हो सकती है, उसका जिक्र ही बेकार है, क्योंकि एक जटिल, चिंतनात्मक रचना में जब आप जानबूझकर एक अतीत-वर्तमान के विक्षेपों को आविष्कृत करके और संदर्भों की बहुलता के साथ पाठक की बौद्धिक तैयारी को नजरअंदाज करके पूरे मन से इसे लिखते हैं तो निश्चय ही आप इसके लिए तैयार हैं कि यह कृति हिंदी पट्टी के सामान्य (पता नहीं वे कौन, कहाँ हैं) पाठक के लिए न होकर, एक विशेष प्रबुद्ध पाठक-समुदाय के लिए होगी। पर मैं जानता हूँ कि यह समस्या इस कृति की ही नहीं, उन सभी कृतियों की है, जहाँ लेखक अपने संपूर्ण भाव-बोध और बौद्धिक व्यक्तित्व को अपनी कृति में प्रतिबिंबित करता है। एक आदर्श पाठक की झीनी सी छवि मन में भले रहती हो, पर वह पाठक वर्तमान में नहीं मिलता। निरवधि काल का सहारा ही हमें लिखने को प्रेरित करता है।

हार्दिक बधाई और शुभकामनाएँ!

सप्रेम

श्रीलाल शुक्ल।

साअ

एम-४, निरालानगर

भदभदा रोड, दृष्टांत मार्ग, भोपाल-४६२००३

एक दीपक लड़ रहा है...

● बालकवि बैरागी

दीप का अवदान

जो बाँधते हैं राखियाँ घोर काली रात को,
वे बुलाते हैं, स्वयं ही अलख उल्कापात को।
जब गिरेंगी बिजलियाँ, तो नीड़ उनके ही जलेंगे,
सिर पटककर रोएँगे और फिर आँखें मलेंगे।
परिणाम सारे सामने हैं, कौन समझाए उन्हें,
दीप के बलिदान पथ पर आप ही लाएँ उन्हें।

सूरज जब तक कतरा जाए होकर अंतर्धान,
महातिमिर को मिल जाए जब खुला हुआ मैदान।
तब जो अँधियारे से लड़कर देता अपनी जान,
उस दीपक को बड़े सवेरे कहाँ मिला सम्मान?
जलकर लड़ना, लड़कर मरना, पीना हर अपमान,
बलिदानी की यही नियति है, शायद यही विधान।

एक दीपक लड़ रहा है, अनवरत अँधियार से,
लड़ रहा है कालिमा के क्रूरतम परिवार से।
सूर्य की पहली किरण तक युद्ध यह चलता रहे,
इसलिए अनिवार्य है कि दीप यह जलता रहे।
आपकी आशीष का संबल इसे दे दीजिए,
प्रार्थना शुभकामना इस दीप की ले लीजिए।

रोम-रोम करके हवन देना अमल उजास,
कुछ भी तो रखना नहीं अपना अपने पास।
जलते रहना उम्र भर अपने व्रत के साथ,
सहना अपने शील पर तम का हर उत्पात।
सोचो तो इस बात के होते कितने अर्थ,
बाती का बलिदान यह चला न जाए व्यर्थ।

अंधकार के घर में घुसकर सूर्योदय तक लड़ना,
महातिमिर के सिर पर चढ़कर माँ गायत्री पढ़ना।
तन-मन-धन सब स्वाहा करके दीप्त धर्म पर मरना,
धन्यवाद या यश-अपयश की चिंता कभी न करना।
सिवा दीप के ऐसा जीवन बोलो किसने पाया?
इसलिए तो यह लक्ष्मी का 'पूत-सपूत' कहाया।

सुप्रसिद्ध कवि एवं विचारक। कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण और यात्रा-वृत्तांत समेत साहित्य की अनेक विधाओं में विपुल लेखन। काव्यानुवाद और मालवी गीतों का संग्रह भी प्रकाशित। आकाशवाणी और दूरदर्शन से निरंतर प्रसारण। कई फिल्मों के भी गीत लिखे। लोकसभा तथा राज्यसभा के सदस्य रहे।

□

स्याही का विश्वास

जब तक मेरे हाथों में है नीलकंठनी लेखनी।
दर्द तुम्हारा पीने से इनकार करूँ तो कहना॥

मुझे कलम क्या दी दाता ने आग थमा दी हाथों में,
अपने सपने आप जलाकर बैठा रहूँ अनाथों में।
यों तो मेरे सपने जग में मृत्युंजय कहलाते हैं,
यों तो अंबर के पनिहारे मुझको भी ललचाते हैं।

पर जब तक ये बारूद बिछी है, केश खुले हैं वसुधा के,
अगर कहीं मैं अंबर का सिंगार करूँ तो कहना।
जब तक मेरे हाथों में है··· ···

स्याही की दो बूँद मिली क्या खुद से हुआ पराया हूँ,
अमृत बाँट रहा हूँ घर-घर विषघट घर ले आया हूँ।
ये मेरा उपकार नहीं है तिल भर भी एहसान नहीं,
इसके बिना अधूरा हूँ मैं लगते मुझ में प्राण नहीं।

पर भूले से भी टूट गई यदि ये निर्जल एकादशी,
अगर नहीं मैं जीने का कुविचार करूँ तो कहना।
जब तक मेरे हाथों में है··· ···

ये पगडंडी, ये चौराहे, ये गलियाँ, ये राजमहल,
ये मधुबन, ये झर-झर झरने, ये कजरारे ताजमहल।
कई अज्ञानी उर्वशियों का रोज संदेसा लाते हैं,
या तो गुपचुप कहते हैं या सिरहाने रख जाते हैं।

पर जब तक आँख तुम्हारी है कुछ अकुलाई आँसू भरी
अगर कहीं मैं काजल से अभिसार करूँ तो कहना।
जब तक मेरे हाथों में है··· ···

वे जो दो आँसू दिखते हैं लगते जग से न्यारे हैं,
अजर-अमर हैं अपराजित हैं प्राणों से भी प्यारे हैं।
जैसे बहती वेद ऋचाएँ, ठिठकी गऊएँ श्याम की,
जिनके मुँह पर मुहर लगी है केवल मेरे नाम की।

पर जब तक लछमन रेख बनी है और मिलन मजबूर है,
अगर कहीं मैं प्रियतम की मनुहार करूँ तो कहना।
जब तक मेरे हाथों में है··· ···

लाओ अपना दर्द पिलाओ समझो मेरी प्यास को,
गया हुआ मत कभी समझना स्याही के विश्वास को।
आँसू का अनमोल खजाना दे दो मेरी झोली में,
मस्त रहो अपनी मेहँदी में, पनघट में, रंगोली में।

जब तक दर्द तुम्हारा मेरी नस-नस में मौजूद है,
अगर कहीं मैं गीतों का व्यापार करूँ तो कहना।
जब तक मेरे हाथों में है··· ···

कविनगर, पोस्ट-मनासा,
जिला-नीमच-४५८११० (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५१०६१३६

पछतावा

● एम.डी. मिश्रा आनंद

मासूम बालिका पंखी के गाल पर जोर का तमाचा लगाया, भगवती की पाँचों उँगलियों के सिंदूरी निशान उसके गोरे फूले गाल पर उभर आए थे। इस पर क्रोधित से तिलमिलाती पंखी ने दो बार अपना सिर दीवार पर दे मारा तो उसके माथे की चमड़ी कट गई और खून बहने लगा। यह देख भगवती जोर से चिल्लाई, ''मर जा नासपीटी, जाकर कुएँ में गिर जा, तब भी मैं न रोऊँगी। तेरी आत्मा में कौन सी डायन बैठी है कि तू अपना शरीर काट-पीटकर सबको दु:ख देती रहती है। अरे, मैंने एक-दो थप्पड़ मार दिए तो क्या अपने प्राण दे देगी, सुधरती क्यों नहीं है? दूध देनेवाली वही तो एक अच्छी भैंस है, जिसका पड़ेऊ (बच्चे) बाँधने के लिए तुझे भेजा था, तूने उसे खूँटे से ठीक नहीं बाँधा, उसने पूरा का पूरा दूध गटक लिया। अब बता, ग्राहकों को कहाँ से यह दूध पहुँचाऊँ? और इसी बात पर तूने अपना सिर फोड़ लिया, सारे दिन तूने खाना नहीं खाया, भूखी मरने पर उतारू है।''

मोहन और गोपाल पंखी के बड़े भाई हैं। मोहन पंखी को बहुत चाहता है, बहुत प्यार करता है, अपनी छोटी सी, गोल-मटोल बहन को। वह रोने-चिल्लाने की आवाज सुनकर वहाँ आ गया और बोला, ''माई, पंखी को तू क्यों पीटती रहती है? वह तेरे साथ कितना काम करती है। उसे गुस्सा बहुत आता है, वैसे वह कितनी सीधी है। काम में मेहनत करती है। पढ़ने में भी होशियार है।'' तभी गोपाल ने कहा, ''हाँ, बहुत सीधी है न। जब माई भैंस का दूध दोहती है तो सबसे पहले बड़ा कटोरा हाथ में लेकर खड़ी हो जाती है और ताजा दूध बिना पानी मिलाए पी जाती है, तभी तो इतनी मोटी हो गई और एक दिन इसके टीचर कह रहे थे कि होमवर्क नहीं करने पर किसी ने उसे स्केल से पीट दिया था तो उसने अपने हाथ की चमड़ी एक टूटे ब्लेड से काटकर खून निकाल लिया और पूरी कक्षा में हंगामा कर दिया था।''

तभी पंखी ने रोते हुए कहा, ''तुम लोग भी तो मुझे पीटते हो, मोटू कहते हो। हम लोग छुट्टी के दिन भैंस-गायों को चराने बापू के साथ जाते हैं और सुबह-शाम को घास चरवन सिर लादकर लाते हैं। कहाँ रहते हैं घर पर कि तुमसे झगड़ते रहें।'' पिता दयाराम ने पंखी को गोद में उठा लिया और सबको डाँटकर कहा, ''कोई भी परेशान नहीं करेगा, मेरी लाड़ली बेटी को।''

समय अपनी गति से चलता है। किसी को पता नहीं चलता। दयाराम से एक दिन भगवती ने कहा कि बेटी बड़ी हो गई है और कोई योग्य घर-परिवार देखकर शादी-विवाह की तैयारी करें। तब दयाराम ने कहा, ''अरे, इसका तो मुझे ध्यान नहीं आया था। आज मुझे समझ में आ रहा है कि बच्चे भाई-बहन आपस में लड़ते-झगड़ते, खेलते हुए कब बड़े हो गए। अब देखो भगवती, दोनों लड़के जितना गाँव के स्कूल के साधन थे, सो उतने पढ़-लिख गए हैं। घर का सब काम खेती-बाड़ी, गाय-मवेशी सँभालने लगे हैं। अब रहा पंखी का, सो पढ़ाई में भाइयों से आगे ही रही और आगे पढ़ने की उसकी इच्छा रही है। उसने आठवीं पास बहुत पहले कर ली थी और दूसरे गाँव पढ़ने के लिए भेजा नहीं। सात-आठ वर्ष ऐसे ही बीत गए। अब वह बीस-इक्कीस वर्ष की हो रही है तो शादी के लिए घर-वर देखना है। पता लगाते हैं।''

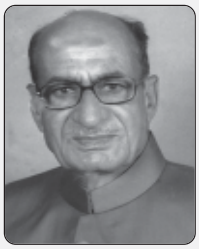

जाने-माने लेखक एवं कवि। प्रमुख कृतियाँ हैं– 'मोक्ष की राह', 'मैं कौन हूँ', 'पंख' (*काव्य-संग्रह*), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (*कहानी-संग्रह*)। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टीवी पर कार्यक्रमों का प्रसारण। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल सहित कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

अब दयाराम ने अपनी रिश्तेदारियों के माध्यम से लड़के की तलाश शुरू कर दी। जान-पहचानवालों से भी खोज-खबर मँगाई, जिस घर-वर का पता चलता, वह कभी पैदल तो कभी साइकिल से भाग-दौड़ करने लगा। इधर मोहन और गोपाल ने खेती-बाड़ी का काम सँभाल लिया। भगवती और पंखी गाय-भैंस की देखभाल करतीं और रसोई बनातीं, गृहस्थी की गाड़ी ठीक से चल रही थी। पास के ग्राम में लड़के का पता चला, दयाराम ने जाकर देखा, जमीन-जायदाद का पता लगाया तो उन्हें ठीक नहीं जँचा, क्योंकि उस परिवार में मात्र दस-बारह बीघा जमीन थी और लड़का चार भाई तीन बहनें थीं। जिसमें दो लड़कों तथा एक लड़की की शादी हो चुकी थी। दयाराम ने आकर घर में सब समाचार बताए तो यह तय हुआ कि खेतीबाड़ी बहुत कम है। दो बीघा लड़कों के हिस्से में नहीं आएँगे। दस बीघा के सात हिस्से होने हैं। मोहन ने कहा, ''पिताजी, अगर जमीन अधिक नहीं है तो दूसरा और कोई काम-धंधा भी तो कर सकते हैं, लड़का मैंने देखा है, वह ठीक है।'' लेकिन सब लोगों की सहमति नहीं बन पाई।

अगले दिन भगवती का छोटा भाई वंशीधर आया और घर-लड़के

का पता बताया। दूसरे दिन ही दयाराम और वंशीधर घर-परिवार व लड़का देखने के लिए पहुँच गए।

गाँव ठीक था, एक मंजिल पक्का मकान बना था, बड़ा आँगन, पीछेवाली अटारी दो मंजिल पक्की, सामने एक पौर, नक्काशी वाला दरवाजा और इसी की बगल में एक बैठक भी थी। पास में ही खेती वाली कुछ जमीन लगी हुई। कुआँ में पर्याप्त मात्रा में पानी उपलब्ध था, इसलिए पानी सिंचाई और पीने के लिए कोई कमी नहीं थी। गृह स्वामी का नाम सेवाराम पटेल और पत्नी रामसखी, उनके एक पुत्र किलकोटी और पुत्री जानकी थी। चालीस बीघा जमीन और घरू ट्रैक्टर, जो पौर की बगल में बाड़े के अंदर ही खड़ा था। मन-ही-मन दयाराम और वंशीधर बहुत ही प्रसन्न हो रहे थे। इतनी अच्छी गृहस्थी, जमीन-जायदाद और एक लड़का और लड़की, छोटा परिवार। अरे, जानकी की शादी भी हो चुकी है। वह अपने घर में सुखी है और गाँववालों ने बताया था कि दान-दहेज भी सेवाराम ने खूब दिया था। इसी बीच किलकोटी आ गया। वह भी देखने में ठीक था और क्या चाहिए? सबकुछ ठीक है। यह देखकर दोनों ने आपस में विचार-विमर्श किया और सेवाराम से कहा कि हम लोगों की ओर से बात पक्की है, आप जब चाहें हमारी लड़की देख लें और शादी की बात, गोदी-भराई का मुहूर्त निकलवा लें। सेवाराम ने कहा कि देखो भाई, जैसा हमारा इलाके में नाम है, उसके अनुसार बारात का स्वागत, सम्मान और दान-दहेज भी ठीक-ठाक होना चाहिए और रही बात लड़की देखने की, तो हम लोग आकर देख लेंगे। इस प्रकार की बातचीत होने के पश्चात् दयाराम और वंशीधर वापस घर लौट आए।

□

अपने घर में लड़केवाले की रूपरेखा बता रहे थे। परिवार के सभी सदस्य बहुत प्रसन्न थे। पीछे दरवाजे की ओट से पंखी सब बातें सुन रही थी और अपनी ससुराल का एक आकार चलचित्र की भाँति अंतर्मन में उतार रही थी, जो उसे अपनी कल्पना के अनुरूप ही प्रतिबिंबित हो रहा था। वह प्रसन्न थी।

उभय पक्षों की सहमति से सुविधानुसार कार्यक्रम निश्चित होकर खुशी-खुशी, धूमधाम से विवाह संपन्न हो गया। पंखी की विदाई उत्साहपूर्वक हुई। जब वह ससुराल पहुँची तो जैसा सुना था, उससे भी अधिक पाया और घर-परिवार की महिलाओं ने मंगल गीत गाए, उत्सव मनाया। आरती रामसखी, ननद जानकी तथा अन्य महिलाओं ने दूल्हा-दुलहिन की उतारी, सम्मान के साथ रीति-रिवाजों से गृह प्रवेश हुआ, देर रात तक मंगल गीत होते रहे, आँगन में ढोलक की तान गूँजती रही। अगले दिन मेहमानों की विदाई होती रही। कुल-देवताओं का पूजन संपन्न हुआ। हँसी-खुशी के माहौल में सुहागरात की सेज सजती रही, ननद जानकी अब पंखी को सुनाकर किलकोटी से कह रही थी कि द्वार छिकाई के नेग में दो तोले की चेन लूँगी, तभी प्रवेश करने दूँगी कमरे के अंदर। इसी प्रकार हँसी-ठिठोली में शाम हो गई थी। सभी महिलाएँ दुलहिन बनी पंखी को सुहागरात के लिए फूलों से सजे-सँवरे कमरे में ले गई और अंदर छोड़कर हँसती-खिलखिलाती बाहर आ गईं। अब पंखी प्रतीक्षा करने लगी अपने जीवनसाथी के आने का। रात्रि गहराने लगी थी, पंखी सजी-सँवरी बैठी थी, अपनी कल्पनाओं में खोई कि दरवाजे पर कुछ आहट हुई तो उसके दिल की धड़कनें तेज हो गईं। उसने पलटकर देखा, किलकोटी ने दरवाजा खोला और अंदर प्रवेश किया। भीतर से कुंडी लगा दी और झूमते हुए वह पलंग की ओर लड़खड़ाता हुआ नीचे गिर गया था। उसके मुँह से शराब की बदबू आ रही थी। कमरे में शराब की बू फैल गई थी।

पंखी ने जब यह हालत देखी तो उसके पैरों तले की जमीन खिसक गई। उसके शरीर का खून सूख गया। वह क्रोधित हो किलकोटी के पास आकर बोली, तुमने शराब पी है? किलकोटी ने लड़खड़ाती जबान से कहा, ''हाँ, मैंने शराब पी है। मेरी जान तू भी पी ले एक जाम।'' और जेब से एक शीशी निकालकर उसकी ओर बढ़ाया तो उसने कहा, ''मुझे शराब से नफरत है, मेरे मायके में कोई नशा नहीं करता है।''

''पी ले, भाषण बंद कर।'' पंखी ने गुस्से में अपना सिर पलंग की पाटी से दे मारा और रोने लगी। किलकोटी बेहोशी की हालत में वहीं जमीन पर पड़ा रहा। पंखी को रातभर नींद नहीं आई। वह पलंग की पाटी से टिककर बैठी रोती रही। प्रात: होते ही दरवाजा खोलकर बाहर निकल गई। उसकी आहट पाकर ननद जानकी बोली, ''अरे भाभी, क्या रातभर भाई ने सोने नहीं दिया, जो इतने सुबह बाहर आ गई।'' हँसती हुई वह अपनी भाभी के पास आई, किंतु जब भाभी चुपचाप रही तो उसने चेहरे से पल्लू हटाकर देखा, आँखें सूजी हुई थीं, सिर पर चोट के निशान, लाल कत्थई चकत्ते देखकर वह घबरा गई। ''अरे भाभी, क्या हुआ?'' उसने रोते हुए रात्रि की सब बात बताई। बगल के कमरे से रामसखी सब सुन रही थी, वह भी पास आ गई और समझाया, ''देखो बेटा! किलकोटी तो शराब पीता है, वह किसी की बात नहीं मानता। अरे, वह मर्द है, कभी नहीं सुधरेगा। औरतों को ही सबकुछ सहन करना होता है। मैंने भी बहुत परेशानी झेली है। अब वह तुम्हारा पति है तो निबाह तो करना ही होगा।'' इधर किलकोटी कमरे से उठकर बाहर निकल गया।

शाम हो रही थी। अंधकार धीरे-धीरे फैलता जा रहा था। किलकोटी ठेके के पास अपने दो-चार साथियों के साथ बतिया रहा था। एक ने पूछा, 'बता, कैसी रही सुहागरात?' उसने रात की घटना दोस्तों को सुनाई और समाधान पूछा। उनमें से एक ने कहा, 'देख किलकोटी, औरत जो एक बार सिर पर चढ़ गई तो सारी जिंदगी ढोएगा तू। अरे, अभी से दबाकर रख। समझा कि नहीं।' दूसरे साथी ने कहा, 'अरे नई-नई है,

उछल-कूद कर रही होगी। तू तो एक नंबर का बेवकूफ है, जो पड़ा रहा।' एक और ने कहा, 'औरत पाँव की जूती के बराबर होती है। दो-चार हाथ जमा देता, अपने आप चुप हो जाती।' पहले वाले ने कहा, 'एक क्वार्टर उसको भी पिला देता।' कहकर सभी हँसने लगे। किलकोटी सभी बातें बड़े ध्यानपूर्वक सुन रहा रहा था। एक ने कहा, 'ऐसे क्या चुपचाप बैठा है' और उसके कंधे पर हाथ रखते हुए उसने कहा, 'देख, अगर इस रात भी कोई नाटक करती है तो दो-चार लात जमा देना, काबू में आ जाएगी।' सभी लोगों ने कहा कि तेरी शादी हुई है। किलकोटी के साथियों के हाथों में शराब के प्याले छलकने लगे।

□

जानकी ने कहा, ''भाभी, चलो खाना खाय लेव।'' तो पंखी ने कहा, ''दीदी, भूख नहीं है।'' उसने भोजन नहीं किया और अपने कमरे में पड़ी रही। जानकी ने बहुत समझाकर प्रेम से खाना खिलाया। रात को किलकोटी नशे में झूमता आया। उसने दरवाजे में धक्का मारा, अंदर आकर बोला, ''मेरी रानी, क्यों बुरा मान गई? मैं तेरा पति हूँ।'' पंखी ने कहा, ''आप शराब मत पियो। मुझे दुर्गंध आती है।'' उसने कहा, ''अच्छा तो तू सीधी तरह नहीं मानेगी।'' और जोर से एक लात मारी और एक हाथ से झापड़ भी। पंखी ने एक जोर का धक्का मार किलकोटी को वहीं गिरा दिया।

शराबी की ताकत वैसे भी कम हो जाती है। उसने तो कभी ऐसा सोचा भी नहीं था। वह घबड़ाकर उठा और लड़खड़ाता पलंग की पाटी पकड़ खड़ा हो गया। उसकी सारी अकड़ भूल गई और हाथ जोड़कर बोला, ''अच्छा, मैं हार गया, तू जीत गई। अब शांत हो जा।'' बस ऐसे ही लड़ते-झगड़ते, मिलते-जुलते दिन गुजरने लगे।

कुछ दिन पश्चात् पंखी का भाई मोहन बहन को लिवाने के लिए आ गया और एक-दो दिन रहने के बाद बहन पंखी को लिवाकर घर ले आया। माँ भगवती ने उसे गले से लगा लिया। पंखी माँ के सीने से लिपटकर फूट-फूटकर रोने लगी। सभी परिवार के सदस्य मिले। राजी-खुशी समाचार पूछा और मिल-बैठकर बातें करने लगे। एक-दो दिन रहने के बाद भगवती ने हाल-चाल पूछा तो उसके धीरज का बाँध टूट गया और सारी बातें माँ को बताईं। भगवती दु:खी होकर बोली, ''अब घर में और किसी को यह सब नहीं बताना। जो तेरे भाग्य में था सो तुझे मिला है। सबके साथ मिलकर रहना सीख। देख, तेरी शादी कितने धूमधाम से संपन्न हुई। दो खेत बिक गए और नकद कर्जा अभी और देना है। इसलिए अपनी हठ से दोनों परिवार बरबाद मत कर देना। अगर दामाद शराब पीता है तो उसको समझाया जाएगा और बेटा, शराब की दुकानें तो गली-गली में खुली हैं, जो कभी खाली नहीं रहतीं।''

पंखी ने कहा, ''माई, वह बहुत पीता है। रुपया तो बरबाद होता ही है, उसे अपना होश भी नहीं रहता। घंटों बेहोश पड़ा रहता है। मुझे तो बहुत बदबू आती है। उनके घरवाले रोकते नहीं हैं।'' धीरे-धीरे यह बात सभी को पता चल गई कि किलकोटी शराब पीता है और मार-पीट करता है। किंतु अब पछताने से क्या होता है? कुछ समय बाद ससुराल से पंखी को लिवाने के लिए आ गए। तब विदाई के समय भगवती ने कहा, ''देख पंखी, अब वही तेरा घर है। इसलिए मन लगाकर रहना होगा।''

समय-चक्र अपनी गति से घूमता रहा। कुछ समय तो सेवाराम की खेती-बाड़ी का काम ठीक से चलता रहा। फसलें ठीक हो गईं। ट्रैक्टर किस्त की रकम समय पर जमा करते रहे, लेकिन इस वर्ष जो मौसम ठीक समझकर सोयाबीन की फसल बोई थी। वह कम वर्षा के कारण सूख गई थी और रबी की फसल की अगली बोनी के लिए पानी नहीं होने के कारण बोई नहीं गई। भयंकर सूखा पड़ रहा था। गाय-भैंस सब प्यास बुझाने को भटक रहे थे। सेवाराम पटेल बीमार हो गए। बहुत दवा कराई, किंतु बच नहीं पाए। इस दौरान पंखी के एक लड़का और एक बेटी हो गई थी। किलकोटी शराब पीकर पंखी से मार-पीट करता, झगड़ता रहता था।

दिन-रात शराब पिए पड़ा रहता था तो फाइनेंस कंपनी ने ट्रैक्टर उठवा लिया और नीलाम कर दिया। बकाया बचे कर्ज में जमीन बिक गई और जो कुछ जमीन बची थी, वह भी बंजर हो रही थी। शराब तो प्रतिदिन चाहिए थी। घर में खाने के लिए अनाज नहीं, बच्चे भूखे बिलखते थे और किलकोटी शराब पीकर पत्नी व बच्चों को पीटता था। बच्चे बड़े हो रहे थे, बेटे की उम्र लगभग सात वर्ष और बेटी पाँचवीं में प्रवेश कर रही थी।

फसलें खराब होने के कारण ट्रैक्टर की किस्त नहीं चुका पाए और ट्रैक्टर-ट्रॉली से कोई दूसरा धंधा भी नहीं हो पाया। दिन-रात शराब पिए पड़ा रहता था तो फाइनेंस कंपनी ने ट्रैक्टर उठवा लिया और नीलाम कर दिया। बकाया बचे कर्ज में जमीन बिक गई और जो कुछ जमीन बची थी, वह भी बंजर हो रही थी। शराब तो प्रतिदिन चाहिए थी। घर में खाने के लिए अनाज नहीं, बच्चे भूखे बिलखते थे और किलकोटी शराब पीकर पत्नी व बच्चों को पीटता था। बच्चे बड़े हो रहे थे, बेटे की उम्र लगभग सात वर्ष और बेटी पाँचवीं में प्रवेश कर रही थी।

अब जमीन भी काफी बिक गई थी। केवल दस बीघा जमीन, रहने को मकान ही रह गया था और कुछ जेवर, जो पंखी के पास थे। अब तो वह पंखी के जेवर छीन लेता और बेचकर शराब में उड़ा देता। जब भी उसे मौका मिलता जेवर, रुपया, पैसा घर से ले जाकर शराब में उड़ा देता था।

□

सर्दी का मौसम शबाब पर था। बहुत ज्यादा ठंड पड़ रही थी। घर में बच्चों को पहनने के लिए कपड़ों की कमी थी। ओढ़ने-बिछाने को भी कपड़े नहीं थे। जाड़े की रातें ठिठुरते हुए निकल रही थीं तो पंखी ने कहा, बच्चों को सर्दी लग जाएगी। एक पल्ली-रजाई खरीद लो। दूसरे दिन किलकोटी ने एक रजाई-गद्दा खरीदने की बात पत्नी को बताई, लेकिन रुपया-पैसा पास नहीं था। पंखी के पास चाँदी की पायल थी, जो शादी के समय वंशीधर मामा ने दी थी। उसी को किलकोटी ने बहलाकर उससे ले लिया और बाजार में बेचकर अच्छी सी रजाई और गद्दा खरीद लिया। शाम हो गई थी। दोनों को सिर पर रखकर घर आ रहा था कि रास्ते में

उसके साथी मिल गए और पूछा, ''अरे किलकोटी, कहाँ जा रहे हो? थोड़ी सी ले ले।'' उसने मना कर दिया। साथियों ने पकड़ लिया और वहीं शराब की दुकान पर ले गए। सबने शराब पी। एक ने कहा कि आज ग्राम की अथाई पर नौटंकी हो रही है। पहले उसे देख ले, फिर घर चले जाना। ठंड भी नहीं लगेगी। रजाई पास में है। किलकोटी बोला, ''रजाई-गद्दा नहीं खोलेंगे।'' दूसरे साथी ने कहा, ''ठीक है। अरे तूने मुन्नी बाई का गाना सुना है कभी?'' वह बोला, ''कौन गाना? चलो वहीं जाकर सुन लेना।''

साथियों के साथ किलकोटी चलने को राजी हो गया। गाँव की अथाई पर अच्छा मंच सजा हुआ था। वहाँ एक पात्र राजा बनकर और उसके सामने दरबारी, सरदार बैठे हुए थे। नगाड़े की धुन तड़-तड़-तड़ गूँज रही थी। मंत्री ने हाथ जोड़कर राजा से निवेदन किया, ''हुजूर, नृत्यांगना मुन्नीबाई को हाजिर किया जाए।'' राजा ने कहा, ''बहुत खूब, बुलाया जाए।'' तभी सामने से दर्शक भीड़ से तालियाँ बजा रहे थे। ''मुन्नीबाई को बुलाइए, मुन्नीबाई को...।''

थोड़े अंतराल के पश्चात् परदा उठता है। गोरे बदन छरहरी सुंदर नृत्यांगना मंच पर कमर मटकाते हुए आई तो पूरा पंडाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। मनचलों ने सीटी बजाई और कुछ शब्द उछाले। जब मुन्नीबाई ने नृत्य प्रदर्शित किया तो किलकोटी झूमने लगा और खड़े होकर उमंग में नाचने लगा तथा गद्दा और रजाई अपने सिर पर रखे मंच पर ही पहुँच गया और मुन्नीबाई को भेंट करते हुए बोला, ''मुन्नीबाई, तेरे लिए ही बनवाकर लाया हूँ। तुम्हें ठंड नहीं लगेगी। मुझे याद रखना, मेरा नाम है किलकोटी पटेल, समझे।'' मंडलीवालों ने उसे धन्यवाद दिया और उसका हाथ पकड़कर सामने उसके स्थान पर बैठा गए थे।

प्रात: पड़ोसवालों ने यह सारा वर्णन पंखी को सुना दिया था। वह रो-रोकर अपना सिर पीट रही थी। क्रोध से पागल हो रही थी। उसका मन क्रोध से भर गया। उसने अपने मन में किलकोटी को सबक सिखाने का निश्चय कर लिया था।

□

उसके भाई मोहन की शादी पहले हो चुकी थी। गोपाल की शादी का निमंत्रण लेकर मोहन आया था। पंखी से साथ चलने को कहा तो दूसरे दिन प्रात: दोनों बच्चों को तैयार किया और जो भी गहने-जेवर उसके पास थे, पहन लिये। किलकोटी ने देखकर कहा, ''अरे मेरी रानी, आज ऐसी सज गई जैसे तेरी शादी हो। तूने दुलहिन का सा शृंगार कर लिया है।'' वह कुछ नहीं बोली। बच्चों को साथ लेकर अपने भाई मोहन के साथ चली गई। शादी-विवाह के पश्चात् जब पंखी वापस आई तो उसके बदन पर सिवाय मंगलसूत्र और पाँव में चाँदी की छोटी पायल के कुछ भी नहीं था। किलकोटी यह देखकर आग बबूला हो गया, ''हाथ में मात्र काँच की चूड़ी, यह भी वहीं फोड़ आती। तू तो विधवा जैसी आई है। बता, चीज-बसत कहाँ है?'' उसने कहा, ''वह तो सभी मैं माई-बापू के पास रखकर आई हूँ। तू तो सब बेचकर शराब पी लेता। बच्चों को तो पालना है।'' किलकोटी ने गुस्से में एक लात मारी। बोला, ''हरामजादी, कुआँ में पटक दे दोनों बच्चों को और तू भी गिर जा इनके साथ।'' इतना कहकर मंगलसूत्र झटक बाहर चला गया।

दूसरे दिन प्रात: ही किलकोटी शराब पीकर लड़खड़ाता हुआ आ पहुँचा। द्वार पर खड़ा होकर चिल्लाया, ''अरे तू अभी तक मरी नहीं। मैंने तो सोचा, तेरा दाह-संस्कार करना है। इसलिए आ गया।'' पंखी ने कहा, ''मर जाऊँगी और तू अकेला भूत की तरह भटकेगा। साथ में बच्चों को भी ले जाऊँगी।'' किलकोटी ने कहा, ''अगर तू अपने बाप की औलाद है तो मरके दिखा, नहीं तो समझूँगा, किसी और की संतान है, समझी।'' इतना कहकर फिर वापस चला गया।

दोनों बच्चे भूखे-प्यासे और ठंड से ठिठुर रहे थे। पंखी ने दोनों बच्चों को साथ लिया और बरतन और रस्सी लेकर कुएँ से पानी भरने चली गई। वहाँ जाकर उसने दोनों बच्चों के हाथ-पैर रस्सी से बाँधकर जोर का धक्का दे कुएँ में गिरा दिया और ऊपर से खुद भी कूद गई। जोर की आवाज सुनकर आसपास के लोग इकट्ठे हो गए। कुछ कुएँ में उतर गए और तीनों को बाहर निकाल लिया। दोनों बच्चों की मृत्यु हो चुकी थी। पंखी के पेट में पानी भर गया, जिसे लोगों ने दबाकर निकाल दिया। पंखी जीवित थी। किसी ने पुलिस को खबर कर दी तो मौके पर कानूनी कारवाई करने के बाद पंखी और किलकोटी को पुलिस पकड़कर ले गई। पंखी पर दो मासूम बच्चों के इरादतन हत्या का केस दर्ज किया गया।

माननीय न्यायाधीश के समक्ष प्रकरण प्रस्तुत किया गया। जाँच-पड़ताल और साक्ष्य के आधार पर पंखी को निर्दोष-मासूम बच्चों की निर्मम हत्या के अपराध में आजन्म कारावास की सजा सुनाई गई, जिसमें कहा गया कि पंखी को अंतिम साँस तक जेल में रखा जाए। सजा का आदेश सुनते ही वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ी थी, जिसे दो महिला आरक्षक घसीटते हुए जेल वाहन में डालकर जेल ले गईं। किलकोटी को हत्या और आत्महत्या के लिए प्रेरित करने का दोषी पाया गया, उसे सात वर्ष के सश्रम कारावास से दंडित किया गया। अब यहाँ सूने घर में केवल बीमार माँ रामसखी बिलख रही थी।

चार रोटियाँ दो चम्मच दाल लेने के लिए कैदियों की कतार में खड़ी पंखी सोच रही थी कि अब तो प्रायश्चित्त करने का अवसर ही नहीं, जीवन तो अब इसी नरक में काटना है। वहीं पुरुष वार्ड में किलकोटी जेल काट रहा था। दोनों ही सोच रहे थे, किंतु अब पछताने से क्या होता है।

आनंद भवन, मेन रोड पृथ्वीपुर,
जिला-टीकमगढ़-४७२३३८ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२४३४५३५५

एक पुरानी विधा में नए संदर्भों के प्रतिमान

● बी.के. वर्मा 'शैदी'

यों तो दोहा भारतीय काव्य साहित्य की प्राचीनतम विधाओं में से एक है और हर कालखंड में इसने अपने सौंदर्य एवं रसानुभूति के मानक स्थापित किए हैं, तथापि पिछले एक लंबे अंतराल में यह थोड़ा पृष्ठभूमि में चला गया था। सौभाग्यवश गत लगभग दो-तीन दशकों से इसकी पुनरावृत्ति हुई है और नए-नए संदर्भों और अभिनव बिंबों-प्रतीकों के साथ एक नवीन रूपाकार में दोहा पुनर्स्थापित हो रहा है। इसके पुनर्जीवन व पुनर्स्थापन में प्रख्यात साहित्यकार प्रो. देवेंद्र शर्मा 'इंद्र', गोपालदास नीरज, डॉ. देवेंद्र आर्य, डॉ. बलदेव वंशी, पाल भसीन, दिनेश शुक्ल, अंसार कंबरी, रामबाबू रस्तोगी, अशोक गीते, हरेराम समीप, जय चक्रवर्ती आदि दोहाकारों का उल्लेखनीय योगदान है। गजल की लोकप्रियता ने भी दोहे को ताल ठोंकने का संबल प्रदान किया है। वरिष्ठ कवियों से लेकर युवा कवि तक, सभी दोहा-कोष में अपना-अपना योगदान दे रहे हैं। लेकिन इस आपाधापी में स्तरीयता का क्षरण भी हो रहा है। प्रकाशित दोहा-संग्रहों में अच्छे संग्रह अपेक्षाकृत कम ही देखने को मिलते हैं। सौभाग्य से युवा कवि विनय मिश्र का सद्य:प्रकाशित दोहा-संग्रह 'इस पानी में आग' सभी मानकों पर खरा उतरता है और पाठकीय आनंद प्राप्त करता है।

कवि की इस मान्यता व आत्म-स्वीकृति के अनुरूप कि 'आज का दोहा जन-जन से संवाद करने में सक्षम है', इस संग्रह के ७०५ दोहों को शीर्षकों के बजाय पाँच संवादों में विभाजित किया गया है—'समय संवाद', 'स्मृति संवाद', 'प्रकृति संवाद', 'आत्म संवाद' एवं 'प्रतिवाद'। सभी दोहों में कवि का अपना एक दृष्टिकोण उजागर होता है, जिसमें आधुनिक समाज में व्याप्त विरूपण, तथाकथित अपनों की विमुखता एवं मानवीय संवेदनहीनता के साथ-साथ जीवन की नश्वरता आदि का चित्रण सटीक ढंग से परिलक्षित होता है। उदाहरण के लिए देखें तो ग्रामीण परिवेश को तेजी से निगलती आधुनिकता के प्रति असहाय संवेदना की अभिव्यक्ति इन दोहों में सशक्त रूप से हुई है—

'गौरैया का बोलना औ आँगन की धूप।
बरसों से देखा नहीं, ऐसा दृश्य अनूप॥
जिन खेतों में थी कभी फसलों की मुसकान।
उन खेतों में उग रहे अब दिन-रात मकान॥
सारा पानी पी गया, दानव हुआ विकास।
जो नदियों के देश में, भटक रही है प्यास॥'

जाने-माने कवि एवं गजलकार। प्रमुख रचनाएँ हैं—'मयखाना', 'दर-दर की ठोकरें' *(उर्दू-काव्य)*, 'तू-तू, मैं-मैं', 'तुकी-बेतुकी' *(हास्य-व्यंग्य काव्य)*, 'हम जंगल के फूल' *(दोहा सतसई)*। ब्रजभाषा में भी लेखन। दूरदर्शन पर वार्त्ताएँ प्रसारित। यूरोपीय देशों की यात्रा।

व्यक्तिगत संबंध भी इस आधुनिकता की चपेट में आते जा रहे हैं—

'धीरे-धीरे मिट गए, आपस के संवाद।
कोई भी करता नहीं, आज किसी को याद॥'

भ्रष्ट राजनीति और धार्मिक आडंबर-संहिता पर भी यह कटाक्ष समीचीन है—'अब तो तय है ताल की, हर मछली का अंत/हैं बगुलों के भेष में नेता और महंत।'

कवि ने व्यंग्य-रूप से ही सही, इससे बचने का उपाय भी सुझाया है—'क्या पाओगे थामकर, इक विरोध का हाथ/समझो सुविधा का गणित, बहो हवा के साथ।'

आजकल मानव-स्वभाव में असंवेदनशीलता और अपने परिवेश से असंबद्धता व उदासीनता इस हद तक आ गई है कि वह अपने आसपास घटित होनेवाली घटनाओं से अनभिज्ञ है और जानकारी के लिए समाचार-पत्र, रेडियो-टी.वी. अथवा अन्य समाचार-माध्यमों पर आश्रित है—'मेरे घर के सामने, कुचल गया मासूम/अगले दिन अखबार से, मुझे हुआ मालूम।'

इच्छा, कामना और लालसा मनुष्य की जिजीविषा के अभिन्न अंग रहे हैं। विपरीत परिस्थितियों तथा अभिन्न विवशताओं के बावजूद मन में इच्छा-आकांक्षाएँ पनपती ही रहती हैं। इससे मन का अशांत रहना स्वाभाविक है—

'जीवन में यूँ ही नहीं मचा हुआ कुहराम।
मन के तहखाने हुए, चाहों के गोदाम॥
जिसने देखा, देखकर मुँह से निकली आह।
एक परकटी जिंदगी, है उड़ने की चाह॥'

मन में विभिन्न भावनाओं, विचारों, संवेदनाओं व इच्छा-अपेक्षाओं का एक समुच्चय सदैव विद्यमान रहता है—

'आँसू, चिंताएँ, खुशी, सुख-दु:ख, घुटन, उमंग।

हैं मन के आकाश में, इंद्रधनुष के रंग॥'

मनुष्य को जीवन प्राप्त है। जीवित रहने के लिए जिजीविषा निरंतर प्रेरित करती रहती है। लेकिन इस मार्ग में उसे जीवन-संघर्ष भी निर्बाध रूप से करना पड़ता है—

'तपते रेगिस्तान में, एक अकेला पेड़
बरसों तक लेता रहा, सूरज से मुठभेड़॥'

जीवन के इन विभिन्न आयामों से गुजरने के बाद उसकी परिणति का अंतिम छोर तो मृत्यु ही है। जिस शरीर पर हम इतना गर्व करते हैं, उसकी नश्वरता का आभास क्या हम कर पाते हैं? पानी का बुलबुला आकार में कितना भी बड़ा क्यों न हो, फूट जाने पर हथेली में नमी-मात्र ही शेष रह जाती है—

'बस इतनी है देह की, दुनिया-भर में साख।
आ जाती है एक दिन, मुट्ठी-भर में राख॥'

विनय मिश्र ने अपने दोहों में बिंबों-प्रतीकों और मुहावरों का प्रयोग कुशलतापूर्वक और प्रभावी रूप से किया है। उनके कुछ बिंब तो अनूठे और अछूते हैं, जैसे—

'कुछ ऐसे है ध्यान में, खुशियों का सामान
जैसे रहता था कभी, पनडब्बे में पान॥
रहा जगाए इस कदर, बनपाँखी का शोर।
बटन नींद का टाँकते, यहाँ हो गई भोर॥
मानो मीठी खीर हो, सुबह ओस का रूप।
चटखारे लेते हुए, खाती जाए धूप॥'

कवि ने अपने दोहों को समकालीन संदर्भों से जोड़ने की दृष्टि से अंग्रेजी शब्दों और विज्ञापन-उक्तियों का भी भरपूर उपयोग किया है—

'लपटों को देता हवा, विज्ञापन का शोर।
तृष्णाएँ कैसे बुझें, ये दिल माँगे मोर॥
मोबाइल है कान में, तोता बैठा रेल।
हवा कोरियर हो गई, ले मैना की मेल॥'

आज कविता की लोकप्रियता और स्वीकार्यता पर जो प्रश्नचिह्न लगने लगे हैं, उसका प्रमुख कारण है छंदमुक्त कविता की अवांछित, अनिरुद्ध एवं सुनियोजित दादागिरी। इसी कारण यह यदा-कदा समाज से कटी होने का आभास देने लगती है—
'कटने लगी समाज से, धार हो गई मंद।
जब से कविता हो गई, शुष्क और स्वच्छंद॥'

आज कविता की लोकप्रियता और स्वीकार्यता पर जो प्रश्नचिह्न लगने लगे हैं, उसका प्रमुख कारण है छंदमुक्त कविता की अवांछित, अनिरुद्ध एवं सुनियोजित दादागिरी। इसी कारण यह यदा-कदा समाज से कटी होने का आभास देने लगती है—

'कटने लगी समाज से, धार हो गई मंद।
जब से कविता हो गई, शुष्क और स्वच्छंद॥'

लेकिन विनय मिश्र जैसे रचनाकार तमाम संघर्षों के बावजूद अपनी रचनाधर्मिता के माध्यम से इस अलख को निरंतर आलोकित बनाए रखने में अपना योगदान दे रहे हैं। यही संकल्प छांदस कविता की शाश्वतता के प्रति आश्वस्त करता है—

'संघर्षों में और भी, निखरा लेखन-धर्म।
मुझको तो जिंदा रखे, ये मेरा कवि-कर्म॥'

उन्हें तो चतुर्दिक् कविता ही दृष्टिगोचर होती है—

'साँझ भजन-जैसी लगे, भोर लगे नवगीत।
लगे गजल-सी चाँदनी/दोहा दिन का गीत॥'

मुझे आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि अपने कथ्य एवं कहन की विशिष्टता के चलते विनय मिश्र का यह दोहा-संग्रह दोहा-प्रेमियों को भरपूर रसास्वादन प्रदान करेगा।

११/१०८, राजेंद्र नगर,
साहिबाबाद-२०१००५
गाजियाबाद (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९८७१४३७५५२

आत्मीय

लघुकथा

● **मृणालिनी घुले**

मैं सड़क पर जा रही थी। अपने विचारों में खोई। इतने में सामने से आ रही एक लड़की खुशी से किलकती मेरे गले से आ लगी। कहने लगी, 'अरे, आज मिल रही हैं आप! कितने वर्षों बाद। कहाँ थीं अभी तक? चलो कोई बात नहीं। वर्षों बाद ही सही, आपसे मुलाकात तो हो गई।' मैं चकित हो उसकी बातें सुन रही थी। उसके हाथों की पकड़ अपनी पीठ पर महसूस कर रही थी। सामने से कुछ लोग गुजर रहे थे। गुजर रहे होंगे, सड़क ही तो थी। दो पल बाद वह लड़की मुझसे अलग हुई और मेरे साथ-साथ चलने लगी।

'मैंने तुम्हें पहचाना नहीं। क्या नाम है तुम्हारा?' मैंने पूछा।

'मैं भी आपको नहीं पहचानती। वो मेरे पीछे कुछ गुंडे पड़े थे इसलिए...।'

समझ में आ गया, मुझे अपना आत्मीय क्यों बनाया था उसने।

२०५ जरबेरा
शालीमार टाउनशिप
विजयनगर के पास, देवास रोड
इंदौर (म.प्र.)
दूरभाष : ०९१६५३५९०७१

कहानी

हवाएँ चुप नहीं रहतीं

● मृदुला बिहारी

रहीम अब्दुल्ला समय से पहले नई दिल्ली के रेलवे स्टेशन पर पहुँच गया। भीड़ काफी थी। वह सब तरफ देखकर भी कहीं नहीं देख रहा था। यहाँ आकर उसका मन हल्का हो चुका था। जहूर की नमाज के बाद एक मिनट नहीं बैठा। आज का दिन बहुत मसरूफ रहा काम-काज में। दिमाग खपाते-खपाते थक गया था। पिछले दो-तीन महीने से बड़ा अच्छा समय जा रहा था। अल्लाह की मेहरबानी से व्यापार में फायदा हो रहा था। पर्स रुपयों से भरा था। चेहरे पर दौलत की आँच थी। सोलह साल मशक्कत करके उसने बहुत कुछ हासिल कर लिया था। जमीला से बात हो गई, हिना और रेहान से भी। उसकी काबिलियत की वजह से ही वह घर-बार से बेफिक्र होकर अपना ध्यान काम में लगा पाता है। लगभग नौ साल बाद कारोबार के सिलसिले में पटना जा रहा था। वहाँ आलोक उसके इंतजार में है। जमीला ने उसकी बीवी-बच्चों के लिए जयपुर से सौगात भेजी है। वह कितने ही अरसे के बाद आलोक से मिले, उसे भला सा अहसास होता है। जाने क्यों लोग होशियारी के चक्कर में काँइयाँ, धूर्त, कठोर और बेईमान बन जाते हैं? आलोक उसके कॉलेज के जमाने का दोस्त है, देबूसराय दिनों का। एक बार देबूसराय छूटा तो छूट ही गया। वह सोचने लगा, रोजों का वक्त करीब आ रहा है। मैं अल्लाह को खुशियों के बीच पा जाता हूँ। वह इसी भाव में आसमान तक पहुँच गया। उसे याद आया—बरसों पहले किसी ने उससे कहा था कि आसमान तक पहुँच गए तो कोई दिशा नहीं, सब तरफ आसमान-ही-आसमान है।

वह अपनी जगह से उठकर वहाँ की दुनिया देखने लगा। फागुन का समय था। सबकुछ नया सा लग रहा था। साथवाले बेंच पर बैठे मियाँ-बीवी पर उसकी नजर पड़ी। वह उनको देखने लगा। किसी इरादे से नहीं, बस यों ही वफापरस्त निगाहों से। उस औरत को देखकर एक भूला चेहरा याद आने लगा। कौन··· ? वह जो···ओ हाँ, वैसी ही लग रही है। कभी-कभी एक सी शक्ल देखने को मिल जाती है। उसने फिर देखा, देखकर हैरतजदाँ हुआ। यह तो वही है—कात्यायनी!

तभी उद्घोषणा हुई कि ट्रेन एक घंटा लेट है। ट्रेन शायद सवारियों के मन को समझती है—मशीन होते हुए भी अक्ल है उसमें। रहीम खामोशी से उस औरत को देख रहा था, पर उसका मन बोल रहा था। वक्त की उम्र रोज बदलती है, लेकिन शक्ल नहीं बदलती, वही रोशनी, वही साया। लेकिन इनसान हर वक्त खत्म होते रहता है। उम्र उसे घेरती है, किंतु यह कात्यायनी तो ज्यादा नहीं बदली। उसने मन-ही-मन हिसाब लगाया। ठीक इक्कीस साल पहले ऐसे ही मौसम में मिली थी। तब उसकी मोहब्बत ने उसे घेर लिया था। उजाले में, अँधेरे में हवा में; वह उसे घेरे रहती। क्या मैं उससे बहुत प्यार करता था? प्यार तौला नहीं जाता, इसके घटने-बढ़ने का हिसाब नहीं लगाया जा सकता। इनसान है तो प्यार करेगा ही, न करना अस्वाभाविक है। लेकिन एक दिन वह धूप, बारिश, हवा की महक के साथ उसे छोड़कर चला आया। वजह का क्या, वजहें सही या गलत नहीं होतीं, वे बस होती हैं। जमी हुई धुंध के बीच कुछ याद रहा, कुछ फिसल गया। सोचा, पुरानी बातों को छेड़ने से क्या फायदा? लेकिन वे पल कितने भी पुराने हों, उन अहसासों को भुलाना आसान नहीं। वह सिंदूरी शाम भुलाई जा सकती है क्या? जो फूल अँधेरे में खिल चुका था, उसकी सुगंध हवा में फैलती चली गई। हवाएँ चुप नहीं रहतीं।

सुपरिचित लेखिका। 'प्रकाशन पूर्णाहुति', 'कुछ अनकही' (उपन्यास); 'अँधेरे से आगे', 'सूर्यास्त से पहले', 'दीप से दीप जले', 'क्यों नहीं' (नाटक-संग्रह)। विवेकानंद सम्मान तथा मीरा पुरस्कार से सम्मानित।

रहीम आज फिर उसी रास्ते पर था। उसकी चाल से लग रहा था कि राहें उसकी जानी-पहचानी हैं। जाने-पहचाने रास्तों पर कदम सोच-समझकर नहीं पड़ते, बस पड़ जाते हैं। वह इस उम्मीद से इधर आया था कि वह लड़की दिख जाए, वही जो भोर के गुलाब के फूल जैसी सुंदर है। उसकी आँखें सुहाने ख्वाब का जाल बुन रही थीं। दिन की पहली नमाज में उसने दुआ माँगी थी कि वह लड़की उसे दिख जाए। वह अपने कॉलेज से इसी रास्ते वापस घर लौटती है, अपने बुरकेवाली सहेली के साथ। कल जहाँ वह दिखी थी, वहीं एक पीपल के पेड़ के पीछे खड़ा हो गया, थोड़ा छिपकर। सामने से आता उसका जगमगाता चेहरा नजर आया। वह बुरकेवाली सहेली के साथ बातों में मशगूल थी। उसे देखते ही रहीम जैसे किसी बहाव में बह जाता। लड़की ने उसे अपनी ओर देखते हुए देख लिया। वह बोलते-बोलते रुक गई, उसकी नजरें झुक गईं

और वह सँभल गई। रहीम भी सँभल गया। इस तरह किसी लड़की की तरफ देखते रहना बेअदबी मानी जाती है। वह पेड़ की ओट में चला गया, जहाँ से वह तो उसे देख सके, लेकिन वह लड़की नहीं। लड़की की निगाहें उसे ढूँढ़ने लगीं। उसकी यह अदा उसके दिल में तूफान मचाने के लिए काफी थी। धीरे-धीरे दोनों आँखों से ओझल हो गईं। वह आँख बंद करके उस लड़की का चेहरा देखने लगा कि उसका चेहरा कैसा था? क्या वह हमारी तरह इनसान है? इस वक्त शाम नहीं हुई थी, पर सूरज की गरमी कम हो गई थी। आसमान साफ था और हवा में एक तृप्ति थी, उस तृप्ति में एक ताप थी।

पंडितजी भी अपने घर की ओर चल पड़े। मंदिर के अहाते में ही उनका निवास था, जहाँ वे अपनी पुत्री कात्यायनी के साथ रहते थे। पत्नी एक बीमारी में कुछ बरसों पहले गुजर गई थी। बड़ी बेटी गौरी अपने ससुराल बनारस में थी। शाम का अँधेरा गहराने लगा था। सुबह से उनका मन भरा रहता है, पर शाम के अँधेरा फैलते ही उनका मन बेचैन होने लगता है।

पेड़ के साये में सड़क थी। वह आलोक के घर की तरफ चल पड़ा। आलोक! उसका हमउम्र, उसके दिल का राज जाननेवाला अजीज दोस्त! उसका मोहल्ला हमेशा की तरह परम निश्चिंत होकर अपने में मगन था। एक तरफ बच्चे खेल रहे थे। आलोक वहीं मिल गया। दोनों दोस्तों ने वहीं से आगे का रुख कर लिया। उसका चेहरा देख आलोक समझ गया कि जनाब अभी उस लड़की का दर्शन करके आ रहे हैं। उसने उसका मजाक बनाते हुए कहा, 'बेगुनाह पकड़ा गया, इश्क में जकड़ा गया।'

रहीम यों मुसकराया ज्यों हँसने पर पाबंदी लगी हो, 'तुम इश्क करो तो जानो। इश्क का रास्ता है खुशी का, मर्सरत का। यह हैरानी भरा रास्ता है, दिल पर असर करता है।'

'आप तो पक्के राग गानेवालों की तरह अलाप में ही खो गए। आपकी नीयत कुछ ठीक नहीं लगती।'

'मोहब्बत में बुरी नीयत से कुछ नहीं सोचा जाता।'

'यह बताओ, उसकी तरफ से कोई संकेत मिला या नहीं?'

'उसके दिल का हाल हम कैसे जानें? उस बेवफा ने अभी तक तो कोई इशारा नहीं किया।'

'उसे प्यार भी करते हो और बेवफा कहते हो।'

'प्यार में बेवफा कहा जाता है, समझा नहीं जाता। सच! महीनों से उसे देख रहा हूँ, लेकिन उसके बारे में कुछ नहीं जान सका।'

'महाकाल के हिसाब से चंद महीने ज्यादा समय है क्या?'

'मगर मेरी जिंदगी में तो है।'

'यार रहीम, तुम जज के बेटे हो, अच्छी-खासी अक्ल है, इस बार एम.ए. में तुम्हारा फर्स्ट क्लास तय है। सब तरह से लायक, क्या चाहिए तुम्हें? क्यों मन को दुःखी करते हो?'

'इन चीजों के अलावा एक चीज और चाहिए, वह है उस लड़की का प्यार। उसकी आँखों में सपने ही सपने थे।'

'कोई भी बात करो, तुम घूम-फिरकर उसी लड़की पर आ जाते हो। मैं चलूँ रहीम, मुझे मंदिर जाना है। वहाँ रघुनाथ पांडे से शोभा की कुंडली बनवानी है। वे हाथ की रेखाओं को पढ़कर भविष्य बता देते हैं। बड़े ज्ञानी हैं। लोग उन पर विश्वास करते हैं। पापा जब भी उलझन में होते हैं, इनके पास ही जाते हैं।' शाम होने लगी थी। सड़कें लोगों से भरने लगीं। दोनों मित्रों ने एक-दूसरे से विदा ली और अपनी-अपनी राह पकड़ ली।

रहीम आजकल हरदम किसी अलौकिक घटना की उम्मीद किया करता, मानो कुछ घटित होने की राह देख रहा हो। रमजान का महीना खत्म होनेवाला था, ईद आने ही वाली थी। जब वह घर पहुँचा तो सेवईंयाँ पक रही थीं। पुलाव और दो प्याजा की खुशबू आ रही थी। उसके अब्बू गफूर साहब ने जब बेटे का चेहरा देखा तो उनके दिल को ठंडक मिली। उनका बेटा खूबसूरत है, हिम्मती है, मेहनती भी है, पर जज्बाती बहुत है। उनकी दिली तमन्ना थी कि बेटा उनके जैसा अफसर बने, लेकिन उनके और बेटे के ख्वाबों में अंतर था। रहीम का हर काम ही अलग था। जवान बेटे से ज्यादा सवाल-जवाब करना उनकी आदत न थी। वे रोजा, जकात, हज-नमाज में डूबे पक्के मुसलमान थे। सुबह-सुबह पश्चिम की तरफ मुँह करके बैठ जाते और दुआ माँगते कि या खुदा, मेरे बेटे को लंबी उम्र दे। तंदुरुस्त रख, यही मेरी इल्तजा है।

रहीम भी उनकी कम इज्जत नहीं करता था। अब्बू कहना महज दुनियादारी नहीं थी बल्कि अब्बू उसके दिल की गहराइयों से निकलता था। शाम को सारे दिन का रोजा खोलने का समय हो गया। पूरा परिवार जमा था। रहीम कहीं भी रहे, उसका दिल उस लड़की के पास बंधक रहता।

आलोक जब मंदिर पहुँचा तो आरती शुरू हो चुकी थी। पंडित रघुनाथ पांडे अपनी सुरीली आवाज में आरती गा रहे थे। आरती की धुन इतनी मधुर थी कि भक्तगण भी झूमकर पंडितजी का साथ दे रहे थे। आलोक कद्रदानों की तरह वहाँ का नजारा देखने लगा। श्रीराम-सीता, भरत-लक्ष्मण और शत्रुघ्न की मूर्तियाँ थीं। सामने हनुमानजी विराज रहे थे। उन पर भक्त बेलपत्र, फल एवं चंदन चढ़ा रहे थे। धूप-लोबान की सुगंध फैली हुई थी। पंडितजी के माथे पर चंदन का तिलक, गले में कंठी तथा बदन पर पीली चादर थी। आरती के बाद भक्तगण प्रसाद लेकर लौट गए। आलोक ने अपने पिता का संदेश दिया और छोटी बहन शोभा की जन्मतिथि, समय, स्थान आदि का विवरण देकर लौट आया।

पंडितजी भी अपने घर की ओर चल पड़े। मंदिर के अहाते में ही उनका निवास था, जहाँ वे अपनी पुत्री कात्यायनी के साथ रहते थे। पत्नी एक बीमारी में कुछ बरसों पहले गुजर गई थी। बड़ी बेटी गौरी अपने ससुराल बनारस में थी। शाम का अँधेरा गहराने लगा था। सुबह से उनका मन भरा रहता है, पर शाम के अँधेरा फैलते ही उनका मन बेचैन होने लगता है। वे घर पहुँचे। सबकुछ खूब साफ-सुथरा था। कात्यायनी

बरांदे में मसाला पीस रही थी। सूरज डूब गया था, पर चाँद निकला नहीं था। पिता को देखते ही वह हँसी और पूछा, 'बाबू, क्या इसी समय को गोधूली वेला कहते हैं?'

'थोड़ा और पहले, अब तो शाम कुछ ज्यादा गहरा गई।' यह बेटी उनकी आँखों की तारा थी। 'कैसी सुंदर, निष्पाप और सरल स्वभाव की है मेरी कत्या।' उनका मन गर्व से भर गया।

'बाबू, फूलों की निगरानी और अच्छी तरह करनी होगी। चूहों और नेवलों ने कुछ पौधों की जड़ें खोद डालीं।'

'हाँ कत्या, उसका उपाय करना होगा। आज हम गुलाब के कुछ पौधे लाए हैं, फुलवारी में गीली मिट्टी पर रख दिए हैं। कल सुबह रोपना होगा।' वे सारे साल अपने फुलवारी के पौधों की देखभाल करते थे—निराई, गुड़ाई, फूलों की पैदावार। इन सबमें वह कात्यायनी को अपने करीब पाते। अपने विचारों में निमग्न वह अपने कमरे में चले गए।

'बाबू भी न, हजार तरह की बातें सोचते हैं।'

दूसरे दिन कात्यायनी की नींद जल्दी खुल गई। चिड़ियाँ रात रहते ही चहकना शुरू कर देती हैं। उनके चहचहाने की आवाज वह लेटे-लेटे सुनती रही। भैरवी राग की तरह धीरे-धीरे सवेरा हो रहा था। वह उस लड़के को याद करने लगी। दुबला-पतला शायरों जैसी शक्ल-सूरत। खोई-खोई-सी नीली आँखें। वह खुद पर हँस पड़ी। सादिया के साथ रहते-रहते वह भी शायरी सीख गई है। पिछले कई महीनों से वह कॉलेज के रास्ते में दिखता है। जब नहीं दिखता है तो उसकी आँखें उसे ढूँढ़ती हैं। उसका दिखना उसे क्यों अच्छा लगता है, यह उसकी समझ में नहीं आया, मगर न समझने पर भी वह उसकी कायल थी। लाल गोले के ऊपर आते ही दसों दिशाएँ रोशनी से भर गईं। वह 'ओम्' कहकर झटके से उठ गई। ओम् सृष्टि का प्रथम एवं अंतिम शब्द! पंडितजी मंदिर के पीछे फुलवारी सँभालने चले गए थे। जब कात्यायनी वहाँ पहुँची तो वह बगीचे के बीचो-बीच खड़े थे। वहाँ बेला, चमेली, जूही, चंपा सभी फूल थे। मैनाएँ इत्मीनान से तुलसी के पौधों के बीच विचरण कर रही थीं। पिता-पुत्री ने मिट्टी खाद डालकर गुलाब के पौधे लगाए।

स्नान के बाद 'ओम् नमः शिवाय' उच्चारण कर पंडितजी पूजा-अर्चना के लिए मंदिर चले गए। कात्यायनी भी शंकर स्तुति करने लगी। मंदिर के घंटे-घड़ियाल की आवाज सुनते ही बोली, 'बाबा रे! नौ बज गए। सादिया आती ही होगी।' अब तो वह भी उसे उस लड़के को लेकर चिढ़ाती है। उसकी छवि फिर आँखों के सामने आ गई।

रहीम खुदा का सौ-सौ दफा शुक्र कर रहा था। आज तीन-चार दिनों के बाद उस लड़की को देखा था। एक सतरंगी दुनिया में ख्वाब झिलमिल तैर रहे थे। सामने से आते हुए आलोक ने पूछा, 'कैसी रही ईद?'

'बहुत अच्छी।' एक भेद भरी मुसकान थी, उसके चेहरे पर।

'एक साथ आपकी दो-दो ईद हुईं क्या?'

'क्या सारी बात बताना जरूरी है?'

'हाँ जरूरी है, तुम मेरे दोस्त हो। तुम्हारे अच्छे-बुरे का ध्यान तो रखना ही पड़ेगा।'

'अब क्या बताएँ, जो बताया न जा सके।'

'ये प्राणों का व्याकुल होना बड़ा रहस्यजनक लगता है।'

'जो हम देखते हैं, वही दुनिया नहीं है। दुनिया वह है, जो मन में रहती है, ख्वाबों में रहती है। हमारे ख्वाबों की दुनिया बाहर की दुनिया से बहुत बड़ी है।'

'यार, तुम भी न! जाने वह लड़की कौन है, किसकी है? आशिकी में गलतफहमी का शिकार होना ताज्जुब की बात नहीं। आशिक बेपरवाह हो जाते हैं।'

'देखो दुश्मनों जैसी बात न करो।'

'ना-ना, हम तो आपकी दोस्ती चाहते हैं, दुश्मनी नहीं।'

'ये हुई न बात।' वह अचानक भावुक हो गया, 'अब्बू का तबादला होनेवाला है यहाँ से। किसी दिन भी ऑर्डर आ सकता है। लेकिन आलोक, हम जाना नहीं चाहते। यहाँ की जिंदगी मुझे बहुत प्यारी है।'

'चलो इसी बात पर कल पंकज टॉकीज चलते हैं। श्रीदेवी की फिल्म लगी है 'चाँदनी'।'

'कल तो नहीं जा सकूँगा। करीम चक में ईद का मेला लगता है। मेले-ठेले में जाना हमको जरा पसंद नहीं, लेकिन अम्मी के लिए कुछ मजहबी किताबें लेनी हैं, सो जाना पड़ेगा।'

आलोक के जाने के बाद उसने जोर से कहा, 'मैं आशिक हूँ।' उसे इस बात का भी ध्यान नहीं रहा कि कोई आसपास तो नहीं। खुदा का शुक्र, एक चिड़िया तक नहीं थी।

ईद का मेला था। बेतरह शोर, हजारों की भीड़। जहाँ तक नजर जाती, सिर्फ लोग ही लोग नजर आ रहे थे। कतार की कतार दुकानें थीं। रोशन चौकी पर शहनाई और बाँसुरी बज रही थी। दूसरी तरफ नजारा कुछ और था। बर्फ चढ़ी मिठाइयाँ, दही-बड़े, हाजमी जलजीरे के पानी का मटका, तली पकौड़ियाँ, कुल मिलाकर अजीब आलम था। कात्यायनी पहली बार ऐसे मेले में आई थी। सादिया के साथ उसे मजा भी खूब आ रहा था। सादिया की अम्मी और खाला इनका हर तरह से खयाल रखे हुए थीं। सादिया ने कहा, 'यहाँ बड़ी गरमी है, चलो शिमला चलते हैं, वहाँ इतनी गरमी नहीं।'

'क्यों? वहाँ क्या सूरज घूँघट काढ़ के निकलता है?' खाला ने पूछा।

'नहीं खाला! बुरका पहनकर।' कात्यायनी ने कहा।

इस पर सब हँस पड़ीं। वे एक चूड़ी की दुकान पर चूड़ियाँ खरीदने

लगीं। मोल-भाव करते समय वे सब एक साथ बोलने लगीं तो दुकानदार खफा हो गया। चूड़ियाँ लेकर, बटुआ दाबे कात्यायनी सबके साथ आगे बढ़ गई। एक फकीर एकतारा किस्म की चीज को बड़ी आसानी से बजा रहा था। तमाशबीनों की कमी नहीं थी। इस धक्का-मुक्की में उसके हाथ से छूटकर बटुआ गिर गया। उठाने के लिए झुकी तो किसी ने उसे धक्का मार दिया। जितनी बार झुकती, कोई-न-कोई धकेल देता। कुछ औरतों ने तो दो-चार बातें भी सुना दीं। डर के मारे वह इधर-उधर देखने लगी। उसे न सादिया नजर आई, न अम्मी, न खाला। उसने देखा, सादिया परेशान आँखों से उसे ढूँढ़ रही है। वह उस तरफ बढ़ी। लेकिन पीछे से लोगों का ऐसा रेला आया कि वह दोबारा खो गई। वह बिछुड़ गई है। समझ में आते ही उसकी सारी खुशी हवा हो गई। वह भीतर तक काँप उठी। उसका दिल जोर-जोर से धड़कने लगा।

वह भीड़ से छिटककर दूर एक पेड़ के नीचे जा खड़ी हुई। क्या करे अब? सादिया का इंतजार करना बेकार था। भला इस शोरगुल में वह उसे कैसे ढूँढ़ पाएगी? आतंक उसकी आँखों में उतर आया। कान के लवे सुलगने लगे, गला सूखने लगा और हथेलियाँ पसीज रही थीं। दिल धक-धक कर रहा था। कहीं कोई सवारी नहीं, रिक्शा नहीं, टेंपो नहीं, कुछ भी नहीं। साँसें रुकने लगीं। वह दम साधे खड़ी थी। उधर मेला अपने पूरे चढ़ाव पर था।

रहीम एक तरफ खड़ा होकर दुनिया देख रहा था। उसकी निगाह उस लड़की पर पड़ी। बदन पर दुपट्टा लपेटे मूर्ति बनी खड़ी थी। नसीब का खेल शायद इसी को कहते हैं। आज का दिन खुशनसीबी का दिन है। खुदा का सौ-सौ शुक्र, लेकिन वह अंदाजा नहीं लगा पाया कि यह यहाँ अकेली खड़ी क्या कर रही है? किसका इंतजार कर रही है? लंबे-लंबे डग भरता वह उसके पास आया। दोनों आमने-सामने। जो रोज खयालों-ख्वाबों में आती है, वह इतनी करीब थी।

कात्यायनी भी उसे आश्चर्य से देखती रही, पलक झपकना भूल गई, रोना भूल गई। यह तो वही लड़का है, जो इस वक्त आसमान से उतरा फरिश्ता लग रहा था। रहीम अभय देनेवाली हँसी हँसा, 'क्या हम कोई मदद कर सकते हैं?' उसकी आवाज बेहद मुलायम थी।

किसी जलती शिखा की तरह काँपती आवाज में कात्यायनी ने अपने खोने की आपबीती सुना डाली। उसका तनाव कम हो गया था और उसकी आँखें रहीम पर टिकी थीं। वह गरदन झुकाकर उसकी बातों का अर्थ समझने की कोशिश कर रहा था, किंतु चेहरे पर आश्चर्य का भाव नहीं आने दिया। यों उसके आस-पास की हवा में साँस लेना उसके जीवन को सार्थक कर रहा था।

'आप वापस लौटना चाहती हैं, लेकिन अभी रिक्शा मिलना मुश्किल है। आप चाहें तो हम आपके साथ पैदल जा सकते हैं। घंटे भर में देबूसराय पहुँच जाएँगे।' कहकर वह चुप हो गया, पर 'मैं हूँ न' वाले भाव में उसकी खलिश, उदारता एवं आत्मीयता टपक रही थी।

कात्यायनी के मन में सैकड़ों सवाल आ-जा रहे थे। उसने नीचे के होंठ को ऊपर के दाँत से दबा लिया। लड़कियों की छठी इंद्री इन मामलों में बहुत सजग होती है। वे भाँप जाती हैं कि कौन किस नीयत का है। 'हाँ' कहकर उसने बाईं तरफ सिर झुका दिया। उसका दिल धक से धड़ककर थम गया।

रहीम ने उसे आँखें उठाकर देखा, कहा कुछ नहीं। दोनों ऐसे चल पड़े जैसे पहले से कोई करार हो। रास्ते में राहगीरों की भीड़ थी, लेकिन शोरगुल के बीच भी एक खामोशी थी। कात्यायनी के भीतर भय की लहर उफनकर गुजर गई थी, 'हमको मेले में नहीं आना चाहिए था। अभी आप नहीं मिलते तो…' उसे आगे कुछ कहते न बना।

'क्यों नहीं आना चाहिए, मेला लगता ही है लोगों के लिए। पहले से कोई मिलने-बिछुड़ने को थोड़े ही जानता है।'

कात्यायनी के मन में सैकड़ों सवाल आ-जा रहे थे। उसने नीचे के होंठ को ऊपर के दाँत से दबा लिया। लड़कियों की छठी इंद्रीयाँ इन मामलों में बहुत सजग होती है। वे भाँप जाती हैं कि कौन किस नीयत का है। 'हाँ' कहकर उसने बाईं तरफ सिर झुका दिया। उसका दिल धक से धड़ककर थम गया।

'सादिया के कहने से हम यहाँ आए। ऊ तो अच्छा था कि हमारा ई तय था कि जो भी मेला में भुलाएगा, ऊ सीधे रिक्शा लेकर घर लौट जाएगा।' आवाज में हल्का सा कंपन था और मासूमियत भी।

रहीम उसके चेहरे को अच्छी तरह देखने लगा तो वह दूसरी तरफ देखने लगी। उसको भी इस तरह किसी लड़की के साथ चलने की आदत न थी। चलते-चलते वे मसजिद पार कर गए। अब जगह ऊबड़-खाबड़ थी, घास के बीच मिट्टी का टीला सा निकला था। चारों तरफ ऊँचे-ऊँचे पेड़, लतर, कँटीली बेलें थीं। उसी में एक पतला रास्ता चला गया था। पेड़ों के झुरमुट के बीच से रोशनी धरती पर आ रही थी। कहीं-कहीं से चिड़ियाँ बोल उठतीं। उनकी बातचीत का कोई सिलसिलेवार तरतीब न था। वे ज्यादातर चुप थे, लेकिन ऐसे में हवाएँ चुप नहीं रहतीं। उन पर वसंत का असर आ जाता है। ये ठंडी हवाएँ रह-रहकर कात्यायनी के बालों को उड़ा देतीं, जो बड़े रोमांटिक अंदाज से उसके गालों पर छा जाते और हवा मौसम की बाँसुरी बजाने लगती। आनंद के अतिरेक में रहीम का पूरा शरीर ऊर्जा से तरंगित था। उसको यह जन्नत का टुकड़ा लग रहा था। मन-ही-मन कितना सोच डाला। वह कहना चाहता था, 'कल कॉलेज से लौटते वक्त मजार के पास आपका इंतजार करूँगा, आप आइएगा।' पर उसमें ऐसा कुछ कहने की हिम्मत ही न थी। इनसान आसमान में चमकनेवाली बिजली से भी जल्दी सोचता है, मगर आँखों के सामने इनसान का काम दुनिया की चाल के मुताबिक चलता है।

'आप कल कॉलेज जाएँगी?'

'क्यों?' कहकर वह हँस दी।

इस हँसी ने उसे दुविधा में डाल दिया कि यह पास खींच रही है या

दूर ढकेल रही है। उसके चेहरे से समझ पाना मुश्किल था। अब पक्की सड़क आ गई थी। मन का हाल इजहार किए बगैर रहीम ने कहा, 'हम पहुँचने ही वाले हैं।'

कात्यायनी ने कृतज्ञता से उसे देखा तो उसका जैसे जीवन धन्य हो गया। किसी इनसान को खुश कर पाने से कितना सुकून महसूस होता है। उसने कुछ कहना चाहा, पर कुछ लोगों को आते हुए देखकर चुप हो गया। एक लड़की का इस तरह एक अजनबी के साथ चलना यहाँ के कायदे के खिलाफ था। दिन की रोशनी खत्म हो रही थी। उसके दिल में कोई लौ जल रही थी, मानो वह मन में बहुत कुछ सँजो रहा है। मंदिर में कीर्तन हो रहा था। आवाज सड़क तक आ रही थी। कात्यायनी मंदिर के पिछले द्वार पर ठहर गई, 'आ गया मेरा घर, आज आप नहीं मिलते तो भगवान् जाने क्या होता!'

उसने धड़कते दिल से पूछा, 'आप कहाँ रहती हैं।'

'यहीं, मेरे पिताजी इसी मंदिर के पुजारी हैं। कात्यायनी नाम है मेरा और आपका?' कहकर हँस दी।

वह सन्न रह गया। उसके हँसने का उस पर कोई असर नहीं हुआ। 'तो क्या···तो क्या ये हिंदू है।' अब तक वह उसे मुसलमान माने बैठा था। तीखे नाक-नक्श से तो यह एकदम मुलतानी लगती है। वह उससे कितना कुछ पूछना चाहता था, पर सारी जिज्ञासाएँ बिखरी पड़ी थीं। उसके चेहरे को देख कात्यायनी को लगा, कहीं कुछ गलत तो नहीं कह दिया, जिससे उसे ठेस पहुँची हो। वह जाते-जाते रुक गई, उसे देखा, फिर एक शब्द बोले बगैर आगे जाकर गायब हो गई। शाम होने के बावजूद रहीम के माथे पर पसीने की बूँदें चुहचुहा आईं। इस तकलीफ को वही समझ सकता है, जो कोई ख्वाब पालता है। कितनी ही देर तक वह इस भाव में था, उसे याद नहीं। ठहरा वक्त फड़फड़ा रहा था। बंद रह गए कबूतर की तरह।

कात्यायनी जब घर लौटी तो उसका मन भरा-भरा था, लेकिन पंडितजी का मन बेकाबू हो रहा था, सब्र का बाँध टूट रहा था। बेटी को देखते ही उसकी दोनों हथेलियाँ इस तरह पकड़ लीं, मानो वह अभी-अभी पानी में डूबकर बाहर निकली हो। वे आतंकित भाव से बोले, 'अब तुम मीना बाजार मत जाना, हमको बड़ी चिंता हो रही थी।'

घर पहुँचकर कात्यायनी का डर खत्म हो गया था, 'आप सोचते बहुत हैं बाबू!' फिर एक अनजाने सुख से बोली, 'ठीक है, अब से नहीं जाएँगे।' मेले में खोने की बात उसने जान-बूझकर नहीं बताई। इससे बाबू और परेशान हो जाते।

पंडितजी का चेहरा स्वाभाविक हो गया। अँधेरे में उगा चाँद बाग पर धुँधला प्रकाश बिखेर रहा था। वह धीमे-धीमे मुसकरा रही थी। रहीम के साथ बिताए पल उसकी आँखों के सामने उग रहे थे।

घर पहुँचकर भी रहीम के सीने में एक अनजानी सी ऐंठन हो रही थी। एक भीषण अंतर्द्वंद्व ने उसे चक्रवात की तरह घेर लिया था। दिमाग में जैसे अदालत लगी हो। किसी के मुँह पर मजहब लिखा होता है क्या? कोई हिसाब लगाकर इश्क करता है क्या? प्यार का कोई मजहब होता है क्या? हिंदू और मुसलमान के बीच सूफी प्रेम बाँटते हैं, वे भेदभाव नहीं करते। किसी धार्मिक गुरु ने कहा है—कुरान की बहुत सी बातें हिंदुओं के वेद में मिल जाएँगी। हिंदुओं का कहना है—भगवान् प्रेम से वश में आते हैं, डर से नहीं। इस बात को मुसलमान भी मानते हैं। प्यार करना खुदा की देन है। उसकी बुद्धि धर्म और प्रेम के बीच पड़कर झूल रही थी। 'क्या उसे भगाकर कहीं ले जाऊँ?'

'कहाँ जाओगे भागकर?'

'इतने बड़े हिंदुस्तान में हमें जगह नहीं मिलेगी क्या?'

'तुम पहली औलाद हो, अब्बू ने न जाने कितने ख्वाब देखे हैं।'

उसकी चेतना रोकती, उप चेतना ठेलती। उसे बोधगम्य शब्दों में उत्तर नहीं मिल रहा था। सब पहेली जैसा लग रहा था।

मानसिक थकान से उसकी आँखें मुँदती जा रही थीं। चारों तरफ बत्तियाँ बुझ गई थीं। रात में चरनेवाले पक्षी की कुब-कुब सुनाई दे रही थी। अँधेरे में जीवन प्रवाहित हो रहा था, अँधेरे में कायनात की रोशनी दिखाई दे रही थी। इसी अँधेरे में उसे पंडित रघुनाथ पांडे की याद आई।

सुबह उठा तो अम्मी ने खबर दी, 'तुम्हारे अब्बू का तबादला पटना हो गया है। चलो, फिर से बाँधो बोरिया-बिस्तर!' उनकी आवाज तेज थी, पर आँखों में अफसोस था। जब वह घर से निकला, उसके कदम खुद-ब-खुद मंदिर की ओर बढ़ने लगे। कुछ ही देर में वह पंडितजी के सामने था। वे सुबह-सुबह ठंडी हवा का आनंद ले रहे थे। उनकी दृष्टि रहीम पर पड़ी। कुछ पल खामोश रहने के बाद रहीम ने कहा, 'आप से अपनी हाथ की रेखा पढ़वाने आए हैं।'

पंडितजी ने उसकी तरफ सीधी आँखों से देखा, उसका आंतरिक भाव बलात् प्रकट हो रहा था मानो मन में आँधी चल रही हो, लेकिन आँखों में सूरज की गरमाहट थी। पंडित ऐसे कहने पर हस्तरेखा नहीं पढ़ते थे, पर इस भोलेपन युक्त म्लान चेहरे को देखकर मना न कर सके। वे वहीं एक चौकी पर बैठ गए। रहीम ने हाथ बढ़ाते हुए कहा, 'देखिए, जरा मेरा नसीब क्या कहता है?'

अपने दोनों हाथों से पंडितजी ने उसका हाथ पकड़ लिया। गोरी-चिट्टी हथेली पर लाल आभा के बीच कुछ दृढ रेखाएँ थीं। वह कुछ देर पढ़ने के भाव में डूबे रहे, फिर बोले, 'इतनी प्रबल और भाग्यशाली रेखाएँ बहुत कम लोगों की होती हैं, सफलता सदा तुम्हारा द्वार खोलेगी।'

इसका रहीम पर कोई असर नहीं पड़ा। उसके सामने कात्यायनी का चेहरा उभर आया, 'मेरा एक बेहद निजी सवाल है, वह हम किसी से नहीं कह सकते।'

'ज्यों अत्यंत निजी है तो उसका गुप्त रहना ही अच्छा। उसे प्रकट करना ठीक नहीं।'

'किसी बात को लेकर मेरे भीतर लड़ाई छिड़ गई है। एक मन 'हाँ' कहता है तो दूसरा मन 'न' क्यों कहता है, यह मैं जानना चाहता हूँ।'

'जब मनुष्य अपने भीतर युद्ध करने लगता है, तब वह अवश्य ही किसी योग्य होता है। जीवन कौतूहल से भरा है। आदमी जानना चाहता है और यह जानने की इच्छा स्वाभाविक है।'

'मेरी एक चाहत है, हम उसकी याद में दिन-रात खोए रहते हैं।'

'तुम मोहग्रस्त हो गए हो। मोहग्रस्त होने से विचार मंद पड़ जाते हैं।'

'हम क्या करें? हम तो चाहत के आसमान तक पहुँच गए हैं।'

'आसमान तक पहुँच गए हो, वहाँ कोई दिशा नहीं रहती। सब तरफ आसमान ही आसमान है—सब तरफ रास्ता है।'

'हम आजाद हैं, हममें ताकत भी है, पर कुछ ऐसा है, जो हमको उसे पाने से रोकता है।'

'आजादी और ताकत अपने साथ जिम्मेदारी लाती है। हमें अपनी जिम्मेदारियों को खुद से ज्यादा गंभीरता से लेना चाहिए। सबका हित सबसे बड़ी बात है।'

पंडितजी की बातों को वह समझ रहा था। पर दिल था कि मानता ही नहीं था, 'हमको लगता है, हम उसे जीत सकते हैं।'

'तुमको लगता है कि तुम उसे जीत सकते हो, किंतु उसके पक्ष को भी जानो। जो किसी विषय में केवल अपना ही पक्ष जानता है, वह उस विषय में बहुत कम जानता है। किसी बात को यों ही मानकर मत चलें। भली-भाँति विचार करो। दूसरों को जीतने से अच्छा है, पहले स्वयं को जीतो।' पंडितजी ऐसे बोल रहे थे जैसे कोई गुरु अपने शिष्य को जीवन का गूढ रहस्य बता रहा हो।

'कुछ ही दिनों में यह शहर हम से छूट जाएगा, मेरे दोस्त छूट जाएँगे, मेरा···'

'जीवन चलने का नाम है। प्रकृति भी सदैव क्रियाशील है। अनंत जीवन, अनंत प्रवाह। बुद्धिमत्ता से धीरे चलो। भरी नदी शांत बहती है। उनके पूजा-अर्चना का समय हो गया था, 'ईश्वर तुम पर कृपा करें।' कहकर वे उठ खड़े हुए।

रहीम ने विनयपूर्वक सिर झुकाया और बिना कुछ कहे चला गया। कल से जो द्वंद्व मन को मथे दे रहा था, वही पंडितजी की रूहानी नसीहत से कुछ हद तक कम हो गया। घर आया तो अम्मी को परेशान देखा। अब्बू अपने ही अंदाज में उनको समझा रहे थे, 'जो दूसरे के साथ मनमानी न करे, वही सच्चा मुसलमान है रहीम की अम्मी। आपको यह शहर छोड़ने का गम है, अरे भाई, सुबह को देखते ही लोग शाम को भूल जाते हैं।'

'इस शहर के बिना हमारी जिंदगी बेकार हो जाएगी। यहीं···'

'यह तो आशनाई हो गई न! कोई जगह या कोई भी आदमी को बेहिसाब चाहने से खराबी पैदा होती है। एक शहर, एक दोस्त छोड़ोगी, हजार शहर, हजार दोस्त तुम्हारे खातिर में मिलेंगे। तुम अकेली नहीं रहोगी। इस दुनिया में हम एक मुसाफिर की तरह आए हैं, सैर करके लौट जाना है। यह मेरा नहीं है, जो ऐसा मानते हैं, वही अक्लमंद होते हैं।'

रहीम मन-ही-मन नियत को बाँधकर खुदा को याद करने लगा। दुनिया का खेल ही ऐसा है कि कोई भी चीज ठहरी नहीं रहती। समय किसके लिए रुकता है, जो उसके लिए रुकता—एक जगह से दूसरी जगह, एक जिंदगी से दूसरी जिंदगी···दिन, मास, ऋतुएँ बदलती रहीं। कात्यायनी का तो नामोनिशान मिट गया था, अगर इस तरह आज···।

पहले वह कात्यायनी को आँख उठाकर देखने से कतरा रहा था। लेकिन देखने लगा तो देखता ही रह गया। आँखें न हटा सका। उसका चेहरा सुख से नहाया हुआ लग रहा था। उसका पति कहीं चला गया था। वह अकेली थी, बेखबर, वहाँ के शोर-शराबे से उसे कोई फर्क नहीं पड़ रहा था। रहीम को जानने की इच्छा हुई कि क्या वे दिन, वह मेला, मेले से लौटना उसे याद है? आज इस रहीम में उस रहीम को ढूँढ़ पाना मुश्किल है। दाढ़ी-मूँछ से ढका उसका चेहरा भले न पहचाना जा सके, पर उसकी आवाज को पहचाननेवाले पहचान ही सकते हैं। वह उसकी तरफ बढ़ने लगा। जब तक वह पहुँचता, उसका पति आ गया, ''हाँ बताओ, तुम कुछ कह रही थीं?''

''हाँ'', अपनी पुरानी आदत के मुताबिक उसने बाईं ओर से झुककर कुछ कहा।

पति हँस पड़ा, ''एक ही बात को कितनी बार कहोगी?''

धड़धड़ाती गाड़ी स्टेशन पर आ पहुँची। हलचल मच गई। सवारियाँ चढ़ने के लिए दौड़ लगाने लगीं। हर तरफ से निकलते शब्दों का मिश्रण एक शोर बनकर उभरने लगा। कात्यायनी भी खड़ी हुई। रहीम पर उसकी दृष्टि पड़ी। असमंजस में उसे देखने लगी। आँखों में लहराया असमंजस पल भर में खो गया। उसके चेहरे पर स्वत: एक मुसकान थिरकी। वह भी मुसकरा दिया। विचार-शून्य मुसकराहट। उम्र के साथ भावनाओं को नियंत्रण में रखना साध लिया था। वे एक-दूसरे को देख रहे थे, यह देखना उस देखने से कितना अलग था। दोनों में से कोई अंदाजा नहीं लगा पा रहा था कि क्या कहना चाहिए। समय स्तंभित समुद्र की तरह थम गया था। वक्त रंग बदलता है, जो नहीं बदलता, वह भी क्या वैसा है, जो पहले था? इतनी भावुकता में भी कात्यायनी का ध्यान पति की ओर था। वह मुड़ी और पति के पीछे चल पड़ी। रहीम की नजर उसकी पीठ पर जम गई। वह उल्का की तरह जैसे अचानक आई थी, वैसे ही चली गई।

अपना डब्बा खोजकर वह भी अपनी जगह आ बैठा। एक सीटी देकर गाड़ी चल दी। उसकी दुनिया में सबकुछ पहले की तरह होने लगा। लेकिन हवाएँ तो चुप नहीं रहतीं। स्वप्न, स्मृति, यथार्थ की भूल-भूलैया में उसे भटकाने लगीं। गाड़ी की रफ्तार बढ़ती जा रही थी, बाकी सब छूटता जा रहा था।

२०४, स्टर्लिंग अपार्टमेंट, बी ६ बी,
पृथ्वीराज रोड, सी-स्कीम, जयपुर-३०२००१,
दूरभाष : ०९७१४८५८९६०

राष्ट्रीय चेतना के उद्घोषक उदय प्रताप सिंह

● राहुल

समकालीन हिंदी कविता के ऊर्जस्वी कवि उदय प्रताप सिंह के व्यक्तित्व में साहित्य-प्रेम और देश-प्रेम का अत्यंत सुंदर समन्वय है। शिक्षा के क्षेत्र में भी उनकी प्रसिद्धि अभूतपूर्व है। राजनीति के क्षेत्र में अपनी सज्जनता और सद्भाव के कारण यदि किसी ने स्थायी महत्त्व प्राप्त किया है तो उदय प्रताप सिंह ही ने। कई संस्थाओं से जुड़े एवं मानद सदस्य के रूप में उनकी भूमिका उल्लेखनीय है। उनका सच्चा परिचय उनकी रचनाओं में उपलब्ध है। वे अपनी कविताओं के द्वारा मंगलकामना के साथ राष्ट्रीय चेतना का उद्बोधन करते हैं। अपने ओजस्वी लेखन और वक्तव्य द्वारा देश-विदेश के श्रोताओं को सर्वाधिक प्रभावित किया है। उनकी कविताओं में अंत:स्थूल राष्ट्रीय भावना अछूती रही है।

(स्व. श्री उदय प्रताप सिंह)

राष्ट्रीयता की प्रतिस्थापना के लिए राष्ट्र की महिमा का गायन आवश्यक है। वैसे भी राष्ट्रप्रेम की भावना सदैव से देशवासियों में रही है, किंतु राष्ट्रवाद अपने वर्तमान अर्थ में आधुनिक युग में ही विकसित हुआ। विशिष्ट जनसमूह में, सचेतन रूप से एक बने रहने की दुर्दमनीय आकांक्षा ही राष्ट्रीयता की मूलवर्ती भावना है, जिसका विकास राष्ट्र और उसकी संस्कृति के प्रति रागाश्रित एकांत निष्ठा में होता है। राष्ट्रीय परंपराओं का गौरव-गान और राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानने के साथ एक विशेष भूभाग के भौगोलिक रूप के प्रति संपृक्ति एवं भक्ति राष्ट्रवाद के व्यावहारिक रूप हैं। राष्ट्रवाद आधुनिक व्यक्ति का धर्म भी है। इसलिए कहा गया है कि राष्ट्रधर्म सर्वोपरि धर्म है। महात्मा गांधी ने कहा है, 'राष्ट्रवाद में कोई बुराई नहीं, बुराई तो संकीर्णता, स्वार्थपरता और अलगाव में है, जो कि आधुनिक राष्ट्रों के कलंक हैं।'

आधुनिक हिंदी साहित्य में भारतेंदु काल से राष्ट्रीय भावना का उदय माना जाता है। भारतेंदुजी ने अपने नाटकों और कविताओं में पराधीन भारतीयों के मन में राष्ट्रीय चेतना जाग्रत् करने की भरपूर कोशिश की। उनके साहित्य में राष्ट्रीय भावनाओं के विविध स्वर मिलते हैं। 'भारत दुर्दशा' नाट्य-कृति देशप्रेम की एक महत्त्वपूर्ण रचना है—

रोअहुँ अब मिलि के आवहु भाई।
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई॥

भारतेंदुजी देशप्रेमी होने के साथ-साथ राजभक्त कवि भी थे, किंतु राजभक्ति का आवरण ओढ़े उन राजभक्त कवियों से नहीं, जिन्होंने देशभक्ति की भावना को राजभक्ति से ढक रखा था। राष्ट्रराग की प्रबल चेतना हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त और जयशंकर प्रसाद में सर्वाधिक दिखाई देती है। प्रसादजी के नाटकों में राष्ट्रप्रेम का ऊर्जस्वित स्वर है। इसी प्रकार माखनलाल चतुर्वेदी की कविता 'पुष्प की चाह' विश्व की महान् कविताओं में परिगणित की जाती है—

चाह नहीं, मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ,
चाह नहीं, प्रेमी माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ,
चाह नहीं, सम्राटों के शव पर हे हरि! डाला जाऊँ,
चाह नहीं, देवों के सिर पर चढ़ूँ, भाग्य पर इठलाऊँ,
मुझे तोड़ लेना बन-माली उस पथ पर देना तुम फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जाएँ वीर अनेक।

राष्ट्रभक्त महान् कवियों की इसी शृंखला में राष्ट्र के मूर्धन्य कवि उदय प्रताप सिंह का नाम जुड़ता है, जिन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से समकालीन जन-मानस में राष्ट्रप्रेम का भव्य भाव जाग्रत् करने की अद्भुत ऊर्जा पैदा की है। उनकी कविताओं में गांधीवादी सोच के साथ दीन-दुखियों और दलितों-पिछड़ों की मूक वेदना का इतना गहरा प्रभाव है कि वह उन्हें चैन नहीं देता। इसलिए 'ये आनाकानी नहीं चलेगी' शीर्षक कविता में राजनीतिक बागबानी का गाढ़ा रंग उभरता है—

चमन में काँटों की बदतमीजी का हाल ये है कुछ न पूछो
हमारी मानो तुम्हारे ढंग से ये बागवानी नहीं चलेगी
किसी की धरती, किसी की खेती,
किसी की मेहनत, फसल किसी की
जो बाबाआदम से चल रही है, वो बेईमानी नहीं चलेगी।

उदय प्रतापजी की कविताएँ जीवन के अति निकट हैं, उनमें जन-जन के प्रति गहरी संवेदना है। समकालीन समाज में किस तरह एक दूसरे को बाँटो और राज करो की नीति फल-फूल रही है। इस विघटनकारी नीति-रीति पर भी कवि ने तंज कसा है। कवि को लगता है कि समाज की एकजुटता ही हमारी राष्ट्रीय शक्ति का आधार है, क्योंकि एकता से ही हमारा अस्तित्व कायम रहता है, विभाजन से हमारा पतन होता है। इसकी मुखर अभिव्यक्ति कवि ने प्रतीकात्मक ढंग से अपनी 'पत्तियाँ' शीर्षक कविता में की है—

प्यार से देखो जवाँ पेड़ों की हिलती पत्तियाँ
किस कदर आपस में मिलने को मचलती पत्तियाँ,
असलियत में क्या है सुख-दु:ख में दिखता वसंत
जितनी झर जाती हैं, उतनी ही निकलतीं पत्तियाँ

लाल कोंपल, हरा यौवन, पीली पतझर के करीब
रंग बदलती उम्र के संग रंग बदलती पत्तियाँ।

इन पंक्तियों में प्रकृति-सापेक्ष्य संदर्भों में सौंदर्य-बिंब की मार्मिक अभिव्यक्ति है। मानवीयकरण के साथ रंगों की चित्रात्मकता, आत्मपरक, अंतर्मुखी दृष्टि को विश्लेषित करती है। दृष्टि में एक उत्सुकता और गहरी मुग्धता तथा सौंदर्य-सृष्टि का निर्व्याज भाव जीवन की दार्शनिक प्रतिपत्तियों से परिपुष्टि है। अंग्रेजी कवि शैली के समान उनका प्रकृति-प्रेम 'आदर्श प्रेम' है। शैली ने भी 'द सेंसेटिव प्लांट' कविता में वसंत ऋतु को प्रेम का साक्षात् अवतार कहा है। परंतु उदय प्रताप का कवि वसंत को एक नए भाव-बोध में बिंबित करता हुआ सुख-दु:ख में दिखाता है। यह व्यष्टि से समष्टिगत हो जाना है।

वस्तुत: राष्ट्रीय चेतना का केंद्रबिंदु है—एकता की भावना। लक्ष्य की एकता से बढ़कर और क्या वस्तु हो सकती है, जो राष्ट्रवादियों को एक सूत्र में बाँध दे? अपनी संस्कृति के विकृत होते रूप को देखकर कवि चिंतित है। उसे लगता है कि वह संस्कृति, जिसके कारण भारत की विश्व में अलग पहचान बनी। वह संस्कृति जो हमारे जीवन को समृद्ध, परिनिष्ठित और सुसंस्कृत बताती है, जिसे हम सभ्यता की आत्मा कहते हैं, वह आज पश्चिमी प्रभाव से नग्नता की ओर बढ़ रही है। युवा पीढ़ी को अंगीकार नहीं, क्योंकि अर्थोपार्जन की अंधी दौड़ में अपनी जातीय, परिवेशीय महनीयता को तिलांजलि देकर अकेला भाग रहा है। वह अपने प्राणों की बाजी लगाने को भी तैयार है। अपना परिवार, प्रेम, एकता, धर्म, रीति-रिवाज और सारे संबंध-सरोकार छोड़कर। उनकी राष्ट्रीय कविताओं में सामाजिक बोध, नवनिर्माण और जाति धर्म से ऊपर उठकर राष्ट्रीय चेतना का आह्वान और शोषितों, दीन-दलितों के प्रति गहरी संवेदना और उद्धार की उत्कट भावना है। अपनी राष्ट्रीय भाषा के प्रति भी कवि की भावना महान् चिंतकों की सी है, क्योंकि हिंदी हमारी भाषा ही नहीं संस्कृति है, पहचान भी है। यह एकता का सबसे मजबूत सूत्र है। इसी प्रकरण में 'किधर देख रहे' कविता-पंक्तियाँ कितनी प्रभावपूर्ण हैं—

मजहब का सभ्यता पर असर देख रहे हैं,
किस ओर लगी आग, किधर देख रहे हैं,

सड़कों पर जो बरपा है, कहर देख रहे हैं,
मरघट की तरह जलता शहर देख रहे हैं।
आँधी से अंधकार में जकड़े हुए दीये,
जो शाम के परदे में सहर देख रहे हैं
पहले घृणा के बीज जो गफलत में बो दिए
अंजाम क्या है अहले नजर देख रहे हैं।

संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था इतनी संक्रमणशील और विषाक्त हो गई है कि व्यक्ति-व्यक्ति के संबंध संदेहास्पद हो गए हैं। ऐसे रागात्मक चेतनाशून्य परिवेश की विसंगतियों को कवि संस्कृति से जोड़कर देख रहा है। भारतीय संस्कृति की प्रगति का अर्थ मात्र पुनरुत्थान नहीं हो सकता। प्राचीन भारत को दर्शन, साहित्य आदि क्षेत्रों में समुन्नत वर्णित करने का अर्थ होता है—दार्शनिक चिंतन और साहित्य की सृष्टि एवं उनका अध्ययन। ये उस काल के चिंतकों की दिनचर्या थी। आज हमारी संस्कृति उन्नति के स्थान पर विकृत स्वरूप अधिक दिखाई देती है। हम अपनी जड़-जमीन से कटते जा रहे हैं। यही कारण है कि हमारे जीवन-समाज-परिवेश में विघटन की स्थितियाँ पैदा हो रही हैं। आज मनुष्य स्वतंत्र होते हुए भी परतंत्र है। उसकी स्वतंत्रता का कोई मूल्य नहीं है। तन और मन दोनों दृष्टियों से वह कुंठा और निराशा से ग्रस्त है। समाज और व्यक्ति के संबंधों पर प्रश्नचिह्न लगा हुआ है। इस विषम वातावरण में व्यक्ति-स्वातंत्र्य भी कितना हास्यास्पद है। 'बैसाखी पर चलते लोग' शीर्षक कविता की पंक्तियाँ ध्यातव्य हैं—

इन ढालों के दुर्गम पथ पर देखे रोज फिसलते लोग
फिर कैसे शिखरों पर पहुँचे बैसाखी पर चलते लोग,
हम क्या जाने धर्म की बातें जाकर उनसे पूछ न लो
हर मौसम में पोशाकों-सा जो ईमान बदलते लोग।

आज धर्म नाम की मनोवृत्ति का लोप हो रहा है। धर्म के वास्तविक रूप का तिरोभाव हो गया है। पत्थर और पोथियों में ही हमारा धर्म सिमट गया है, जबकि मनुष्य के सबसे महत्त्वपूर्ण व्यापक एवं विश्वास का नाम है—धर्म। धर्महीन मनुष्य समाज का जीवन बे पेंदे के लोटे की तरह अस्थिर और उपेक्षापूर्ण होता है। धर्म की धुरी मानवता की वह धारणा है, जिसे आध्यात्मिकता कहा जाता है।...सरलता से यों समझें कि धर्म वह मंदिर है, जिसमें हमेशा आदर्शों के दीपक जलते हैं, जिनके प्रकाश से हम मन का संतोष, आत्मा, परमात्मा का साक्षात्कार और जीवन के सुंदर लक्ष्य का स्वरूप देखते हैं। आदिकाल से ही मनुष्य ने धर्म का अनुसरण किया है, प्रकृति के वैभव और बल पर नतमस्तक हुआ है, उस पर रीझा है, उसे भाँति-भाँति से पूजा है। उदय प्रताप सिंह के कवि ने धर्म के असली अर्थ को प्रतिष्ठापित करने का प्रयास किया है। उनके लिए धर्म एकता का संबल है, मानवता का रक्षक है और पावनता का प्रतीक है।

संपूर्ण साहित्यकार के प्राणों में धर्म के सूक्ष्म संदेशों का मधुर अभिव्यंजन ही अभिव्यंजन है। यदि साहित्य न होता तो धर्म का स्वरूप सीमित, शुष्क और अग्राह्य होता और धर्म के तत्त्व साहित्य को प्रदान न

जाने-माने आलोचक-कवि। 'प्रजातंत्र, कहीं अंत नहीं', 'जंगल होता शहर', 'महानायक सुभाष', (कविता-संग्रह), 'युगांत' (प्रबंध काव्य) चर्चित; संपादित कृतियों में 'बीसवीं सदी : हिंदी के मानक निबंध (४ भाग)', 'बीसवीं सदी : हिंदी के मानक निबंध (२ भाग), (आलोचना) 'विपक्ष का कवि : धूमिल', 'गिरिजा कुमार माथुर', काव्य दृष्टि और 'अभियोजना शमशेर और उनकी कविता', दर्जन भर बाल-साहित्य और राजभाषा हिंदी से संबंधित पुस्तकें भी। हिंदी अकादेमी एवं अन्य साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाओं से सम्मान प्राप्त।

होते तो उसमें मानव के मूल भावों का सौंदर्य उपलब्ध न होता। धर्म में सबसे बड़ी महत्ता यह छिपी हुई है कि उसमें हमारे जीवन के महान् बिंब सप्राण सुसज्जित हैं। राम-कृष्ण बुद्ध हमारी कल्पना में इसलिए सत्य हैं कि वे हमारे धर्म के दर्पण में दिख जाते हैं। तभी तो वाल्मीकि ने कहा है, 'धर्मो हि परमो लोके धर्म सत्यं प्रतिष्ठितम्' अर्थात् संसार में धर्म ही सबसे श्रेष्ठ है। धर्म में ही सत्य की प्रतिष्ठा है।

उदय प्रताप सिंह ने अपनी कविताओं में धर्म की महत्ता और समाज में अधार्मिक और असंयमित भाव-विकारवालों की मन:स्थिति तथा सोच की निंदा की है। अनंत काल से भारतीय समाज में धर्म का प्रतिमान सर्वोच्च रहा है। इसी के बल पर भारत विश्व का सक्षम गर्वोन्नत उपदेष्टा भी बना रहा है। डॉ. राधाकृष्णन का यह कथन गौरतलब है, 'धर्म की शक्ति ही अनेक जीवन की शक्ति है, धर्म की दृष्टि ही जीवन की दृष्टि है।' किंतु आज धर्म का स्वरूप भी स्वार्थपूर्ण वृत्ति के कारण खर्वित हो गया है। धर्म के कारण ही व्यक्ति संप्रदायों में बँट गया है। हिंदू, मुसलिम, सिख, ईसाई, पादरी-यहूदी आदि संप्रदायों के अपने-अपने धड़े हैं, जो अपने अस्तित्व के लिए परस्पर लड़-झगड़ रहे हैं। कवि के लिए यह न केवल शोचनीय है, अपितु तिरस्करणीय भी है। 'भोले-भाले लोग' कविता-पक्तियाँ समसामयिक धार्मिक बिखराव और संप्रदायिक टकराव की कितनी सटीक व्यंजना करती हैं—

जाने क्या जादू करते हैं, मंदिर-मसजिद वाले लोग,
नफरत को मजहब समझे हैं जग के भोले-भाले लोग।
आओ हम सब मिलकर दस्तक दें बहरे मयखाने पर,
ऐसे कब तक लिए रहेंगे, आखिर खाली प्याले लोग।

इनकी कविताओं में कहीं-कहीं ऐतिहासिक परंपरा और न्याय, अहिंसा का भी बोध होता है। राष्ट्र के प्रति दायित्व का गौरव या राष्ट्रीय एकता, ये सभी अनुभूतियाँ राष्ट्रप्रेम पर ही आधारित हैं। चूँकि उदय प्रताप सिंह एक समाजचेता-संवेदनशील कवि और दार्शनिक चिंतक हैं। दर्शन सोचना सिखाता है, साहित्य कहना और न केवल कहना, बल्कि उसे अपना बनाना भी सिखाता है। इसलिए साहित्य को समष्टि का अधिक ध्यान रहता है। व्यक्तिगत साधना को भी सामूहिक साधना में बदल देनेवाला अस्त्र साहित्य ही है। इसलिए साहित्य को समाज का अस्त्र कहा गया है।

यह वह महासागर है, जहाँ सभी जाति- धर्म-मजहब के लोग एक होकर प्रेम और सौहार्द भाव से रह सकें, जहाँ सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया की मंगल कामना हो। तभी नए भारत का निर्माण होगा। डॉ. लोहिया ने अपने लेख 'वर्ग संगठन जाति उन्मूलन का हथियार' में लिखा है, 'जाति-व्यवस्था के उन्मूलन के लिए हमें सामाजिक-समता पर आधारित दृष्टिकोण अपनाना होगा।'

समकालीन जीवन-समाज में व्याप्त अवसरवादिता और परस्पर धोखा देने की प्रवृत्ति, छल-छद्म की घृणित-घिनौनी मनोवृत्ति, कुंठा, कुत्सा के प्रति भी कवि की दृष्टि बड़ी साफ है। आज असहाय व्यक्ति निर्धनता की चक्की में पिसता चला जा रहा है। आर्थिक विवशता और विषमता का यह दर्दीला सीन उदय प्रतापजी की कविताओं में बार-बार उभरता है। ऐसी विवश और असहाय वर्ग की दयनीय दशा का वर्णन करते हुए मानो वह अज्ञेयजी की तरह आंतरिक मनोभाव को रूपायित करते हैं—

जाने यह विधाता को खबर है कि नहीं है,
दुनिया में गरीबों का उदर है कि नहीं है।
साँपों में आजकल ये मसअला जेरे बहस है,
इंसाँ में हमसे ज्यादा जहर है कि नहीं है।
हर ओर अँधेरों में सदा गूँज रही है
इस रात की किस्मत में सहर है कि नहीं है।

संसद् के देवताओ ये गाँव को बताओ,
जो बात उधर है वो इधर है कि नहीं है।
महलों के दरीचों से खड़े देख रहे हैं,
फुटपाथ में कविता का गुजर है कि नहीं है।

कवि बाहरी-भीतरी परिवेश और जन-जीवन की स्थिति से कभी प्रभावित होता है तो कभी उदासीन। कविता की उक्त पंक्तियों में जहाँ आम-आदमी, जिसे कविवर हरिवंशराय बच्चन ने 'लघु मानव' और विजय देव नारायण साही ने 'लिटिल मैन' कहा है, उसके दु:ख-दर्द के प्रति उदय प्रताप सिंह के कवि-मन में भी गहरी संवेदना है। वह उसके बुभुक्षित जीवन की तकलीफों को मिटाकर सुखमय बनाना चाहते हैं, ताकि सर्वत्र समता-समानता का संसार बने, समरसता का भाव जगे। जन-जीवन तथा नवमानववादी मंगल ध्वनि इन गीत पंक्तियों की विशेषता है। अभिव्यक्ति की दृष्टि से इनके गीत बोझिल नहीं हैं। नवयुगीन मानववादी एवं भौतिक, अध्यात्मवादी चिंता से प्रसूत हैं। सर्वत्र भू-जनवादी चिंता प्रबल है। यही सच्चा समाजवादी चिंतन भी है। इन्होंने राष्ट्र के निर्माण में व्यक्ति के दायित्व को प्रमुखता दी है, क्योंकि राष्ट्रवाद इनके लिए एक जीवंत मूल्य रहा है।

सर्जना के सामाजिक संदर्भ में जहाँ माँ-बाप गाँव में अकेले रह जाते हैं और बेटे विदेश में सुख भोग में लिप्त हैं। मानवीय करुणा के महत मूल्यों से मंडित कवि की ये पंक्तियाँ रेखांकनीय हैं, 'उदास चेहरे की झुर्रियों को बरसती आँखें सुना रही थीं'—अपनों से उपेक्षा, दंश का भाव मन को गमगीन बना देता है। कवि मन में सामाजिक व्यवहार, अत्याचार देखकर जो तीव्र वेदना जगती है, उसकी व्यंजना इन पंक्तियों में मिलती है, 'जरा से प्यार को यूँ भी हर धूलि तरसती है', कभी दयनीय हालत देखकर द्रवीभूत हो जाता है। इनकी कई कविताओं में वेदनाजनक दृश्यों को साफ देखा जा सकता है। वे आवेश के साथ कहीं-कहीं चित्र अंकित करते हैं। एक भाव, 'तुम होश मंदी के ऊँचे दावे किसी मुनासिब जगह पर करते।' ये भी कि प्रेम का महासागर बनाने में एहसास सबका है। यह वह महासागर है, जहाँ सभी जाति-धर्म-मजहब के लोग एक होकर प्रेम और सौहार्द भाव से रह सकें, जहाँ

सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया की मंगल कामना हो। तभी नए भारत का निर्माण होगा। डॉ. लोहिया ने अपने लेख 'वर्ग संगठन जाति उन्मूलन का हथियार' में लिखा है, 'जाति-व्यवस्था के उन्मूलन के लिए हमें सामाजिक-समता पर आधारित दृष्टिकोण अपनाना होगा।'

समाज में सभी व्यक्तियों में सभ्य-समानता के स्वप्न को साकार करने के लिए महात्मा गांधी और डॉ. राम मनोहर लोहिया जैसे महान् समाजवादी चिंतन सतत प्रयत्नशील थे और आज भी सपा सुप्रीमो मुलायम सिंह यादव संघर्ष कर रहे हैं, तभी सही माने में सर्वतोन्मुखी विकास होगा। गरीब-अमीर के बीच की आर्थिक खाई पटेगी और पूँजीवाद का आतंक समाप्त होगा, क्योंकि समाजवाद मनुष्य को विवशता के क्षेत्र से हटाकर उसे स्वाधीनता के राज्य में लाना चाहता है। हम शोषण मुक्त समाज की रचना करके वर्तमान समाज की प्रचलित दासता, विषमता और असहिष्णुता को सदा के लिए दूर करके समाजवाद, स्वतंत्रता, समता और मातृत्व की वास्तविक स्थापना करना चाहता है। कवि वर्तमान राजनीति की स्वार्थवादी सोच और नौकरशाही पूँजीवादी-मूल्यविहीन जनतांत्रिक व्यवस्था की भर्त्सना करता है। कवि का भाव देखिए—

भले लोग भी मिल जाते हैं, लेकिन नमक हराम बहुत हैं।
राजनीति में झूठे वादे, झेलते आठों याम बहुत हैं।

व्यक्ति के चरित्र और आचरण से उनकी राष्ट्रीय चेतना का पता चलता है, इसलिए ये आचरण सुधार और नैतिक चरित्र की बात करते हैं। आज के युग में जीवन-मूल्य को अधिक ग्रहीत किया जा रहा है। जहाँ जीवनमूल्य खंडित होता है, वहाँ कवि का स्वर विद्रोही हो उठता है। 'पुरानी कश्ती को पार लेकर फकत हमारा हुनर गया है, नए खेवैया कहीं न समझें नदी का पानी उतर गया है।' आजादी जिसे हमने बड़े संघर्ष और त्याग-बलिदान से हासिल किया है, उस आजादी से खिलवाड़ करनेवालों और राजनीतिज्ञों को अपने दायित्वों से भटकते, स्वार्थ लिप्सा में नैतिक पतन को देखते हुए कवि कहता है, 'ऐसी आजादी गुलामी से भी बदतर है' और शतरंजी चाल चलने वालों को वह सचेत करते हुए साफ कहता है—

न कुछ मेरा है, न तेरा है, ये हिंदुस्तान सबका है,
न समझे अभी ये बात तो नुकसान सबका है।
जो इसमें मिल गई नदियाँ वो दिखलाई नहीं देतीं,
महासागर बनाने में एहसान सबका है।

वर्तमान राजनीति के कर्णधार देश में जो समायोजन कर रहे हैं, वह अकसर असफल हो जाता है। इस असफलता का मूल कारण नेतृत्व-वर्ग का आयातित चिंतन है, जिसका हमारे राष्ट्रीय संदर्भों में कोई औचित्य नहीं है। आज के राजनीतिक कर्णधार जिस मंजिल पर बैठे हैं, उसकी नींव कच्ची है। जनता को उनके नेतृत्व में कोई विश्वास नहीं है। अपने राजनीति से मोहभंग की स्थिति सातवें दशक से ही पैदा हुई है। नागार्जुन, धूमिल, लीलाधर जगूड़ी, मलयज, सौमित्र मोहन, मंडलोई और समकालीन कविता के कई अन्य हस्ताक्षरों के साथ उदय प्रताप सिंह की कुछ कविताओं का तेवर तना हुआ है और राजनीति की पोल खोलते हुए ढोल के भीतर का सच दिखा देना चाहते हैं, 'जो सच कहने को तैयार नहीं हैं, वो कलम रखने के हकदार नहीं हैं।' प्राय: प्रगतिवादी रचनाओं में ऐसी यथार्थता का चित्रण मिलता है। साहित्य और राजनीति पृथक् नहीं, अन्योन्याश्रित है। साहित्य का उद्देश्य राजनीतिक सिद्धांतों की स्थापना है? मार्क्सवादी विचारधारा से अलग उदय प्रताप के कवि ने राजनीतिक अनुभूतियों को अपनी कविताओं में अंकित किया है, 'तुमको शतरंजी चालों…' इन पंक्तियों में बड़ा बारीक व्यंग्य है। उन्होंने अपनी कविताओं के लिए अपना अलग मुहावरा गढ़ा है, भाषा में कहीं भदेस या तल्खी नहीं है। चूँकि कविता का कथ्य अपने मौलिक कथ्य, अनुभूति, अनुभव यानी अंतरपरक होता है। अत: यही कथ्य सामाजिक के लिए 'सब्जेक्टिविटी' का समूचापन होता है। नई काव्य-भाषा की सही तलाश करता कवि इसी कथ्य को अभिव्यंजित कर पाने का सुख-संतोष अनुभव करता है। कहें कि इनकी भाषा में शालीनता और व्यंग्य की बारीक बुनावट है। समग्रत: कथ्य और अभिव्यंजन की दृष्टि से उदय प्रताप सिंह की भाषा बोलचाल की आम भाषा है। सर्वत्र लोकोन्मुखी दृष्टि प्रबल है।

उदय प्रताप सिंह प्रगतिशील विचारधारा के प्रखर कवि हैं। सामान्यत: समकालीन कविता का स्वर समाजवादी-राजनीतिक है, लेकिन इनका चिंतन इन बातों से पृथक् राष्ट्रीय और सांस्कृतिक पक्ष को प्रबलता से उद्घाटित करता है। इनकी कविताओं में संपूर्ण मानव समाज को ऊँचा उठाने, शोषणमुक्त करने का उज्ज्वल निर्णय और कर्मनिरत भाव सांकेतिक रूप में अंकित है। सामयिक परिस्थितियों में वे प्रेरणा प्रदायक हैं। उनमें नई जवानी और नई रवानी, नई कहानी बनकर आगे बढ़ने, अपने अस्तित्व को कायम करने की उद्दाम भावना है। राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में भी योग भाव विशेष महत्त्व रखते हैं। यही कारण है कि ये अपने समकालीनों—समवयस्कों से सर्वथा पृथक् 'प्लेटफार्म' पर अवस्थित है। इनकी कविताओं में चेतना की ऊर्जा है, वह ऊर्जा जो प्रबुद्ध पाठकों और श्रोताओं में कौंध पैदा करती है और सार्थक करने की चेतना जगाती है। एक सच्ची और श्रेष्ठ कविता का ध्वनि-धर्म भी यही है, वह अपने पाठकों में भीतरी तौर पर भव्य भाव जाग्रत् करे। इनकी कविता की पंक्ति-पंक्ति में वह संप्रेष्य-शक्ति है, जो विकृतियों और सीमाओं को त्यागकर स्वस्थ सोच का संस्कार भरती है। इनकी काव्य-भाषा प्रखर रचनाशील की भाषा है, जो अपूर्व या अतार्किक स्थिति में कोश का मुँह न जोहकर तुरंत शब्द सृजन कर लेती है, जो गहनमयी भाषा समय-संस्कार के अनुरूप होती है। व्यापक और सूक्ष्म स्तर पर कविता की सही भाषा का अधिकांश समय सापेक्ष संदर्भित होता है। अत: कह सकते हैं कि उदय प्रताप सिंह नई भाषा के प्रयोक्ता और आत्मविश्वास से पूर्ण काव्यकार हैं, जिनके पदचिह्न हिंदी-कविता में कालजयी रूप में अंकित होंगे।

साहित्य कुटीर, साइट-२/४४
विकासपुरी, नई दिल्ली-११००१८
दूरभाष : ९२८९४४०६४२

दीपावली की मंगलकामनाएँ

● सत्यनारायण भटनागर

आज सुबह से डॉ. शैफाली बहुत व्यस्त थी। कभी बाथरूम की सफाई तो कभी टॉयलेट की घिसाई। घर के जाले साफ हो चुके थे। बिस्तर झाड़ दिए गए थे, चादर बदल दी गई थी। अलमारी में झाड़ू मारकर धूल उड़ा दी गई थी। मनीष से देखा न गया। बोला, ''थक जाओगी, फिर कमर दर्द को लेकर कराहोगी। ऐसा क्या भूत चढ़ा है सफाई का।''

डॉ. शैफाली ने कहा, ''आज रविवार है, छुट्टी है। दो दिन बाद दीपावली है। दीपावली के पूर्व स्वच्छता और सफाई आवश्यक है। अभी भेंरुलाल सफाई करने आएगा। वह तो फर्श पर झाड़ू-पोंछा मार चल देगा। दीवार और छत की धूल, दरवाजे और खिड़की की धूल, परदों में छिपी धूल, सोफे के अंदर-बाहर पड़ी धूल तो वह कभी साफ करता ही नहीं। ये आया और ये चला। अब फर्श साफ करेगा तो धूल तो साफ हो जाएगी। बाथरूम और टॉयलेट भी आज पूरी तरह साफ कर दिए हैं। अब रसोईघर और शयनकक्ष शेष हैं। रसोईवाली बाई तो रोटी बनाई और चल दी। उसे आज अपने साथ सफाई में लगाऊँगी।'' बिस्तर पर लेटते हुए शैफाली ने कहा।

मनीष हँसने लगा। बोला, ''इस घर में मेरे लिए भी कोई काम छोड़ा है या सभी तुम कर लोगी।''

शैफाली ने कहा, ''आपके लिए बहुत काम है। सोफा सेट के नीचे कचरा पड़ा है। हमसे यह नहीं होगा। टाँड़ पर कितना सामान है, जूना-पुराना, टूटा-फूटा सब उतारकर देखना है। यह काम आप करना। ये जो पुराना सामान है, यह कबाड़ी को दे दीजिए या अपने यहाँ काम करनेवाले भेंरुलाल या रसोईघर में काम करनेवाली बाई को बाँट देना। किसी के तो काम आए। यह पड़ा-पड़ा सड़ रहा है। बेकार रखा हुआ है।''

मनीष सुनता रहा। फिर बोला, ''तुम ठीक कहती हो। दीपावली पर यह सफाई-स्वच्छता का अभियान चलना ही चाहिए। मैंने आज घर के पीछे की नाली साफ कर दी है! पानी भर जाता था। कचरे की रुकावट थी, अब पानी बहकर निकल रहा है।''

शैफाली हँसी। बोली, ''जय हो स्वच्छता अभियान। हमारी माँ तो दीपावली के सप्ताह भर पूर्व से दीपावली के उत्सव की तैयारी करना प्रारंभ कर देती थी। अभी गूँजे-पपड़ी, मिठाइयाँ बनाना शेष है। तुम थोड़ी मदद करोगे तो यह भी हो जाएगा। आज सामान लिखवा दूँगी। बाजार से ले आना।''

सुपरिचित बाल साहित्यकार। कई विधाओं की दर्जन भर पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। 'अक्षर मित्र सम्मान', 'बाल साहित्य सम्मान', 'नई दुनिया', इंदौर द्वारा आयोजित व्यंग्य प्रतियोगिता में पुरस्कार।

मनीष ने कहा, ''घर बनाने की क्या आवश्यकता? सब बाजार में मिलता है। बना-बनाया ले आएँगे।''

शैफाली बोली, ''नहीं, पूजा की सामग्री और लक्ष्मीजी का भोग तो मैं ही बनाऊँगी। तुम पूजा में लगनेवाला सामान ले आना।''

अनु माता-पिता की चर्चा सुन रहा था। बोला, ''दीपावली तो स्वच्छ भारत अभियान बन गया। लगता है, गंदगी की खैर नहीं। देशभर में लिपाई-पुताई चल रही है। मैं भी पुस्तकों की अलमारी और कपड़ों की अलमारी की सफाई कर दूँगा।''

शैफाली ने कहा, ''बेटा, वैसे तो हम अपने शरीर, वस्त्र और मकान-दुकान की सफाई प्रतिदिन ही करते हैं, पर यह विशेष अवसर है। कहते हैं, इन दिनों माँ लक्ष्मी का भ्रमण होता है। वे उस घर में प्रवेश करती हैं, जहाँ स्वच्छता व सुख-शांति व्याप्त हो। सही भी है, लक्ष्मी स्वच्छ घर में ही तो रहेगी, क्योंकि वहाँ स्वास्थ्य होगा, समृद्धि और खुशहाली होगी।''

अनु हँसने लगा। बोला, ''माँ, जहाँ पहले से स्वच्छता, स्वास्थ्य, सुख-शांति होगी, वहाँ जाकर वे करेंगी क्या? उन्हें तो ऐसे घर में रहने जाना चाहिए, जहाँ इनकी आवश्यकता हो। लक्ष्मी के आगमन से सुख-शांति और खुशहाली तो आ ही जाती है।''

शैफाली ने कहा, ''तुम ठीक कहते हो। अमीर से अमीर घर में भी सुख-शांति का अभाव हो सकता है। वहाँ आंतरिक कलह होगी तो लक्ष्मी वहाँ कैसे प्रवेश करेगी? माता लक्ष्मी वहाँ प्रवेश करती हैं, जहाँ स्वच्छता और सफाई बाहरी नहीं, आंतरिक भी हो। राग-द्वेष, घृणा-हिंसा, व्यर्थ का अहंकार भी हमें दीपावली पर साफ करना चाहिए। भाई-चारा, सहयोग, प्रेम-अपनत्व के साथ ही लक्ष्मी निवास करती है। दीपावली हमें आंतरिक स्वच्छता का भी संदेश देती है।''

अब मनीष के हँसने की बारी थी। बोला, ''शैफाली, तुम तो धार्मिक उपदेश देने लगीं। लोग दीपावली पर बाहरी सफाई कर संतुष्ट हो जाते हैं।''

डॉ. शैफाली ने कहा, ''यह हँसने की बात नहीं है। स्वच्छता और सफाई के इस अभियान से पर्यावरण भी जुड़ा है। हमारे पर्यावरण की सफाई से प्रकृति भी सम्मानित होती है।''

अनु बीच में टपका। बोला, ''दुनिया भर के जहरीले रासायनिक पटाखे फोड़कर हम कौन सा पर्यावरण सुधारते हैं माँ? पर्यावरण तो इससे बिगड़ता है। बेचारे पक्षी कानफोड़ू आवाज से भयभीत भागते फिरते हैं। कई डरकर मर जाते हैं। सड़क छाप कुत्ते हों या पालतू, इन आवाजों से बहरे हो जाते हैं। हमारे विज्ञान के शिक्षक ने एक दिन इसी विषय पर समझाया था। हम लोग तो इस दीपावली पर ऐसे रासायनिक और शोर मचानेवाले पटाखों का बिल्कुल प्रयोग नहीं करेंगे। यह त्योहार तो अमीरों का है। बेचारे गरीब क्या बुलाएँगे लक्ष्मी? उनकी कैसी लक्ष्मी पूजा? वे श्रम करते हैं। हमारी सेवा करते हैं और गरीब के गरीब बने रहते हैं। उनके लिए कैसी दीपावली?''

दो क्षण को सन्नाटा छा गया। डॉ. शैफाली ने कहा, ''बेटा! तुम सही कह रहे हो। यह हमारी व्यवस्था का दोष है। आधुनिकता के पाखंड में हम महँगे और हानिकारक रसायनवाले पटाखे चलाकर पर्यावरण व अपने स्वास्थ्य का नाश कर रहे हैं। हम इस वर्ष इसका उपयोग नहीं करेंगे।''

डॉ. शैफाली यह कहकर रुकी। मनीष को देखा और बोली, ''आज जो दीपावली का सामान लाओ, उसमें दो किलो बेसन के लड्डू जरूर लाना।''

मनीष ने सुना तो हँसने लगा। बोला, ''दो किलो का क्या करोगी? ढाई आदमियों का परिवार और दो किलो लड्डू? और बेसन के ही क्यों? मावे के क्यों नहीं?''

शैफाली ने कहा, ''आजकल मावे में मिलावट बहुत हो रही है। कई घटनाएँ सामने आ चुकी हैं। बेसन में मिलावट नहीं होती। बेसन के लड्डू पंद्रह दिन खराब नहीं होते। यह आपका विषय नहीं है।''

एक क्षण रुककर शैफाली ने मनीष को देखा, पूछा, ''कभी सोचा है हम सुख-शांति से अपना जीवन चला रहे हैं। इसके पीछे किन-किन की सहृदयता और श्रम है?''

मनीष ने कहा, ''तुम भी अजीब हो। यह कोई प्रश्न है? हम मेहनत करते हैं, धनार्जन करते हैं और शान से सुखपूर्वक रहते हैं? हमारे जीवन के आनंद का कारण हम ही हैं?''

शैफाली हँसी। बोली, ''यही गड़बड़ है। सोचिए, हमारे घर भेंरुलाल और कमलाबाई एक दिन नहीं आएँ तो हमारी व्यवस्था का क्या होता है? हमारा सुख-चैन कहीं चला जाता है। घर का कचरा उठानेवाले सफाई कर्मचारी के बारे में सोचा, जो सोसाइटी का कचरा ठिकाने लगाते हैं। हमारे सोसाइटी का चौकीदार नीचे झोंपड़े में अपने परिवार के साथ रहकर हमारी सुरक्षा पर सतर्क और सावधान रहता है। हमारा डाकिया हमारे लिए संदेश लाता है। हमारा अखबार का हॉकर, सोचिए तो सही हमारे लिए कितने लोग लगे रहते हैं, तब हमारा जीवन व्यवस्थित और सुखी होता है। हम इन पर ध्यान नहीं देते। दीपावली मनाने का उनका भी हक है।''

मनीष विचार में पड़ गया। फिर झटके से बोला, ''हम उन्हें मनचाहा वेतन देते हैं। उनसे श्रम खरीदते हैं। उनका हम पर कोई अहसान नहीं है।''

वैशाली खुलकर हँसी। बोली, ''यही गड़बड़ है। हम उन्हें नाम-मात्र का वेतन देते हैं और भूल जाते हैं। वे भी हमारे परिवार के अंग हैं। समाज इन्हीं के सहयोग से चलता है। जिन्हें हम छोटा श्रमिक समझते हैं, वे हमारे जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण अंग हैं। हर श्रम करनेवाला हम सफेद कॉलर वाले से समाज के लिए अधिक पसीना बहाता है। दीपावली के दिन हमें उनके लिए मंगलकामना करनी चाहिए। मिठाई और फुलझड़ी का एक पैकेट उनके बच्चों के लिए हमें प्रेमपूर्वक भेंट देना चाहिए। यह तुच्छ मंगलकामना का पैकेट हम उन्हें देकर यह संदेश देते हैं कि हम उन्हें प्रेम करते हैं। वे हमारे परिवार के अंग हैं और हमारे लिए अन्य किसी से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इस दीपावली पर मैं तो उन्हें ऐसी मंगलकामना अवश्य देना चाहूँगी। हमारी माँ ऐसा ही करती थीं। हमारी माँ कहती थीं, 'बाटचूट के खाना, बैकुंठ में जाना।' हम इतना कमाते हैं, उसमें त्योहारों पर उनका भी हक है। वे भी हमारे उत्साह-उमंग के भागीदार हैं।''

मनीष ने ताली पीटी। बोला, ''वाह डॉक्टर! तुमने तो गजब का विचार दिया। हमने तो सोचा ही नहीं था। आपकी बात का हम भी समर्थन करते हैं। यह इस दीपावली पर होगा।''

बेटे ने कहा, ''हमारे शिक्षक ने भी कक्षा में यह सब कहा था, पर माँ ने इसे व्यावहारिक ढंग से समझाया। माँ तो माँ होती है।''

मनीष उठ खड़ा हुआ। लग गया साफ-सफाई के काम में। बातों से तो सफाई होती नहीं।

□

दीपावली आ ही गई। दीप जल उठे। अंधकार को ललकारने लगे। अंधकार घबराया, भागकर दीपक के नीचे छिप गया, घर के कोनों में छिपने लगा, सब ओर उत्साह और उमंग छा गया। बच्चे सबसे अधिक प्रसन्न थे। वे नाच रहे थे, गा रहे थे, धूम मचा रहे थे। दीपावली उत्साह और उमंग से धीरे-धीरे सरक रही थी। पटाकों की कानफोड़ू आवाज नगर में ऐसे गूँज रही थी मानो युद्ध हो रहा हो। तेजाब व रसायनों की गंध और धुआँ आसमान में तैर रहा था। आखिर में सब ठंडे पड़ गए। सब थके-हारे बिस्तर पर चले गए। आ गई दीपावली।

घर की घंटी टनटनाई तो मनीष की नींद खुल गई। अँगड़ाई लेकर उठा। कौन आ गया इतनी सुबह! शैफाली और अनु गहरी नींद में थे। दरवाजा खोला तो सामने भेंरुलाल खड़ा था। उसने घर में प्रवेश किया। बोला, ''साहबजी, आज दीवाली है, सो घरवाली ने कहा कि जल्दी से काम निपटाकर आ जाओ। आज हमारे यहाँ भी रिश्तेदार, अड़ोस-पड़ोस

के लोग आएँगे तो हमें भी तैयार होना है। सो हम जल्दी आ गए।''

भेंरुलाल ने झाड़ू उठाई और काम शुरू कर दिया। वह जल्दी-जल्दी काम निपटाकर जाना चाहता था। शैफाली की नींद खुल गई। इतने में कमलाबाई आ गई। बोली, ''मैडम, हमारे घरवाले ने कहा कि आज दीवाली है। अपना भी त्योहार है, छुट्टी मारो। मैडम कर लेगी काम, पर हम नहीं माने। जल्दी आ गए। काम निपटाकर जाना है। हमारा भी तो त्योहार है।'' दोनों तेजी से उत्साहपूर्वक काम निपटा रहे थे। भेंरुलाल ने काम निपटा दिया। बोला, ''चलूँ साहब।''

शैफाली बोली, ''रुको भैया! यह दीवाली की मिठाई और फुलझड़ी तो लेते जाओ। यह हमारी मंगलकामना है। भगवान् तुम्हें खूब तरक्की दे।''

अनु जाग गया था। बिस्तर में पड़ा-पड़ा यह दृश्य देख रहा था। बोला, ''माँ, आपने भेंरुलालजी को भैया कहा, ऐसा क्यों?''

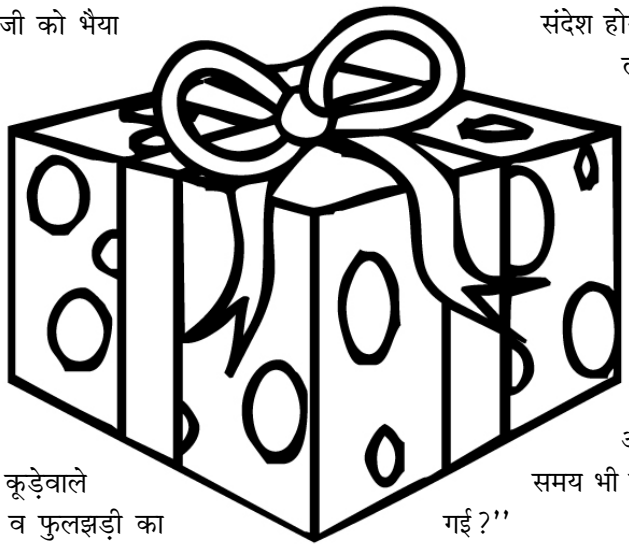

शैफाली ने कहा, ''बेटा, वे हमारे परिवार के ही तो हो गए हैं। देखो न, दीवाली के दिन भी जल्दी से आकर हमारा काम निपटाया। यह सहयोग भावना परिवार में ही तो होती है। कमलाबाई कामवाली बाई नहीं है। तुम्हारी मौसी मानो, उन्हें मौसी कहा करो। यह हमारी संस्कृति है।''

फिर बोली, ''अब जल्दी उठो। कूड़ेवाले भैया भी आ जाएँगे। उन्हें यह मिठाई व फुलझड़ी का पैकेट देना है। फिर नीचे जाकर चौकीदार बाबा को दे आना। बाकी मैं देती रहूँगी।''

शैफाली और मनोष जल्दी से स्नान-ध्यान कर तैयार हुए। अड़ोसी-पड़ोसी दीपावली मिलने के लिए आने लगे थे। जो आता, मंगलकामना लाता। मनीष-शैफाली भी मंगलकामनाओं के साथ मिठाई पेश करते। आने-जाने का क्रम चालू था। उन्हें भी तो जाना है। आज का दिन तो ऐसे ही व्यस्तता में निकलेगा।

थोड़ी ही देर में शैफाली ने देखा कि उनके विभाग के लिए होटल संचालित करनेवाली कंपनी का मैनेजर श्री वर्मा खड़े हैं। शैफाली ने कहा, ''आइए-आइए।'' श्री वर्मा मुसकराते हुए आए। झुककर नमस्कार किया। बोले, ''मैडम, दीपावली की शुभकामनाएँ लाया हूँ।''

शैफाली ने कहा, ''बैठिए वर्माजी, आपको भी दीपावली की शुभकामनाएँ।'' शैफाली ने ट्रे खिसकाई, कहा, ''लीजिए, मुँह मीठा कीजिए। सबकुछ घर का बना है।''

मैनेजर वर्मा ने आश्चर्य से कहा, ''मैडम, आप इतना समय निकाल लेती हैं?'' फिर मिठाई का एक टुकड़ा कुतरते हुए बोले, ''बहुत स्वादिष्ट बनी है यह तो।''

शैफाली हँसी। बोली, ''और लीजिए, संकोच मत कीजिए।''

थोड़ी देर इधर-उधर की बातें हुईं और वर्माजी ने मिठाई का एक डिब्बा खड़े होकर पेश किया। बोले, ''हमारी कंपनी की ओर से दीवाली की तुच्छ भेंट और शुभकामनाएँ।''

शैफाली ने मिठाई का डिब्बा रख लिया। वर्माजी चले गए। अब शैफाली ने मनीष से कहा, ''चलो, अड़ोस-पड़ोस से हम भी शुभकामनाओं का आदान-प्रदान कर आएँ।'' वे दोनों पैदल ही चल दिए। थोड़ा-थोड़ा खाकर भी उनका पेट भर चुका था। अब भोजन कर ही नहीं सकते। अनु ने भी खाना खाने से मना कर दिया।

संध्या तक शैफाली ने देखा कि मिठाई और शुभकामनाओं का ढेर है। चाय पीते-पीते उसने होटल के मैनेजर द्वारा दिए डब्बे को खोला तो देखा कि मिठाई के ऊपर एक लिफाफा है। सोचा, शुभकामना संदेश होगा। लिफाफा खोला तो अवाक् रह गई। लगा कि बिच्छू डंक मार गया है। वह तिलमिला गई। लिफाफे में दो हजार रुपए थे। कंपनी की मंगलकामना यही थी। इच्छा हुई कि अभी मैनेजर को बुलाकर उसे ठीक कर दे।

मनीष ने शैफाली के चेहरे पर गुस्सा देखा तो पूछा, ''क्या हो गया?''

शैफाली ने गुस्से में कहा, ''मिठाई के डब्बे में दो हजार रुपए हैं। यह मैनेजर अपने को समझता क्या है? डिब्बा देते समय भी कुछ नहीं बोला। उसकी हिम्मत कैसे हो गई?''

मनीष हँसने लगा। बोला, ''गुस्सा क्यों होती हो। सब कंपनीवाले ऐसा ही करते हैं। हमारी सीमेंट कंपनी ने इस बार सौ ग्राम के चाँदी के सिक्के अफसरों में बाँटे हैं। छोटे कर्मचारियों के लिए दस ग्राम के सिक्के हैं। ये कंपनियाँ अपने लाइजन ऑफिसरों के माध्यम से ऐसा करती ही हैं। इसमें मैनेजर का क्या दोष?''

शैफाली ने कहा, ''मैनेजर को बताना तो था, मैं तत्काल वापस कर देती, मुझे ऐसा धन नहीं चाहिए।''

मनीष हँसने लगा। बोला, ''आजकल का यह शिष्टाचार है। भ्रष्टाचार भी आजकल शिष्टाचार का रूप रखकर चल रहा है। सारे देश में दीपावली पर मिठाई के डिब्बे के साथ यह 'गिफ्ट संस्कृति' चल रही है। तुम बुरा मत मानो, परेशान न हो।''

शैफाली का गुस्सा शांत नहीं हुआ। उसने टेलीफोन उठाया और मैनेजर वर्मा को लगा दिया—''वर्माजी, आपके मिठाई के डिब्बे में मुझे नोट मिले, यह क्या मामला है? आपने देते वक्त बताया तक नहीं।''

वर्मा परेशान नहीं हुआ। सहज भाव से बोला, ''ऐसा है मैडम, यह तो कंपनी की तरफ से दीपावली की शुभकामना है, जिससे आप दीपावली अच्छे से मनाएँ।''

शैफाली ने कहा, ''मुझे नहीं चाहिए ये शुभकामना।'' वह गुस्से से बोली, ''आप अभी आइए और ले जाइए अपनी ये शुभकामनाएँ। मुझे ये स्वीकार नहीं हैं।''

मैनेजर वर्मा परेशान हुआ, पर तत्काल आ गया। बोला, ''मैडम! यह हमने नहीं दिया। हमारे हेडक्वार्टर से नाम आए थे कि इन अधिकारियों को इतनी रकम देनी है। वह हमने दे दी। इसमें हमने कुछ नहीं किया।''

शैफाली ने लिफाफा वर्मा की तरफ बढ़ाते हुए कहा, ''ये आपकी कंपनी की शुभकामनाएँ आप रखिए। हेड ऑफिस को लिख दीजिए कि मैंने वापस की है। भविष्य में ऐसी हरकत नहीं होना चाहिए।''

मैनेजर वर्मा सकते में आ गया। बोला, ''मैडम मंगलकामनाएँ भी कभी वापस होती हैं। देखिए, ये मिठाई के डिब्बे सभी अधिकारियों को दिए गए हैं। किसी ने वापस नहीं किए। हम हर वर्ष देते हैं। यह तो इसलिए है कि आप अच्छे से दीपावली पर्व मनाएँ।''

शैफाली ने सुना तो आग लग गई। बोली, ''मैं कंपनी के धन से दीपावली मनाऊँगी। सरकार ने मेरे लिए पर्याप्त व्यवस्था कर रखी है। आप उठाइए यह लिफाफा।''

मैनेजर वर्मा ने लिफाफा नहीं उठाया। वह फिर विनम्रता से बोला, मैडम, आपको दो हजार रुपए रखे हैं। आपके बॉस के पाँच हजार रखे हैं। सब अधिकारियों को रखे हैं। किसी ने वापस किए? सारे देश में हमारी शाखाएँ हैं, सब दूर-दीपावली की मंगलकामनाएँ हमने ऐसे ही दी हैं। आज तक किसी ने वापस नहीं की है। आप वापस करेंगी तो एक गलत निर्णय हो जाएगा। सोचिए, क्या आई लक्ष्मी को कोई ऐसे वापस करता है?''

शैफाली का गुस्सा शांत नहीं हुआ। उसने कहा, ''वर्माजी, मैं बाल-बच्चों वाली हूँ। मुझे अपने अगले जन्म की चिंता है। मेरे घर में ऐसा धन प्रवेश नहीं कर सकता।''

मैनेजर वर्मा ने कहा, ''ये पुराने जमाने की बातें हैं मैडम। आजकल कोई ऐसे डरता नहीं है। अगला जन्म किसने देखा है? आप कोई सोच-विचार न करें। आई लक्ष्मी का निरादर न करें। मैं भविष्य में ध्यान रखूँगा।''

शैफाली बोली, ''वर्माजी, आप बेकार ही मेरा और अपना समय नष्ट कर रहे हैं। लिफाफा उठाइए और अपने दफ्तर को सूचित कीजिए कि मैंने रकम वापस की है। मैं उल्लू पर सवार लक्ष्मी का स्वागत नहीं कर सकती। मेरे निवास पर जब लक्ष्मी गरुड़ पर बैठकर विष्णुजी के साथ आएँगी तो मैं तहेदिल से स्वागत करूँगी। अपनी बुद्धि और श्रम से जितना मिले, उससे मैं संतुष्ट हूँ। उठाइए यह लिफाफा।''

मैनेजर वर्मा ने लिफाफा उठाया। जेब में रखा और हारे जुआरी की तरह मुँह लटकाए चल दिया।

यह चर्चा मनीष और अनु सुन रहे थे। वे बाहर आए और बोले, ''मैडम आपका स्वागत है। आपने इस घर को पाप में डूबने से बचा लिया।''

२, एम.आई.जी., देवरादेवनारायण नगर
रतलाम (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५१०३३२८

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

कृषि पंडित सुखराम वर्मा

● परदेशी राम वर्मा

महात्मा गांधी के इस कथन को कृषि पंडित सुखराम वर्मा के जीवन-आदर्श और उनकी संघर्ष-कथा से गुजरकर हम बेहतर ढंग से समझ सकते हैं।

आदमी अकसर वह बन जाता है, जो वह होने में यकीन करता है। अगर मैं खुद से यह कहता रहूँ कि मैं फलाँ चीज नहीं कर सकता तो यह संभव है कि मैं शायद सचमुच वह करने में समर्थ हो जाऊँ। इसके विपरीत, अगर मैं यह यकीन करूँ कि मैं यह कर सकता हूँ तो मैं निश्चित रूप से उसे करने की क्षमता पा लूँ, भले ही शुरू में मेरे पास वह क्षमता न रही हो।

छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा २०१२ में राष्ट्रपति डॉ. प्रणब मुखर्जी के हाथों श्री सुखराम वर्मा को दो लाख रुपए का 'डॉ. खूबचंद बघेल सम्मान' राज्योत्सव मंच पर मिला। यह सम्मान कृषि क्षेत्र में अभूतपूर्व उपलब्धि हासिल करनेवाले कृषि पंडितों को दिया जाता है। कोहड़िया ग्राम में एक सामान्य कृषक के घर १५ अगस्त, १९४१ को जनमे सुखराम वर्मा के पिता बलदेव प्रसाद वर्मा एक परिश्रमी किसान थे। माता का नाम सोहागा बाई था। सुखराम अपने पिता के बड़े पुत्र हैं। नेतराम, संतराम और पंचराम तीनों छोटे भाई तथा चार बहनें हुईं। छोटे भाई नेतराम का निधन हो गया है। आठ भाई-बहनों में से केवल सुखराम यशस्वी बने। सुखराम ने ही अपने भाई-बहनों में सबसे अधिक संघर्ष किया।

कोहड़िया दुर्ग जिले का एक छोटा सा गाँव था, जो अब बेमेतरा जिले का गाँव कहलाता है। कोहड़िया से तीन किलोमीटर की दूरी पर स्थित गाँव मलपुरी में चौथी कक्षा तक पढ़ाई करने के बाद आगे की पढ़ाई के लिए आसपास स्कूल नहीं होने के कारण वे अपनी बुआ के गाँव गिरौद चले गए। वहाँ से करीब ही मांढर के स्कूल में कुछ दिन पढ़ने के बाद उन्हें लगा कि वे पढ़ नहीं सकते। पुन: अपने कृषक पिता के पास कोहड़िया भाग आए। पिता बहुत नाराज हुए। लगातार पिता की नाराजगी से सुखराम घर से पलायन कर रामपुर आ गए। रामपुर में उनके जीजाजी रहते थे। वहीं रहकर सुकवारी बाजार में रामेश्वर यादव के होटल में कप-प्लेट धोने की नौकरी करने लगे। साल भर बाद जब पिता यह पता लगाने यादव होटल पहुँचे कि बेटे की कुछ कमाई होती है या यों ही कप-प्लेट धो रहा है। वहाँ जाकर पता चला कि मालिक ने कप-प्लेट तोड़ने के एवज में सुखराम को धेला भी नहीं दिया। लड़-झगड़कर पिता उन्हें घर ले आए।

सुपरिचित कथाकार। अब तक पाँच कथा-संग्रह *(हिंदी)*, एक कथा-संग्रह *(छत्तीसगढ़ी)*, दो उपन्यास *(हिंदी)*, एक उपन्यास *(छत्तीसगढ़ी)* में तथा संस्मरणों की नौ पुस्तकें प्रकाशित। 'पंडित सुंदरलाल शर्मा राज्य अलंकरण', 'बख्शी साधना सम्मान' तथा अन्य सम्मान।

चौथी पास सुखराम का मन न खेती में लगता था, न अन्य काम में। वे टेलरिंग सीखने लगे। गाँव में ही साहू टेलर ने उन्हें बड़ी सलूकियत से सिलना सिखा दिया। जल्दी ही सुखराम इस काम में प्रवीण हो गए। आगे चलकर वे रामपुर जाकर कंकालिन पारा के भरत टेलर्स एवं ताता टेलर्स से पैंट-शर्ट और कोट सिलना सीखा। वे माहिर टेलर हो गए। पिता ने सिलाई मशीन खरीद दी। गाँव में वह दुकान खोलकर कारीगरी करने लगे। चारों ओर खूब नाम हो गया। गाँव की नाटक मंडली में वे परी भी बनते थे। इसलिए गाँववाले उन्हें बाहर जाने नहीं देते थे।

१९५५-६० में भिलाई इस्पात संयंत्र के आगमन से आसपास के गाँव जागने लगे। सुखराम ने भिलाई-३ में दुकान खोल ली। दुकान चलने लगी। गाँव के यार-दोस्त आते तो सुखराम का ठाठ देखकर वे चकित रह जाते। बड़े-बड़े कपड़ा दुकानवाले सेठ उन्हें पहचानते थे। १५ रुपए माहवारी पर किराए में दुकान लेकर वह काम करते थे। रहने के लिए किराए पर एक घर ले लिया था। सुख के दिन सुखराम के जीवन में इस तरह पहली बार आए। वह भोले-भाले कलाकार मन के इनसान थे। गाँव के साथी एवं परिचित जन उनके पास आते। वह घर में उन्हें भोजन भी कराते। दुकान में चाय भी पिलाते। कोहड़िया गाँव के सुखराम का रुतबा देखते ही बनता था। वह कपड़ा दुकानवाले सेठों से अपने परिचय के कारण मित्रों के लिए और महत्त्वपूर्ण हो गए थे।

भँवरलाल सेठ भिलाई-३ में एक बड़े कपड़ा व्यापारी थे। एक दिन कोहड़िया के दो मित्र आए। दीपावली नजदीक देखकर उधारी में सेठ से सुखराम ने उन्हें कपड़ा दिलवा दिया। फसल कटाई के बाद आकर उधारी चुकाने का वचन देकर वह कपड़ा ले गए। इसी तरह

सात-आठ परिचित जनों ने कपड़ा लेकर दीपावली का त्योहार मनाया। दीपावली का त्योहार समाप्त हो गया। फसल कट गई, लेकिन कोई मुँह दिखाने नहीं आया। होली के पहले भँवरलाल ने चेताया कि एक सप्ताह के भीतर सब पैसा लाकर दे दो, वरना सामने भिलाई-३ थाने में रपट लिखवाकर बँधवा देंगे। लाल बँगला में रहोगे तब समझोगे भँवरलाल के भँवर में फँसकर मरने का दु:ख। अभी तो सुखराम हो, सप्ताह भर बाद पैसा न दिया तो दुखराम हो जाओगे। भिलाई-३ श्यामाचरण बघेल दाऊ का गाँव था। वे कुर्मी जातिवाले थे, मगर उन्हें बताने पर जग-हँसाई होती। कुर्मी किसान का बेटा बनिया-बंकाल से गाली खाए, धमकी पाए, यह तो बड़ी शर्म की बात होगी।

काम चल निकला। जिंदगी पटरी पर आ गई, लेकिन १९७३-७४ में पुनः अकाल पड़ गया। वे १९७५ से १९७९ तक ग्राम पंचायत के पंच रहे। उनके सरपंच कृष्णाराव डोंडगाँवकर दुर्ग निवासी थे। कार्यकारी सरपंच के रूप में सुखराम वर्मा ने राहत का काम करवाया। गाँव में तीन कुएँ कोहड़िया-बोहारडीह मार्ग, गाँव में विद्युतीकरण, इस तरह उस जमाने में ६० हजार का काम हुआ था। बी.डी.ओ. ने उन्हें सौ रुपए का इनाम दिया।

रात भर सुखराम सो न सका। सुबह उठकर वह अपनी सिलाई मशीन उठाकर सीधे भँवरलाल की दुकान में गया। सिलाई मशीन देकर सुखराम ने कहा, ''सेठजी, उधारी के बदले मशीन रख लीजिए और मुझे छुट्टी दीजिए।'' सेठ भँवरलाल की बाँछें खिल गईं। लगभग दुगने कीमत की मशीन मिल रही थी। इस तरह मशीन बेच-बाँचकर सुखराम फिर कोहड़िया आ गए। फिर वही सिलसिला शुरू हो गया। कोहड़िया में हँड़िया भर बासी और नून का हिसाब था। पिताजी बहुत बिगड़े। उन्होंने क्या नहीं कहा। निकम्मेपन के लिए खूब डाँट पिलाई। कुछ दिनों तक तो सुखराम गाली और बासी खाकर गाँव में घूमते रहे। अचानक उन्हें नादौरी वाले टेलर गौंटिया दल्लूराम बन्छोर की याद आई। वे नंदौरी पहुँच गए, फिर टेलरिंग का काम शुरू हो गया।

कभी-कभी कुछ इस तरह के संयोग भी बनते हैं, जिन्हें हम चमत्कार कह सकते हैं। दोपहर को नंदौरी में टेलर मास्टर सुखराम पैंट की सिलाई में मगन होकर ताम्रध्वज नाटक का अपना पाठ याद करते हुए गुनगुना रहे थे—

जाना हूँ बेसक तुझे,
अर्जुन तेरा नाम
जो तुझको उम्मीद है रे,
कर बेसक संग्राम।
कर बेसक संग्राम,
खड़ा हो धनुष-बाण ले करके,
जौहर अपना दिखा, देख ले
जौहर मेरे समर के।

अभी वह आगे कुछ और गाते कि एक जीप आकर धम्म से दुकान के आगे खड़ी हो गई। साहब फटी हुई पैंट को सिलाने आए थे। सुखराम ने जान लिया कि जिस साहब का पैंट वे सी रहे हैं, वे साहब चाहें तो उनकी जिंदगी के टूटे-फूटे सपनों को सीकर तरतीब दे सकते हैं। सुखराम के आग्रह करने पर साहब ने उन्हें सर्वे यंत्र थ्योडोलाइट थामकर जमीन पर चलने के काम में लगा लिया। यह जमीन के लेबल को नापने का यंत्र था। एक रुपया बारह आने की रोजी पर सुखराम फिर चाकरी की नई डगर पर चल पड़े।

भिलाई से कोरबा तक १२३ केबी लाईन की पेट्रोलिंग का काम भी उन्हें बाद में मिला। इस तरह वे बिजली विभाग के हाकिमों से परिचित भी हो गए।

१९६५ में भीषण अकाल पड़ा। छत्तीसगढ़ में यह १८५६ के बाद का बड़ा अकाल था। १८५६ के अकाल में मिनीमाता के नाना अघारी सतनामी अपनी तीन बेटियों के साथ आसाम चले गए थे। केंद्रीय मंत्री डॉ. चरणदास महंत के दादा भी पलायन कर आसाम गए। बहुत दिनों बाद पुन: छत्तीसगढ़ में वैसा अकाल पड़ा।

इसी वर्ष बिजली विभाग की नौकरी भी छूट गई। अस्थायी नौकरी थी। कोरबा तक लाइन बिछ गई तो कामगार खाली हो गए। कुछ दिन चरौदा में पुन: दुकान खोलकर सुखराम ने उपार्जन करने का प्रयास किया। आषाढ़ के पहले पता नहीं, किस अप्रत्यक्ष शक्ति के इशारे पर सुखराम वर्मा ने अपने घर में सभी जनों के बीच ऐलान कर दिया कि अब बस मैं खेती करूँगा। कोहड़िया खार में उनकी पाँच एकड़ जमीन नाले के किनारे थी। कोऑपरेटिव बैंक से कुआँ खोदने के लिए २५०० का ऋण मिला। अकाल के बाद शासन द्वारा कुछ सहयोगी रुख सामने आने लगा। सात फीट की खुदाई पर पानी निकल आया। १९६५-६६ के वे दिन थे, जब भू-जल का स्तर देखते ही बनता था। भू-जल का दोहन तब न के बराबर होता था। खेती शुरू हो गई। लगातार दो वर्ष तक पारंपरिक खेती करने के बाद सुखराम ने सब्जी की खेती शुरू की। भिंडी की सब्जी से खूब लाभ हुआ। उन्होंने उसी वर्ष विद्युत् पंप के लिए लोन लिया। फिर धीरे-धीरे खेत बिजली के बल्ब से रोशन हो गए।

काम चल निकला। जिंदगी पटरी पर आ गई, लेकिन १९७३-७४ में पुन: अकाल पड़ गया। वे १९७५ से १९७९ तक ग्राम पंचायत के पंच रहे। उनके सरपंच कृष्णाराव डोंडगाँवकर दुर्ग निवासी थे। कार्यकारी सरपंच के रूप में सुखराम वर्मा ने राहत का काम करवाया। गाँव में तीन कुएँ कोहड़िया-बोहारडीह मार्ग, गाँव में विद्युतीकरण, इस तरह उस जमाने में ६० हजार का काम हुआ था। बी.डी.ओ. ने उन्हें सौ रुपए का इनाम दिया।

६ एकड़ ७० डिसमिल जमीन पर खेती करते हुए वे लगातार आगे बढ़े। १९८८ में पहली बार उन्हें भरपूर लाभ मिला। सब्जी की खेती से हुए लाभ से उन्होंने लगी हुई एक एकड़, ३० डिसमिल जमीन खरीद ली।

आसपास गुजराती, पंजाबी और हरियाणवी किसान बसने लगे। खेती की जमीन छत्तीसगढ़ में माटी के मोल बिक रही थी। अन्य प्रदेश के जागरूक किसान अपने प्रांत की एक एकड़ जमीन बेचकर यहाँ बीस एकड़ जमीन खरीद लेते थे। तब छत्तीसगढ़िया किसान यह समझता था कि लाल जमीन पर कोदों, कुटकी ही हो सकती है। बाहर से आए किसानों ने फसल उगाकर स्थानीय किसानों को चमत्कृत कर दिया। फल उगाए जाने लगे। केला और पपीता के साथ अंगूर की खेती भी होने लगी। चारों ओर फार्म हाउस बन गए।

बाहर से आए किसानों से तकनीक की जानकारी, खाद, पानी तथा अन्य जानकारी लेने में सुखराम ने कभी कोताही नहीं की। प्रख्यात कृषक नारायण भाई चावड़ा ने भी उन्हें उदारतापूर्वक सहयोग दिया।

सुखराम वर्मा ने बेटों को भी किसान बनाया। खेत बढ़ते गए। धीरे-धीरे वे और जमीन लेते गए। बेटे पवन और रोहित की शादी हुई। बहुएँ आईं। उनकी गृहस्थी भी खेत में ही शुरू हुई। दोनों बेटे तथा बहुएँ सुशिक्षित हैं। दोनों बहुएँ संपन्न घरों से आई हैं। बड़ी बहू मीरा की पढ़ाई भिलाई नगर में अपने भाई के पास रहकर हुई है। बड़ी बहू और बेटे रोहित की शादी गायत्री यज्ञ के स्थल पर हुई। आदर्श विवाह के हिमायती सुखराम वर्मा के छोटे बेटे पवन की शादी सी.आई.एस.एफ. के जवान की बिटिया मंजू से हुई।

दोनों बहुएँ सुविधापूर्ण जीवन की आदी थीं, मगर वे ब्याह के बाद कोहड़िया खार में स्थित अपने फार्म हाउस में आ गईं। यहाँ खेतिहर किसान की बेटी बहू की तरह अपने जीवन-संगियों के साथ काम करती हैं। सबके नाम से जमीन खरीदते-खरीदते आज सुखराम वर्मा ७० एकड़ के मालिक हैं। २००९-१० में अरहर की ऐसी खेती हुई कि लोग दंग रह गए।

जैविक खाद निर्माण के विशेषज्ञ श्री सुखराम वर्मा उन्नत खेती के जमीनी विशेषज्ञ हैं। वे ऋतु विज्ञानी भी हैं। कृषि महाविद्यालय के प्राध्यापक भी उनसे गुर सीखना चाहते हैं। वे अब कई ट्रैक्टर और तरह-तरह की आधुनिक मशीनों के मालिक हैं। सत्तर एकड़ में शानदार खेती करते हैं। फ्रिजर रखने और वॉच-टावर लगाने की दिशा में वे अब सोच रहे हैं।

अपने फार्म हाउस में रहनेवाले नाती-नातिनों को वे बस से शहर भेजकर पढ़ाते हैं। आज इन गाँवों में बड़े स्कूलों की बसें भी आती हैं। रोहित और पवन के बेटे-बेटी अंग्रेजी माध्यम से पढ़ाई कर रहे हैं।

श्री सुखराम वर्मा खेत के रकबे को तो बढ़ाते ही रहे, परिवार की शैक्षणिक सीमाओं को भी वे विस्तारित करने में सफल रहे।

द्वारिका प्रसाद ने क्या खूब लिखा है—

धन-धन रे मोर किसान,
तोला मय जानेव संगी,
तँय तो धरती के भगवान्।

कोहड़िया खार की काली कन्हार जमीन अब सोना उगल रही है। बाहरी और भीतर की व्यर्थ की बनाई हुई सीमाओं को कृषक पुत्र सुखराम ने ध्वस्त कर दिखाया है।

अगर इस क्षेत्र में पंजाब, हरियाणा, गुजरात के किसानों का डंका बज रहा है तो कोहड़िया गाँव के सुखराम वर्मा का भी परचम लहरा रहा है।

धरती बर तो सबो बरोबर,
का हाथी का चाँटी रे भइमा,
तो धरती तो माटी।

जनकवि पवन दीवान ने ठीक ही लिखा है।

आकाशवाणी रायपुर द्वारा प्रसारित कार्यक्रमों में वाचक बीच-बीच में यह कहता है—

धरती माँगे दो बात,
ऊजला मन, मैले हाथ,
अब बनिहार मन किसान हो गे रे,
हमर देस मा बिहान हो गे रे।

यह गीत भी खूब बजता था। हर युग में सफलता और असफलता की कथाएँ चर्चा में आती हैं।

कुम्हारी से सातवें किलोमीटर की दूरी पर स्थित कोहड़िया गाँव के एक सामान्य कृषक पिता के घर जनमे श्री सुखराम वर्मा ने अपने जीवन में बहुत कुछ पाया। वह हर स्थिति में प्रसन्न रहने का मंत्र जानते हैं। उनके जीवन से हम सबको यह सीख मिलती है कि लगातार लक्ष्य भेद के लिए प्रयास करते रहनेवाले को सफलता जरूर मिलती है।

श्री सुखराम वर्मा की जीवनसंगिनी श्रीमती रमौती बाई वर्मा ने उनका खूब साथ दिया। गाँव से दूर एकांत में खेत में बने घर में करैत साँप भी निकल आते थे। बात करने के लिए संगी-साथी, सहेलियाँ, घर परिवार की स्त्रियाँ थीं। छोटे-छोटे बच्चों को लेकर धुन के पक्के अपने पति के साथ वे खार में बने घर में रहने आ गईं।

७५ वर्ष की उम्र में आज भी वे दोनों पूर्ण स्वस्थ हैं। अब तो उनके खेतों के आसपास घर बन गए हैं। लगातार लोगों की आवा-जाही रहती है।

पुरखे पारंपरिक किसानी करते हुए बड़े जोतनदार होकर भी जो कीर्तिमान नहीं बना पाए, अब उनके संघर्षशील भूमिपुत्र सुखराम वर्मा ने समय की नब्ज को पहचानकर यश का मार्ग प्रशस्त कर दिया। श्री सुखराम वर्मा के दोनों आज्ञाकारी और परिश्रमी पुत्र स्वयं ट्रैक्टर चला लेते हैं। वह हर तरह की आधुनिक मशीनों को साधे बैठे हैं। उन्हें नवीनतम जानकारी भी है। आज जब किसानी से दूर भागकर नई पीढ़ी शहरों की ओर पलायन कर रही है, ऐसे दौर में रोहित और पवन के सुखी पिता सुखराम वर्मा की सफलता की कहानी बहुतों को नई दृष्टि देती है।

एल.आई.जी.-१८, आमदी नगर,
हुडको, भिलाई-४९०००९ (छ.ग.)
दूरभाष : ९८२७९९३४९४

राम झरोखे बैठ के

फुटपाथ के रैन बसेरे

● गोपाल चतुर्वेदी

हमारा एक विकसित नगर है। क्यों न हो, राजधानी जो ठहरी। मुल्क के सबसे पिछड़े सूबे की। अविकसित सूबों की एक खासियत है। वहाँ के मंत्री-अफसर खूब विकसित होते हैं। उनके कोठी-बँगले के हर कमरे में एक अदद एअर कंडीशनर और हीटर होना ही होना। मुल्क का मौसम इधर आदमी से भी बदतर है। कौन कहे कब बदल जाए। सवेरे-सवेरे सर्दी हो और दोपहर तक वातानुकूलन की नौबत आ जाए। इसी सूबे के पर्यावरण मंत्री विद्वानों की सभा में फरमा भी चुके हैं, ''पहले आप लोग कहते थे कि ग्लोबल वार्मिंग के दिन हैं! इधर जो कुदरत की कूलिंग है, उसे आप क्या कहेंगे?''

विद्वान् क्या कहते! एक-दूसरे का मुँह ताकते रह गए। मंत्री को छूट है। वह अनाप-शनाप, अंट-शंट कुछ भी बकने को आजाद हैं। इधर लोग पागलों को ज्यादा गंभीरता से लेते हैं, मंत्री और आला अफसरों के बजाय!

अविकसित प्रांतों की एक और विशेषता है। चुनाव जीतने के पहले तक प्रत्याशी की हसरत जन-प्रतिनिधि बनने की होती है। एक बार चुनाव जीता नहीं कि यही शख्स देवदूत बनता है। उसके अंदर देवत्व जाग्रत् होता है। उसके खुरदुरे मोटे हाथ कर-कमल और अभी तक चप्पल चटकाते पैर अचानक श्री-चरण बनते हैं। जिस गरदन को, उसके आपराधिक कृत्यों से, फाँसी के फंदे से नपना था, फूलों से लादी जाती है। यह दीगर है कि उसकी गरदन में कितने भी गुलाब-गेंदे की मालाएँ बरबाद हों, उसके व्यक्तित्व से दुष्कर्मों की दुर्गंध ही उभरती है।

जाहिर है कि ऐसे पिछड़े प्रांतों के खेतों में गेहूँ-धान उगें न उगें, पर भ्रष्टाचार की फसल खूब लहलहाती है। एक-एक आला अफसर में कमाई की होड़ है। सब कमाऊ पर बिकाऊ हैं! अनुत्पादक कुरसियाँ सजायाफ्ता याने गिने-चुने थोड़े ईमानदार और थोड़े आत्मसम्मानी अफसरों के लिए आरक्षित हैं। यह सियासी आका के लिए वसूली के लक्ष्य में चूके थे। डाँट-डपटे गए तो बजाय सिर झुकाकर 'सॉरी' कहने के, इन्होंने जुबान लड़ाने की हिमाकत की थी। ऐसे नाकारा-नालायकों का एक ही इलाज है, जल्दी-से-जल्दी उनका अनर्थ (जहाँ अर्थ उर्फ पैसा न हो) वाले पदों पर तबादला।

ऐसे सूबों में कार्यकुशलता, श्रम-परिश्रम का कोई महत्त्व नहीं है। जरूरी है तो फिर यह है कि सियासी आका की हाँ में हाँ मिलाओ! उसके मन की अव्यक्त बात पढ़ने का प्रयास करो। उसी के अनुसार प्रस्ताव दो। अगर इस कला में महारत है तो फिर कहना ही क्या! तरक्की के दरवाजे ऐसों के लिए खुले ही नहीं हैं, उनके स्वागत के लिए वहाँ बंदनवार भी सजे हैं। शिखर में आमंत्रण की शहनाई भी गूँज रही है।

इसका एक अन्य सुखद परिणाम है। जो अफसर सियासी आका को कभी सूटकेस, कभी हीरे-जवाहरात खिलाते हैं, वह खुद क्यों न खाएँ। यह तो वैसा ही विरोधाभास है कि कोई रसोईया पूरे घर को छप्पन भोग खिलाए और खुद भूखा रहे। यों खिलानेवाले अफसर और पकाने वाले रसोइए में एक समानता है। दोनों खुद भी खाते हैं, पर अकाल पीड़ित की छवि बनाकर। इस छवि के भी फायदे हैं। मालिक रहमदिल है, दयावान है। कभी-कभी ऐसे निष्ठावानों को टुकड़ा फेंक देता है, जैसे लोग पालतू कुत्ते को! कोई उसके खाने की शिकायत करे तो वह तत्काल हड़काता है, ''ऐसी निरीह शक्लवाला बेचारा अनुमति के बिना पानी तक नहीं पीता है, खाएगा कैसे? आप उसे व्यर्थ में बदनाम करने पर तुले हैं।''

इस पारस्परिक खिलाई-पिलाई का नतीजा खतरनाक है। ऐसी शाश्वत दौड़ में व्यस्त महारथी जनता की भलाई की सोचें तो कैसे सोचें? उनके पास फुरसत ही कहाँ है? उनके चहेते अफसर उन्हें विश्वास दिलाते हैं, ''सर! आप इसी प्रकार खाते रहो। आप ही तो जनता के सर्वोच्च प्रतिनिधि हैं। आपने खाया, जनता ने खाया, फर्क ही क्या है?''

इसके बाद वह 'सर' को आश्वस्त करते हैं कि उन्होंने जन-कल्याण की इतनी योजनाएँ बना रखी हैं कि एक बार वे शुरू हुई नहीं कि जनता को कल्याण की अपच हो जाएगी। उसे खट्टी डकारें आएँगी। उसके पेट में ऐसा अफरा होगा कि वह लंबी तानकर सोएगी। उनका सियासी आका से एक ही अनुरोध है, ''सर! आप बस थोड़ा समय निकालिए और हमारी कागजी सुख-समृद्धि को जमीन पर उतारकर उनका शिलान्यास कर दीजिए!''

सत्ताधारी राजनीतिज्ञ हमेशा जनहित का उधार खाए बैठे रहते हैं। वे जानते हैं कि ऐसी किसी भी स्कीम में करोड़ों का बजट है। पंद्रह-बीस परसेंट का 'कट' वो अफसर के माध्यम से मिलना-ही-मिलना। इससे बेहतर क्या होगा कि वोटर का भी भला हो और अपना भी? इसलिए तो विद्वान् बताते हैं कि जनतंत्र नेता के लिए, नेता के द्वारा जनता को उल्लू बनाने का तंत्र है। दल कोई भी हो। इस मंत्र को अपनाने में सब एकमत हैं।

चुनाव पास आ रहे हैं। आज के नेता अतीत के राजा-महाराजा हैं, बस पोशाक और सवारी का फर्क है। इलेक्शन की दस्तक पर नेता ने सोच-समझकर फैसला किया कि वह पहले के राजाओं की तर्ज पर, भेष बदलकर अपनी प्रजा के हालात का मौका-मुआयना करेगा। उसके विश्वस्त सहायकों ने समझाया कि बिना सिक्योरिटी उसे निकलना नहीं चाहिए। आशंका जान की है। दुश्मन ताक लगाए ऐसे ही किसी अवसर की तलाश में है। वह नहीं माना! लोकतंत्र का वीर जो ठहरा। कई सार्वजनिक सभाओं में उसकी हाय-हाय हुई थी। ईंट-पत्थर चले थे, पर वहाँ से वह फिर भी नहीं टला था।

भेष बदले राजा को अपनी लोकप्रियता बढ़ाने का एक स्वर्णिम अवसर इन फुटपाथ पर ठिठुरते लोगों में नजर आया। उसने अधिकारी को निर्देश दिया, ''कल रात हम फिर आएँगे और इन्हें कंबल बाँटेंगे। इंतजाम करो।'' दूसरी रात मंत्री अपनी सिक्योरिटी के साथ बिना शक्ल बदले आया। उसके पीछे एक कंबल भरी गाड़ी भी थी। उसने कंबल बाँटे, फुटपाथ के रैन-बसेरे में। उसके साथ प्रेस के संवाददाता भी थे। उन्हें अच्छी गुणवत्ता वाले कंबल दिए गए। वह भी दो-दो। फोटू खिंची। लौटकर व्हिस्की-मुरगा चला। बड़ी-बड़ी फोटुओं के साथ मंत्री महाराज की कंबल-दरियादिली सुर्खियों में छाई।

उसने सबको बताया कि मरते तो सब हैं, एक न एक दिन। अगर उसे शहीद ही होना है तो वह लोकतंत्र पर शहीद होगा। रात को उसने नकली मूँछें, दाढ़ी, जटा जूट लगाए। वह जानता था कि इस सेक्यूलर देश में स्वामी-साधू आज भी सेफ हैं। उसके साथ भगवा पहने उसका आला अफसर भी था। सियासी आका ने देखा कि हाड़ कँपाती सर्दी में भी हर फुटपाथ पर ठिठुरते-काँपते लोग पड़े हैं। उसने अफसर को प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा। अफसर उसका मन भाँपने का एक्सपर्ट था। तभी उसका प्रमुख अधिकारी था। उसने सूचित किया, ''सर, यह रोड जो है, 'टू इन वन' है। दिन में आवागमन के काम आती है, रात को इसके फुटपाथ रैन बसेरा बनते हैं। इन सबके अपने घर हैं। दरअसल ये कुदरत के इतने करीब हैं कि खुले गगन के नीचे ही इन्हें नींद आती है।''

''और सर्दी?'' भेष बदले आका ने सवाल उठाया।

''सर! ये सब खाँटी हिंदुस्तानी हैं। इनकी जिजीविषा इतनी प्रबल है कि बरसात, गरमी या जाड़े से इन्हें कोई अंतर नहीं पड़ता है। अपनी भी खाल गैंड़े की है, इनकी भी।''

भेष बदले राजा को अपनी लोकप्रियता बढ़ाने का एक स्वर्णिम अवसर इन फुटपाथ पर ठिठुरते लोगों में नजर आया। उसने अधिकारी को निर्देश दिया, ''कल रात हम फिर आएँगे और इन्हें कंबल बाँटेंगे। इंतजाम करो।'' दूसरी रात मंत्री अपनी सिक्योरिटी के साथ बिना शक्ल बदले आया। उसके पीछे एक कंबल भरी गाड़ी भी थी। उसने कंबल बाँटे, फुटपाथ के रैन-बसेरे में। उसके साथ प्रेस के संवाददाता भी थे। उन्हें अच्छी गुणवत्ता वाले कंबल दिए गए। वह भी दो-दो। फोटू खिंची। लौटकर व्हिस्की-मुरगा चला। बड़ी-बड़ी फोटुओं के साथ मंत्री महाराज की कंबल-दरियादिली सुर्खियों में छाई।

सियासी आका खुश हुए। उन्होंने फिर अफसर को तलब किया, ''तुमने हमें इस 'टू इन-वन' के बारे में पहले क्यों नहीं बताया। तुमने विकास का इतना ऐतिहासिक काम किया और वह भी हमें अँधेरे में रखकर। आगे से ऐसा नहीं होना चाहिए।'' अफसर कोई कम चतुर था? वह भी उनका निहितार्थ समझ गया। वह अगले दिन फिर आया। 'सर' उसने बताया, ''यह कंबल की डील भी टू इन-वन है। जैसे फुटपाथ रात को जन-जन के रैन-बसेरे हैं, वैसे ही यह कंबल भी।''

''वह कैसे?'' आका ने जिज्ञासा जताई।

''इस प्रकार सर!'' कहते हुए अफसर ने रुपयों से भरा एक सूटकेस उनके चरण-कमलों पर रख दिया। आका के चेहरे पर संतोष के भाव उभरे। पर वह मुसकराया नहीं। उसने अफसर को निर्देश दिया, ''तुम निरे गधे हो! जनहित का यह काम हर फुटपाथ पर होना चाहिए। गाँवों के लिए भी ग्राम-उत्थान का कोई ऐसा ही कार्यक्रम बनाओ। मुख्य ध्येय कंबल बाँटना हो। हम तो जाएँगे ही, जहाँ-जहाँ जा सकते हैं, बाकी हमारे छोटे जागीरदार-राजा याने राज्य मंत्री और मंत्री करेंगे।''

इधर सूबे में धड़ाधड़ 'कंबल बाँटे अभियान' चालू है, सबका अपना-अपना कट भी। इस महान् प्रजातंत्र की यही तो महानता है। अपने प्यारे प्रजातंत्र में जनकल्याण के नाम पर ऐसे 'सदाचार' का हर काम सूबे के सियासी राजा के इशारे पर ही होता है। उसूल सीधा है—

बस जनहित के नाम पर
है फंडों की छूट
सत्ता की इस हाट में,
लूट सके सो लूट

इस सबके बावजूद हर सरकार का दावा है कि तरक्की का तवारीखी सफर चालू है, वहीं फुटपाथ के रैन बसेरे की आबादी की दिनोदिन प्रगति का भी।

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

गोधूली की मधुवेला में

● धीरेंद्र प्रसाद सिंह

गांधी

हम भूल गए उस गांधी को
जो अहिंसा का सम्मान किया,
हम भूल गए उस महान् को
जो स्वच्छ विचार को मान दिया।
हम भूल गए उस मानव को
जो राजनीति का प्रहरी था!
हम भूल गए उस आत्मा को
जो त्यागमूर्ति का रूपक था।
हम भूल गए उस चिंतक को,
जो मानवता का रक्षक था।

जीवन के हर पहलू को जिसने,
नई दिशा, सम्मान दिया!
वह परसेवा का द्योतक था
सर्वजन हितकारी था,
चिंतन का स्तर ऊँचा कर,
भारत के गौरव, गरिमा को,
प्रखर नया आयाम दिया!
चाहता तो जीवन के
हर सुख को गले लगा लेता,
लेकिन एक त्याग की मूर्ति बन
देश का नाम कीर्तिमान किया!

समय है अब भी
इस महापुरुष को,
अंतर्मन से याद करें!
उनके चिंतन को अपनाकर,
उचित दिशा में आगे बढ़ें!

विस्मृति

जाता रे दिन कटता जाता
आसमान के नीचे,
रह जाता स्मरण की छाया
जिनके अमिट सहारे जीते!

यादें रह गईं धूमिल सी
सोच नहीं पाता है मन,
मन तो सब सँजोए रखता
तन करता रहता भ्रमण!

वृक्षों की कतारें
वैसी ही रह गई हैं
जल का शिथिल किनारा
दृढता से निशान बनी हैं
मूकदर्शक की तरह पड़ी हैं!

मनुष्य का क्षणिक इतिहास
सिमट जाता है भूत भविष्य में,
लेकिन मूक पेड़ की कतारें
छिपा लेती उन्हें मनोहारी दृश्य में!

खो जाता है होश हमारा
मिट जाते कष्टों के धूप,
समय चला जाता
हम भी चले जाते,
रह जाते विस्मृति के रूप!

एकांत वन

मानव का एकांत वन
बजे वीणा लुभाए मन,
जीवन की विचलित तरुणाई
परीलोक में ही लेता शरण!

निर्मल धारा की तरह
करत रहता है कोलाहल,

हिंदी-अंग्रेजी लेखन में समान महारत प्राप्त। 'माटी की खुशबू', 'आम्रपाली की हृदय-वेदना', 'धीरेंद्र प्रसाद सिंह की प्रतिनिधि कहानियाँ' (कहानी-संग्रह) एवं अंग्रेजी की पाँच कृतियाँ प्रकाशित।

गोधूली की मधुवेला में
गीत गाता रहता हर पल!

शीतल क्षण के दिन आए रे
दूर हुई धूप की वेला,
कुसुम संग उड़ती बाला
वरसाए फूलों की माला!

सहस्र पँखुड़ियों से आच्छादित
कोमलता के मधुर प्यार,
बिखेरकर सौरभ मनभावन
बरसा जाते सुख अपार!

क्या होता जब बन नहीं होते
मादक अदृश्य हवाएँ,
मन मसोसकर हम रह जाते
दिखती न कहीं बालाएँ!

बी-४०१,
चितरंजन पार्क
नई दिल्ली-११००१९
दूरभाष : ९७१८०९१९७५

कहानी

गुलमोहर के फूल

● दुर्गा प्रसाद

मैं ने महिलाओं को अपने से सदा दूर रखने का प्रयास किया, लेकिन वे कहते हैं न कि जिस चीज से परहेज कीजिए, वो साये की तरह आपका पीछा करती है, वही मेरे साथ हुआ।

कई दिनों से मैंने पत्र-पेटी नहीं खोली है। पत्नी उखड़ जाती है, ''आपने लेटर बॉक्स तो झुला दिया, लेकिन कभी खोलने का होश नहीं रहता।''

मैं बेमन से चाभी लेता हूँ और इसे खोलता हूँ। शालिनी का तीन वर्षों बाद सिंगल लेटर मिला है। मैं पिछवाड़े चला जाता हूँ। पत्नी चली आती है। मैं पत्र पढ़ने में व्यस्त हूँ। पत्र में ऐसी बात ही है। पत्नी झिड़क देती है, ''जरूर किसी औरत का लेटर होगा, जो इतना खोए हुए हैं, चाय पड़ी है, उसका भी खयाल नहीं।''

वह बोलकर चल देती है। एक बार नहीं, कई बार खत पढ़ गया और ईश्वर से प्रार्थना की कि बात जो लिखी गई है, झूठी हो जाए, लेकिन ऐसा होता है क्या? मुझे अपनी मूर्खता पर तरस आता है। मैं बुझे मन से उठ जाता हूँ। मन अशांत ही नहीं, अपितु क्लांत भी है।

शालिनी का डिवोर्स हो गया है। कल सुबहवाली फ्लाइट से राँची आ रही है। एक दो साल की बच्ची है। संयोग है कि एक बैंक में शाखा प्रबंधक है। अपने पाँव पर खड़ी है, न होती तो ऐसी दु:ख की घड़ी में न जाने कोई साथ देता कि नहीं, सोचने से ही··· ?

शालिनी संभ्रांत परिवार की स्वाभिमानी महिला है। वाणी में मिठास इतनी कि जब बोलती है, मधु चूता है। हम दोनों राँची में पी.जी. के स्टूडेंट थे। हमारा एक ही विषय था—अर्थशास्त्र। अकसर हम साथ-साथ स्टडी करते थे, जिससे आनंद की अनुभूति होती थी। वह सभी नोट लेकर चल देती थी। जमा करती थी कि पढ़ती थी, मुझे शक था, बड़ी अल्हड़ थी, लेकिन मैं झूठा साबित हो गया, जब वह फर्स्ट क्लास में उत्तीर्ण हो गई और मैं सेकेंड।

अनगिनत लड़के थे, जो उसके दीवाने थे, लेकिन वह सबकी नीयत से वाकिफ थी। मुझे बेहद प्यार करती थी। कई बार बातों ही बातों में इशारा भी किया था, लेकिन खुलकर नहीं बोली कि वह मुझसे शादी करना चाहती है। वैसे भी इस मामले में महिलाएँ संकोच करती हैं।

सुपरिचित लेखक। अब तक अनेकों व्यंग्य, कहानियाँ, लेख अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

जन्मजात गुण हैं। हम दोनों पी.ओ. में सिलेक्ट हो गए और शाखा प्रबंधक में मेरी पोस्टिंग राँची हो गई और उसकी दिल्ली।

हम जब भी मिलते तो दिल से मिलते। हमने एक-दूसरे को कभी भी बुरी नजर से नहीं देखा। हमारा संबंध आंतरिक रहा। जब किसी औरत को यह बात मालूम हो जाती है तो वह प्राणों से भी अधिक चाहने लगती है। कई बार तो हम एक ही कमरे में सो जाते। वह अपलक मुझे निहारते हुए एक मासूम बच्ची की तरह सो जाती। कभी आकर, पता नहीं कब मेरे पास मुझे पकड़कर सो जाती, मुझे भी पता नहीं चलता। दिनभर साइकल चलाते-चलाते थककर चूर हो जाता था।

उसका पत्र मेरे हाथ में है—'विवाह करने से पूर्व मैंने आपसे सलाह नहीं ली। यहीं पर मैं एक बड़ी भूल कर गई।' उसने शब्दों को तो लिखा, लेकिन आँसुओं की बूँदों से। पति बिल्डर है। सब्जबाग में फँस गई। बैंक में आना-जाना होता था, निहायत खूबसूरत-जवान, ऐशो-आराम, अपना फ्लैट, सबकुछ; पर भीतर से काले और ऊपर से काली कमाई। एक तो करेला, दूजा नीम चढ़ा।

एक बच्ची हो गई तो पति को रसहीन प्रतीत होने लगी। पति का आचरण शुरू से खराब था। अब और खराब हो गया। कलियों के जुगाड़ में लगे रहते और डिवोर्स का बहाना खोजने में जुटे रहते। शालिनी ने बता दिया था, पहली रात को ही कि वह मुझे बेहद चाहती थी, शादी भी करना चाहती थी, लेकिन वह बोल नहीं पाई। शादी न हो सकी।

पुरुष के लिए इतना जानना कि उसकी पत्नी का विवाह पूर्व किसी गैर-मर्द से मोहब्बत थी, कितनी भयावह स्थिति हो सकती है, आप कल्पना कर सकते हैं। पुरुष के मन में एक बार ऐसी बात घर कर गई तो···बताने की आवश्यकता नहीं है। उसका एक नहीं, अनेक महिलाओं से संपर्क हो, कोई माने नहीं रखता, भले ही अनैतिक ही क्यों न हो और यदि इधर नैतिक भी हो तो बहुत माने रखता है।

मुझे पत्नी को विश्वास में लेना पड़ा। शालिनी कुछेक दिन यहीं रहेगी। कल सुबह फ्लाइट से आ रही है। साथ में लेने चलना है। दो साल की एक बच्ची भी है। मैं रात भर ठीक से सोया नहीं।

हम लोग वक्त पर एयरपोर्ट पहुँच गए। मेरी पत्नी ने बच्ची को

हाथों ही हाथों में थाम लिया। एक टैक्सी ली और घर चले आए। विषाद में भी हर्ष सन्निहित होता है, वह मुझे आज आँखों से अवलोकन करने का अवसर मिला। बच्ची चाची की गोद में प्रसन्न और शालिनी मेरी बाँहों में!

''रो रही हो?'' मैंने पूछा।

''हाँ, ऐसे ही।''

''ऐसे क्या? जरूर कोई बात है?''

''मैं भावुक हो गई।''

''पुरानी बातों को याद करके।''

''हाँ।''

''मुझे भी याद हो आया।''

''वही, जो तुम अकसर गुनगुनाया करती थीं—'तू जहाँ-जहाँ चलेगा, मेरा साया साथ होगा।'

''आपके सिवा मेरे मन की बात को कौन जान सकता है।''

हम मिलकर कितने खुश थे, इसे शब्दों में बयाँ नहीं किया जा सकता, आज मेरी बारी है गुनगुनाने की।

''तो किसने रोका है।'' मेरी पत्नी बोल पड़ी।

हम तीनों एक साथ गुनगुनाते हुए बेडरूम तक चले आए—

'तू जहाँ-जहाँ चलेगा, मेरा साया साथ होगा।'

हम हँसते-हँसते लोटपोट हो गए।

अब भी शालिनी में वही''जब हँसती है तो मानो गुलमोहर के फूल झरते हैं।

बीच बाजार जी.टी. रोड
पोस्ट-गोविंदपुर
धनबाद-८२८१०९ (झारखंड)

कविता

जनमानस का है आह्वान

● वेद भूषण त्रिपाठी

स्वच्छ भारत-स्वस्थ भारत

जनमानस का है आह्वान,
सुख-समृद्ध हो देश महान्।
जन-जन की सोच संस्कृति में,
प्रगतिशील हो राष्ट्र महान्।
मानवता का पाठ पढ़ाए,
भारत का इनसान।
निर्भयता का मार्ग दिखाए,
गांधी देश महान्।
मानव भी स्वस्थ रहे जग में,
परिजन भी स्वस्थ रहें घर में।
शुद्ध स्वच्छ हो भारत अपना,
हो उद्दीप्त राष्ट्र का सपना।
स्वच्छ शरीर स्वच्छ मस्तिष्क,
सुविचार संस्कार पुष्पित-पल्लवित।
स्वच्छ भारत-स्वस्थ भारत,
सुख-समृद्ध ऐश्वर्य भारत।

गणतंत्र

आह्वान है गणतंत्र का,
गणराज्य भारत देश है।
जहाँ वेशभूषा नेक,
और भाषा अनेक हैं।
सत्य अहिंसा प्रेम की,
बहती जहाँ रसधार है।
है अनेकता में एकता,
समरसता की बहार है।
पर्वतों की शृंखलाएँ,
शुभ्रता की ताज हैं।

शुद्धता के रूप में,
बहती जहाँ जलधार है।
जननी जन्मभूमि का
स्नेहपूर्ण शृंगार है।
प्राकृतिक समृद्धिशाली,
स्वच्छ भारत देश है।
भारतीय संस्कृति का,
विश्व में सुप्रभाव है।

रनीवां, अंबेदकर नगर-२२४१४१
दूरभाष : ९४५३६२०७४९

शक्ति पर्व : नवरात्र व विजयादशमी

● रिचा शर्मा

भारतवर्ष मूलत: पर्व-त्योहारों का देश है। इसकी तासीर आध्यात्मिक है। अध्यात्म भारतीय संस्कृति का मूलाधार है। संपूर्ण विश्व में भारत-भू ही एक ऐसी पुण्यभूमि है, जहाँ देवताओं, देवियों, मुनियों, ऋषियों एवं तपस्वियों के साथ-साथ पर्वतों, नदियों, वृक्षों एवं पशु-पक्षियों को भी ईश्वर तुल्य मान पूजा जाता है। शक्ति इस सृष्टि का आधार है। इसके द्वारा ही चराचर जगत् जीवंत और प्राणवान् है। शक्ति ही सबकी पालनहार है। यह शक्ति ही सृष्टि के कण-कण में असंख्य रूपों में विराजमान है। हमारे शरीर, इंद्रियों और मन का संचालन भी शक्ति द्वारा ही होता है। जल, वायु तथा अग्नि की समस्त क्रियाओं में शक्ति ही समाहित है। ब्रह्म में सत्, चित् और आनंद आदि जो गुण हैं, उनका मूल स्रोत भी शक्ति ही है। जगत् की समस्त क्रियाशीलता का श्रेय शक्ति को ही जाता है। जानने, समझने, सुनने, स्पर्श करने आदि की सारी क्रियाएँ इस शक्ति के कारण ही हैं। इस शक्ति के बिना ही शिव शव बन जाते हैं। इसी शक्ति को 'आद्या शक्ति' अथवा 'महाविद्या' भी कहा जाता है। आदिशक्ति, आदिमाया, पराशक्ति, महामाया, कुंडलिनी आदि नामों से ख्यात यह शक्ति आखिर है कौन?

श्रीमद्देवीभागवत महापुराण के पाँचवें स्कंद में देवी शक्ति का विस्तृत वर्णन है कि दैत्य महिषासुर की तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी ने इच्छित वरदान माँगन को कहा। महिषासुर ने 'अमरत्व' माँग लिया। तब ब्रह्माजी ने उसे प्यार से समझाया कि 'वत्स महिषासुर! इस सृष्टि में जनमे प्राणी की मृत्यु अवश्य होती है और यह क्रम निरंतर अबाध चलता रहता है। अत: अमरत्व को छोड़कर कोई दूसरा वर माँग लो।' तब महिषासुर बोला, 'पितामह! फिर तो मुझे इच्छित रूप धारण करने का वर दो। देवता, दैत्य, गंधर्व, यहाँ तक कि मानव—इनमें से किसी के हाथों मेरी मृत्यु न हो और मेरी मृत्यु हो भी तो ऐसी कन्या के हाथों हो, जो कुँवारी हो तथा जिसका जन्म किसी के गर्भ से न हुआ हो।' ब्रह्माजी ने महिषासुर को इच्छित वर दे दिया।

वर प्राप्त करते ही महिषासुर घोर अभिमानी हो गया। समस्त प्राणियों को अपने अधीन कर लिया। अपने बाहुबल से समस्त पृथ्वी को जीत लिया। इतना ही नहीं, उसने स्वर्ग में जाकर इंद्र को चुनौती दी। देव-असुर युद्ध छिड़ गया और उसने सभी देवताओं का मान-मर्दन कर दिया। आखिर भगवान् शिव और विष्णु भी उस दैत्य का कुछ न बिगाड़ सके। त्रिदेव तो अपने-अपने लोक को चले गए और इंद्रादि देवता वन-कंदराओं में जाकर छिप गए। कुछ काल के पश्चात् सब देवों ने भगवान् विष्णु से गुहार लगाई। संकट की विकट घड़ी को देखकर विष्णुजी की भौंहें तन गईं और मुख

नवोदित लेखिका। लेखन-पठन-पाठन में रुचि। पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित। संप्रति दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातक करने के बाद साउथ दिल्ली पॉलीटेक्निक कॉलेज फॉर वीमन में अध्ययनरत।

टेढ़ा हो गया। अत्यंत क्रोधावेश में भरे विष्णु के मुख से एक महान् तेज प्रकट हुआ। इसी तरह से ब्रह्मा, शिव, इंद्र आदि देवताओं के शरीर से भी प्रबल तेज निकला। ये सब तेज मिलकर एकाकार हो गए। तेजपुंज की आकाश को छूती तथा संपूर्ण दिशाओं में व्याप्त लपटें एक कन्या रूप में बदल गईं, और फिर यह तीव्र प्रकाश तीनों लोकों को आलोकित करने लगा। भगवान् रुद्र के तेज से उस देवीशक्ति का मुख प्रकट हुआ, यमराज के तेज से उसके सिर में बाल निकल आए। श्रीविष्णु के तेज से उसकी भुजाएँ, चंद्रमा के तेज से दोनों स्तन तथा इंद्र के तेज से कटि, वरुण के तेज से जंघाएँ व पिंडलियाँ, पृथ्वी के तेज से नितंब, ब्रह्मा के तेज से दोनों चरण, सूर्य के तेज से पैर की उँगलियाँ, वसुओं के तेज से हाथों की उँगलियाँ, कुबेर के तेज से नासिका, प्रजापति के तेज से दाँत, अग्नि के तेज से उसके त्रिनेत्र, संध्यादेवी के तेज से भौंहें, वायु के तेज से कान उत्पन्न हो गए। इसी तरह अन्य देवताओं के तेज से कल्याणमयी देवीशक्ति साकार हुईं।

ऐसी महातेजस्वी देवीशक्ति को देखकर देवता अति प्रसन्न हुए। उन्हें संपूर्ण समर्थ बनाने के लिए भगवान् शंकर ने अपने त्रिशूल में से एक त्रिशूल भेंट किया। भगवान् विष्णु ने चक्र, वरुण ने शंख, अग्नि ने शक्ति, वायु ने धनुष तथा बाणों से भरे हुए दो तरकश, देवराज इंद्र ने वज्र, ऐरावत हाथी ने एक घंटा, यमराज ने कालदंड, वरुण ने पाश, प्रजापति ने स्फटिक की माला, ब्रह्माजी ने कमंडलु, सूर्यदेव ने देवीशक्ति के समस्त रोम-कूपों को अपनी किरणों के तेज से भरा, काल ने चमचमाती तलवार और ढाल दी; क्षीर सागर ने उज्ज्वल हार तथा कभी न क्षय होनेवाले वस्त्र के अलावा दिव्य चूड़ामणि, दो कुंडल, अर्धचंद्र, सब भुजाओं के लिए कंगन, चरणों के लिए घुँघरू, गले के लिए सुंदर हँसली और उँगलियों के लिए रत्नजड़ित अँगूठियाँ भेंट कीं। विश्वकर्मा ने उन्हें धारदार फरसा तथा अभेद्य कवच दिया। सागर ने कमल का पुष्प तथा हिमालय ने सवारी के लिए सिंह, कुबेर ने मधु से भरा पात्र, शेषनाग ने उन्हें अनमोल मणियों से विभूषित नागहार तथा अन्य देवताओं ने कुछ-न-कुछ भेंट कर उन्हें और भी शक्तिवान बनाया।

ऐसी देवीशक्ति ने उच्च स्वर में सिंहनाद किया, जिससे संपूर्ण ब्रह्मांड में हलचल मच गई। इसके साथ ही उनका दैत्यों से युद्ध छिड़ गया। महिषासुर का सेनापति तथा प्रमुख योद्धा दैत्य मारे गए। मायावी महिषासुर नाना रूप बदलने लगा, लेकिन महादेवी ने प्रपंची महादैत्य का सिर काट डाला। दैत्यों की बाकी सेना भाग खड़ी हुई। देवताओं ने हर्षित होकर महादेवी शकित यानी देवी दुर्गा का पूजन किया।

पौराणिक वाङ्मय में जगज्जननी की बड़ी महिमा गाई गई है। महाभारत ग्रंथ के 'भगवद्गीता' भाग में शक्ति तत्त्व का विशद वर्णन है। 'मार्कंडेय पुराण' में शक्ति तत्त्व, तांत्रिक ग्रंथों में शक्ति देवी का पर्याप्त वर्णन है। 'मार्कंडेय पुराण' में ही 'दुर्गासप्तसती' है, जिसका नवरात्रों, होम-यज्ञादि में पारायण किया जाता है। 'अग्नि पुराण' में तंत्र के अंतर्गत शक्ति देवी का पूजा-विधान बताया गया है। 'कालिका पुराण' तो देवीशक्ति का अपने आप में एक स्वतंत्र पुराण ही है। 'ब्रह्मांड पुराण' के द्वितीय भाग में 'ललिता सहस्त्रनाम' पूरा प्रकरण ही देवीशक्ति पर है। 'कूर्म पुराण' में परमेश्वरी देवीशक्ति के आठ हजार नामों का वर्णन है। 'वाराह' व 'पद्म पुराण' के चारों युगों में तंत्र का ही उल्लेख है। 'ब्रह्मवैवर्त पुराण' में भगवान् कृष्ण ने शक्तिदेवी को ही जननीभूत ईश्वरी तथा मंगलों का भी मंगल करने वाली बताया है। 'कूर्म पुराण' में देवीतत्त्व की व्याख्या यों की गई है— 'वह देवी ही एकमेक, अद्वितीय, सर्वव्यापी, सूक्ष्म, अचल तथा नित्य स्वरूप है।' 'शिवपुराण' में महादेव शंकर संसारव्यापी पुलिंगता को तथा देवप्रिया स्त्रीलिंगता को धारण करनेवाली बताई गई हैं और तभी शिव अर्धनारीश्वर हैं। 'गरुड पुराण' में देवीशक्ति की महत्ता तथा तांत्रिक विधि-विधान बताए गए हैं। भगवती देवीशक्ति के महत्त्व को सब पुराणों में श्रद्धा के साथ स्वीकार किया गया है।

इन्हीं शक्तिदेवी के नौ स्वरूपों की वर्ष में दो बार नौ दिनों तक पूजा-उपासना की जाती है। पहले वर्षप्रतिपदा पर चैत्र मास में तथा दूसरे आश्विन मास में, जिन्हें 'शारदीय नवरात्र' भी कहा जाता है। एक अक्तूबर से माता के नवरात्रे शुरू हो रहे हैं।

पहला नवरात्रा : प्रथम दिन यानी पहले नवरात्रे को देवीशक्ति 'शैलपुत्री' के रूप में पूजी जाती हैं। यही भगवान् शंकर की अर्धांगिनी बनीं। नवदुर्गाओं में ये प्रथम दुर्गा हैं। ये मनोवांछित सिद्धि देनेवाली हैं।

दूसरा नवरात्रा : माँ शक्ति का दूसरा स्वरूप 'ब्रह्मचारिणी' का है। दूसरे नवरात्रे को इन्हीं की उपासना की जाती है। कठोर तपस्या की चारिणी होने के कारण इन्हें ब्रह्मचारिणी कहा जाता है। इनकी उपासना से त्याग, वैराग्य एवं असीम धैर्य की प्राप्ति होती है। इन्हें ज्ञान का भंडार माना जाता है और ये सर्वत्र विजय दिलाने वाली हैं।

तीसरा नवरात्रा : तीसरे नवरात्रे में माँ शक्ति के 'चंद्रघंटा' स्वरूप की पूजा होती है। इनके आराधक को भुक्ति और मुक्ति प्राप्त होती है। कांचीपुरम् (कर्नाटक) में ये माता 'कामाक्षा देवी' के रूप में पूजी जाती हैं।

चौथा नवरात्रा : चौथे नवरात्रे को 'माता कूष्मांडा' की आराधना की जाती है। इनकी भक्ति एवं तेज से समस्त दिशाएँ प्रकाशित हो रही हैं।

पाँचवाँ नवरात्रा : पाँचवें नवरात्रे को शक्तिदेवी के पाँचवें स्वरूप 'स्कंदमाता' की पूजा-उपासना की जाती है। ये भक्तों की समस्त इच्छाएँ पूर्ण करनेवाली तथा मोक्ष का द्वार खोलनेवाली हैं। इनकी कृपा से मूढमति भी ज्ञानवान हो जाता है। ये चेतना का निर्माण करने वाली माता हैं।

छठा नवरात्रा : भगवती शक्ति का छठा रूप 'कात्यायिनी' का है। ये माता अमोघ फल देनेवाली हैं। ब्रजमंडल में ये अधिष्ठात्री देवी के रूप में प्रतिष्ठित हैं। भगवान् कृष्ण को पति रूप में प्राप्त करने के लिए ब्रज की गोपियों ने कालिंदी के तट पर इन्हीं माता की पूजा-अर्चना की थी। ये जन्म-जन्मांतर के पापों को विनष्ट करनेवाली हैं।

सातवाँ नवरात्रा : सातवें नवरात्रे को माँ शक्ति के 'कालरात्रि' स्वरूप की अभ्यर्थना की जाती है। इनकी कृपा से समस्त पाप-विघ्नों का नाश हो जाता है। इनका भक्त पूर्णत: भयमुक्त हो जाता है और ये शुभंकरी देवी भी हैं।

आठवाँ नवरात्रा : माँ शक्ति का आठवाँ स्वरूप 'महागौरी' का है। महाष्टमी को इन्हीं की पूजा-उपासना की जाती है। इनकी उपासना अमोघ तथा सद्य: फलदायी है, भक्तों का सर्वविध कल्याण होता है तथा अलौकिक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। पुराणों में इनकी बड़ी महिमा गाई गई है।

नौवाँ नवरात्रा : माँ शक्ति का नौवाँ स्वरूप 'सिद्धिदात्री' के नाम से विख्यात है। नवरात्रे के अंतिम दिन इनकी पूजा-उपासना का विधान है। 'देवीपुराण' के अनुसार भगवान् शिव ने इन्हीं की कृपा से सिद्धियाँ प्राप्त की थीं। ये समस्त सिद्धियों को देनेवाली हैं। इनकी कृपा के फलस्वरूप संसार में कुछ भी प्राप्त करना संभव हो जाता है। इन नवरात्रों में देवी शक्ति की उपासना करने से आध्यात्मिक शक्ति एवं शांति की प्राप्ति होती है। मनुष्य के अंदर के छल, कपट, क्रोध, दुर्विचार, ईर्ष्या-द्वेष आदि भावों का नाश हो जाता है। देवीशक्ति अनन्य कृपा करनेवाली हैं।

विजयादशमी : महाप्राण 'निराला' कृत 'राम की शक्तिपूजा' में भगवान् राम शक्ति देवी की निरंतर उपासना कर उन्हें अपने पक्ष में कर लेते हैं और दैत्य रावण के वंश का विनाश कर डालते हैं। रामायण में भी वर्णन आया है कि भगवान् राम ने शक्तिदेवी की कृपा प्राप्त कर महापराक्रमी रावण का वध किया। इसी के उपलक्ष्य में नवरात्रे के बाद दसवें दिन रावण के पुतले जलाए जाते हैं। दशहरा पर्व बुराई पर अच्छाई का, असत्य पर सत्य का, दुष्टता पर शिष्टता की विजय का प्रतीक है। अंतत: सत्य की ही विजय होती है। उत्तर भारत में तो क्या नगर, क्या गाँव, नौ दिनों तक भगवान् राम की लीलाओं का मंचन होता है। महानगरों में तो बड़े ही भव्य-दिव्य

रूप में रामलीलाओं के विशाल आयोजन होते हैं। यहाँ तो दशहरा की शान निराली होती है। जैसे बंगाल आदि में दुर्गा-विसर्जन का जुनून देखा जाता है, उसी प्रकार दिल्ली और उत्तर भारत में रावण-कुंभकर्ण के पुतला-दहन के दर्शनार्थ लाखों लोग उमड़ पड़ते हैं।

देवी-पूजा के नाना रूप : देश के कोने-कोने में देवीशक्ति की उपासना किसी-न-किसी रूप में अवश्य की जाती है। बंगाल, बिहार, उड़ीसा, यहाँ तक कि बँगलादेश में 'दुर्गापूजा' का पर्व धूमधाम से मनाया जाता है। गरीब की झोंपड़ी से लेकर आलीशान और धनाढ्य कोठियों में 'माता की चौकी' सजाई जाती है। महानगरों में तो बड़े-बड़े भव्य पंडालों में दिपदिप और जगमग रोशनी के बीच माँ दुर्गा की झाँकियाँ सजाई जाती हैं। नौ दिन तक श्रद्धापूर्वक पूजा-अर्चना कर आरती उतारी जाती है। हजारों-लाखों भक्त जन यहाँ आकर माँ दुर्गा का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। यहाँ गाँव-गाँव में दुर्गापूजा के सामूहिक आयोजन होते हैं। चहुँओर माँ की कृपा बरसती प्रतीत होती है और बड़ा ही अलौकिक वातावरण बन जाता है। भक्तजन अपने को सनाथ, सुखी एवं स्वस्थ महसूस करते हैं।

इधर उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश आदि राज्यों में नवरात्रे धूमधाम से मनाए जाते हैं। प्रतिदिन भगवती दुर्गा की पूजा-उपासना होती है। नवरात्रे के नौवें दिन समापन पर माँ शक्ति की प्रतीक कन्याओं को जिमाया जाता है, उनकी पूजा की जाती है, तत्पश्चात् उपवास तोड़ा जाता है। कुछ भक्त जन पहले और आखिरी नवरात्रे को उपवास रखते हैं, कुछ पूरे नौ दिन का उपवास रख माँ दुर्गा की आराधना करते हैं। माँ के कुछ भक्त ऐसे भी हैं, जो निर्जला उपवास रखकर माँ शक्ति का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। गरीब से गरीब गृहस्थ भी कन्या जिमाकर माँ की अनुकंपा पाने का आकांक्षी रहता है। इन दिनों रात्रि में माता के विशाल जागरण और भंडारे आयोजित होते हैं। नौ दिनों तक पूरा वातावरण आध्यात्मिक आनंद से सरोबार हो जाता है। कुछ गृहस्थ धार्मिक यात्राओं या किसी देवी की जात करके लौटने के बाद माँ दुर्गा का हवन आदि कराते हैं। इन दिनों धार्मिक संस्थाएँ भी हवन, यज्ञादि के आयोजन करती हैं तथा और भी नाना प्रकार के धार्मिक आयोजन होते हैं।

विभिन्न पौराणिक ग्रंथों में शक्तिपीठों की संख्या ५१, ५२ तथा १०८ तक बताई गई है। ये शक्तिपीठ देश-विदेश यानी सर्वत्र फैले हुए हैं। जहाँ हिंगलाज माता (कोट्टरी शक्तिपीठ) कराची में विराजमान हैं, वहीं सुनंदा माता बँगलादेश में पूजित हैं। पहलगाम (कश्मीर) में महामाया शक्तिपीठ है तो हिमाचल प्रदेश में ज्वालामाई, चिंतपूर्णी, काँगड़ामाई, नगरकोटि माता पूजित हैं। जम्मू में माता वैष्णो साक्षात् विराजमान हैं। कलकत्ता में कालका माई हैं तो पुरी (उड़ीसा) में विमला देवी पूजी जाती हैं। असम में कामाख्या देवी हैं, तो नेपाल में गंडकी चंडी माता तथा त्रिपुरा में त्रिपुरसुंदरी माता विराजमान हैं। प्रयाग में ललिता माता का वैभव फैला है तो पुष्कर में गायत्री माता पूजी जा रही हैं। यही शक्ति तमिलनाडु में नारायणी देवी हैं तो शैलश्री में श्रीसुंदरी देवी हैं। प्रभास क्षेत्र में चंद्रभागा माता हैं तो मिथिला में उमा देवी पूजित हैं। वक्रेश्वर में महिषमर्दिनी माता भक्तों का कल्याण कर रही हैं।

देवी की जात व मेले : माँ की चेतन-शक्ति अव्यक्त रूप में सर्वत्र निवास करती है। यही माँ नंदिनी देवी, यशोरेश्वरी, जयदुर्गा, कुमारी, विश्वेश्वरी, भ्रामरी, अवंति, वाराही, शिवानी, सावित्री, मनसा, नैना देवी, मुक्तकेशी, महाबाला, भद्रकाली, नारायणी, कालरात्रि आदि नाना रूपों में पूजी जाती हैं। यही माता कहीं विंध्यवासिनी हैं तो कहीं महामाया हैं, तो कहीं योगमाया के रूप में पूजित हैं। कोई नगर, शहर या गाँव ऐसा नहीं, जहाँ देवीशक्ति माता के रूप में न पूजी जाती हों। देश भर में जगह-जगह मान्यता के अनुसार माता के मेले और जात लगती हैं, जैसे शीतला माता (गुड़गाँव) की जात, नगरकोटि वाली माता की जात, ज्वालामाई की जात। माता वैष्णो देवी के दर्शनार्थ तो वर्ष भर तीर्थयात्रियों का ताँता लगा रहता है। विश्व की सबसे लंबी (२८० किमी.) दुर्गम तथा अत्यधिक कठिन पैदल धार्मिक यात्रा 'नंदादेवी राजजात' यात्रा है, जो उत्तराखंड राज्य में भाद्रपद शुक्ल पक्ष यानी अगस्त महीने में आयोजित की जाती है।

'मत्स्यपुराण' में धर्मकामार्थ के तेरहवें अध्याय में इसकी चर्चा है कि यज्ञविध्वंश एवं देवीश्राप से मुक्ति के लिए दक्ष प्रजापति द्वारा विनती किए जाने पर देवीशक्ति ने कहा, 'आने वाले समय में मैं १०८ नामों से प्रसिद्ध पीठों में अवतरित होऊँगी। तब मेरे किसी भी पीठ के दर्शन एवं नाम-श्रवण मात्र से व्यक्ति अपने पापों से मुक्त हो जाएगा। उन्हीं शक्तिपीठों में प्रमुख हिमालय भाग में मैं नंदा, कालञ्जरगिरी पर्वत पर काली, हिमगिरि पर भीमा, विनायक तीर्थ में उमा तथा बदरीवन में उर्वशी नाम से उपस्थित होऊँगी।'

शक्तिदेवी की महिमा वर्णनातीत है। त्रेता युग में भगवान् राम देवी शक्ति की पूजा-उपासना कर रावण का वध कर पाए। द्वापर में महाभारत युद्ध में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को शक्ति-स्तोत्र का पाठ करने की सलाह दी, तत्पश्चात् पांडव युद्ध में विजयी हुए। जहाँ आदि शंकराचार्य, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी ने भी भगवती देवी की पूजा की, वहीं स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने काली माता की उपासना करके आत्मदर्शन किए। दसवें गुरु गोविंद सिंहजी ने शक्ति की उपासना करके मुगलों से मुकाबला किया। अत: भारतीय दर्शन में शक्ति का स्वरूप बड़ा ही दिव्य और उदात्त है। शक्ति ही विश्व का सृजन, संचालन और संहार करती है। वही लक्ष्मी-रूपा है तो सरस्वती-रूपा भी। शक्ति ही सृष्टि का आदि कारण है। शक्ति ही परम तत्त्व है। आध्यात्मिक शक्ति अर्जित करने के लिए नवरात्रे सबसे उपयुक्त अवसर है।

नवरात्र पूजा विधि : अपने-अपने घर की आर्थिक स्थिति तथा उपलब्ध साधनों से नवरात्र पूजन की व्यवस्था करनी चाहिए। कोई तो दीवार पर देवी दुर्गा की तसवीर बना लेती हैं तो कोई चौकी पर माँ की झाँकी सजा लेती हैं। यह संभव न हो तो एक ऊँचे पटरे पर माँ की तसवीर सजा लें। इससे थोड़ा नीचे सफेद वस्त्र पर गणेशजी की मूर्ति भी सजा लें। यहीं एक स्थान पर चावल की नौ ढेरी और दूसरी जगह पर लाल रँगे चावलों की सोलह ढेरियाँ बनाएँ। इस प्रकार से नवग्रह तथा सोलह मातृकाएँ स्थापित करें। कलश में कलावा बाँधकर स्थापित करें। कुछ लोग प्रथम दिन जवारे भी उगाते हैं। नौ दिन तक नित्य देवी पूजा करें। धूप-दीप-अगर जलाएँ। फिर मौली, रोली, चावल, सिंदूर, गुलाल, फल-फूल से पूजा कर आरती उतारें। ज्योति प्रतिदिन जरूर जलाएँ। संभव हो तो पंडित से नौ दिनों तक पाठ कराते हुए नित एक कन्या तथा ब्राह्मण को भोजन कराएँ। इस तरह नित्य पूजा-आरती करते हुए अष्टमी या नौवीं को हलवा-पूरी बनाकर श्रद्धापूर्वक नौ कन्याओं को जिमाएँ, यानी भोजन कराएँ। अपनी सामर्थ्यानुसार सबको दक्षिणा, कपड़े आदि भेंट कर परिवार सहित कन्याओं के पैर छूकर आशीर्वाद अवश्य लें।

इसके अलावा जिन्होंने प्रतिदिन कन्या तथा ब्राह्मण को जिमाया है, वे नवरात्रों का पारायण कर कन्या तथा ब्राह्मण को वस्त्र, दक्षिणा आदि देकर विदा करें। देखने में आता है कि गृहस्थ लोग नौवीं के दिन कई घर जीम चुकी कन्याओं को ही बार-बार जिमाते हैं, भूख न होने पर वे चौके में कुछ भी जीम नहीं पाती हैं, फिर भी गृहस्थ लोग कन्या जिमाने का परम संतोष कर लेते हैं। यह कहाँ तक उचित है। गरीब और भूखे को जिमाने का पुण्य अलग ही होता है। पूरे नवरात्रों में पूजा-अर्चना के साथ-साथ दुर्गा सप्तशती का पाठ भी करना चाहिए, इससे मन की कुप्रवृत्तियों का दमन तथा मन के विकारों का मार्जन होता है। कन्याओं के पूजन एवं भोजन कराने से समाज में स्त्रियों के प्रति सम्मान एवं श्रद्धा-आदर का भाव बढ़ता है। कहा भी गया है—यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता। पूरे श्रद्धाभाव से नवरात्र व्रत रखकर अधिकाधिक पुण्य अर्जित करें। जय माता दी।

जी-३२६, अध्यापक नगर
नांगलोई दिल्ली-११००४१
दूरभाष : ०८२८५९१६७७७

गीत

एकात्म मानव

● इंदुशेखर तत्पुरुष

एकात्मवाद के मंगलपथ पर, मानव का कल्याण है,
अखिल विश्व को यह भारत के चिंतन का वरदान है।

मनुज मात्र की गरिमा कुंठित हो न किसी भी तंत्र से,
सामाजिक समरसता खंडित हो न व्यक्ति स्वातंत्र्य से।
धर्माधारित हों समाज में अर्थ-काम के नीति-नियम,
प्रकृति के प्रति नतमस्तक हो, भोग करें रखकर संयम।
व्यक्ति-समाज-सृष्टि-परमेश्वर से यह रचित विधान है।
एकात्मवाद के मंगलपथ पर··· ···

धनी-दरिद्री, ज्ञानी-मूरख, गोरे-काले, उच्च-अधम,
सबकी अपनी-अपनी सत्ता, कोई किसी से क्योंकर कम।
सब समष्टि के अंगभूत, सबका अधिकार बराबर है,
कर्मयोग से कोई अधिपति, कोई सेवक-चाकर है।
सारे मानव परम ब्रह्म की, सर्वश्रेष्ठ संतान हैं।
एकात्मवाद के मंगलपथ पर··· ···

जाति, पंथ, भाषा से निर्मित राष्ट्रीयता कृत्रिम है,
राज्यतंत्र की सीमाएँ भी, अंतिम नही अंतरिम हैं।
राष्ट्र सनातन सत्ता है, संस्कृति उसकी निर्माता है,
जन्मभूमि, जन, परंपरा से इसका गहरा नाता है।
भारत की यह राष्ट्र कल्पना विश्व शांति का प्राण है।
एकात्मवाद के मंगलपथ पर··· ···

तेरे सुख में मेरा सुख है, अपना सुख सबके सुख में,
काँटा अगर पैर में चुभता, आँखें भर आती दुःख में।
भोजन का रस लेती जिह्वा, पोषित होते हैं तन-मन,
तन की इस एकात्मता से संचालित सारा जीवन।
यही सनातन सत्य जगत् का, यही आत्मविज्ञान है।
एकात्मवाद के मंगलपथ पर··· ···

उद्गम अलग-अलग नदियों के, अलग-अलग हैं पंथ-प्रवाह,
चलते-चलते पा लेतीं सब, महासिंधु की दुर्गम थाह।
विविध रूप में झलक रहा वह एक तत्त्व अविनाशी है,
इसीलिए संघर्ष, द्वंद्व सब, मिथ्या है, आभासी है।
यही अखंडित हिंदू-दृष्टि है, यही सत्य संधान है।

एकात्मवाद के मंगलपथ पर, मानव का कल्याण है,
अखिल विश्व को यह भारत के चिंतन का वरदान है।

दूरभाष : ९३१४२६२८६५

नगीनेवाली अँगूठी

मूल : **गुरदयाल सिंह**
अनुवाद : **योगेश्वर कौर**

पंजाबी भाषा के सुप्रसिद्ध साहित्यकार, उपन्यासकार और कहानी लेखक। उनके पंजाबी साहित्य में आने से पंजाबी उपन्यास में बुनियादी तबदीली आई थी। उनके उपन्यास 'मढ़ी दा दीवा' का सभी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है और इनकी कहानियों पर फिल्में भी बनी हैं। इन्हें पद्मश्री के साथ-साथ १९९९ में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। यहाँ हम उनकी एक चर्चित कहानी प्रस्तुत कर रहे हैं।

उस रात की तरह आज भी मोहन को नींद नहीं आ रही थी। सिर घुमाकर देखा, पड़ोसी मकानों की छतों पर चारपाइयाँ बिछी हुई थीं, लेकिन किसी चारपाई के नीचे किसी के भी लंबे बाल बिखरे दिखाई नहीं देते थे और न ही किसी का माथा खिली कपास की तरह चमक रहा था। तभी मोहन को कटे खाए बेर जैसा पीले रंग का चाँद जोहड़ के पीछे पीपल के खड़खड़ाते पत्तों के पीछे उभरता दिखाई दिया। साथ ही छत की मुँड़ेर से श्मशान घाट की समाधि के किनारे चमकते से दिखाई देने लगे। पीपल के पार सूने खेतों में गीदड़ हुँकार रहे थे, जिनकी अपशकुनी आवाजें भयंकर खामोशी को चीरती आकाश में बिखर रही थीं।

रात बहुत उदास थी। तीन साल पहले भी मोहन को इसी तरह रात में नींद नहीं आई थी। ऐसी ही रात थी—पीला चाँद, पीपल के खड़खड़ाते पत्ते, सूने खेतों में बोलते गीदड़। लेकिन वह रात आज की रात से कहीं भिन्न थी। उस रात साथवाली छत पर सो रही भानो के काले केश तकिए से नीचे हवा में लहलहा रहे थे। उसका माथा भी कपास के फूल सा चमक रहा था और वे दो आँखें। देर रात तक मोहन से खामोश-रहस्यमयी बातें करती रही थी। हवा का झोंका आया, दाईं तरफ की छत की खाट पर बिछी सफेद चादर का पल्ला उड़कर किसी के मुँह पर आ गिरा। मोहन ने देखा, भानो का बड़ा भाई सो रहा था। चादर जोर से मुँह पर आ गिरने से भी वह न हिला, न ही जागा।

मोहन को तभी ठंड सी महसूस हुई और उसने खेस ओढ़ लिया, चाँदनी मद्धम पड़ने लगी थी। तारों की टिमटिमाहट बुझती हुई चिनगारियों सी महसूस हुई। धीरे-धीरे आकाश पर गहरी कालिख बढ़ती गई और उस कालिख में पीला चाँद डूबने लगा। जैसे बरसात में जोहड़ के छोर पर छोड़ी गई उसकी कागज की नाव कुछ दूरी पर जाकर डूब जाया करती थी।

□

उस दिन शाम को वह घर लौटा तो उसकी भाभी ड्योढ़ी में चरखा कात रही थी। आँख बचाकर वह चुपके से अंदर खिसक गया। भूसेवाली कोठड़ी में छुपाकर रखी गेहूँ की तीलों में से एक निकालकर वह हारे में रखी हाँड़ी के पास चला गया। हाँड़ी का ढक्कन एक तरफ करके उसने तीले का एक सिरा दूध में डुबोया और दूसरा सिरा मुँह में लेकर दूध पीने लगा। मलाई की मोटी परत उसने कहीं से भी हिलने नहीं दी। भरपेट दूध पीकर उसने हाँड़ी को ढका और तीला वहीं भूसे की कोठरी में छिपा दिया। कोठरी से लौटते समय उसने अपनी नई फूट रही मूँछों पर हाथ फेरा, फिर खँखारा। अब उसके होंठ मुसकरा रहे थे।

''ऐसे चोरी से, किसी की कमाई का दूध पीकर तुम पहलवान नहीं बनोगे।'' भाभी की आवाज सुनकर दीवार थामे वह वहीं रुका रहा। लेकिन भाभी आज नहीं रुकी और उसे चुनौती देते बोली, ''लाज-शरम हो तो अपनी कमाई का दूध पीकर देखो। तुम पाँच हाथ लंबे जवान हो, चलते हो तो धरती काँपती है, ऐसे हराम का खाते-पीते शरम नहीं आती।''

भाभी की जली-कटी तो वह रोज सुनता था, लेकिन 'अपनी कमाई और हराम का खाना-पीना' जैसे कटु और असहाय शब्द उसने आज ही सुने थे। एक पल के लिए मोहन की आँखें जमीन पर गड़ी रहीं, परंतु अधिक देर तक वह वहाँ रुक नहीं पाया, ऐसे लगा जैसे किसी ने छाती में भाला चुभो दिया हो। भाभी के कुछ और कहने से पहले वह जल्दी से बाहर निकल गया।

रात गए जब मोहन घर लौटा और चुपके से ड्योढ़ी की दीवार के साथ लगी लकड़ी की सीढ़ी से ऊपर चढ़ने लगा, आँगन में बिछी खाटों पर उसके भाभी-भाई तथा भतीजे-भतीजियाँ लेटे हुए थे। भीतर आते समय उसने भाभी की धीमी आवाज भी सुन ली थी। ऐसे लगता था, जैसे सभी गहरी नींद में सो रहे हों और वह ऊपर जाकर खाली चारपाई पर लेट गया।

''यह झगड़ा तो जल्दी निबटाना पड़ेगा।'' लेटते ही उसने भाभी की

आवाज सुनी। ''ऐसे शहजादों की आँखें तभी खुलती हैं, जब कोई उन्हें साँझी भी नहीं रखता और दर-दर की खाक छाननी पड़ती है। हाँड़ी में से चोरी का दूध पीना तब याद आता है। दिन-रात काले बैल की तरह कमाएँ हम और खाए यह, सोढी साहिब! क्यों पाँच सौ बीघे का मालिक है न।''

मोहन के भाई ने आज पहले की तरह उसे कुछ कहने से नहीं रोका। अपना स्वाभाविक वाक्य भी नहीं दोहराया, ''अरे बचपन से पाला-पोसा है। इसे ब्याहकर अपना भार उतार दें, फिर सब हो जाएगा।''

मोहन के पाँवों के तलवे जलने लगे। उसकी आँखों के आगे अँधेरा छा रहा था, लेकिन जब उसने सिर घुमाकर दाईं तरफ कोठे की छत पर देखा, तो भानो का चमकता माथा और तकिए के नीचे लहलहाते बालों की लटें देखकर वह एक पल के लिए सबकुछ भूल गया। न जाने क्यों, भानो सोते समय अपने बाल हर रोज यों ही बिखेर लेती थी। दाईं आँख के ऊपर पड़े चौथ के चाँद जैसे निशान में चमक पड़ने लगी। उसने माथे पर हाथ फेरा और एक लंबी साँस लेकर मुँह दूसरी ओर घुमा लिया। लेकिन कसक बढ़ने लगी थी। वह रातभर सो नहीं पाया। सुबह मुरगे ने बाँग दी, उसकी पड़ोसन संती चक्की पीसने लगी, तो वह उठकर बैठ गया। शरीर में थकान थी, तभी अधिक देर नहीं बैठ पाया और फिर लेट गया। उसका माथा चकरा रहा था।

जब दिन निकला, आसपास के घरों के बच्चे शोर मचाने लगे तो वह हड़बड़ाकर उठ बैठा। आँखें मलकर इधर-उधर देखा। लोग अपने कामों पर जा रहे थे और भाभी भी। चुपके से वह नीचे उतरा। आँगन में झाड़ू देती भाभी ने उसे चाय के लिए नहीं पुकारा। वह स्वयं भी रसोई में नहीं गया। बाहर गली की ओर चल दिया। गाँव से बाहर आकर देखा तो उपलों की टोकरी उठाए भानो जा रही थी। आसपास कोई नहीं था। वह रुक गया। उसके पास आकर भानो मुसकरा दी। लेकिन मोहन ने उसकी ओर नहीं देखा। सिर झुकाए धीमी आवाज में कहा, ''मैं जा रहा हूँ।''

''नौकर?'' भानो ने मुसकराकर मजाक किया। आवाज मानो मोहन का गला फाड़कर बाहर निकल पाई थी। ''अच्छा!'' भानो ने कहा, ''तो छुट्टी पर आते हुए मेरे लिए नगीनेवाली अँगूठी लेते आना।'' यों मुसकराकर वह निकल गई। मोहन मुड़कर उसकी ओर देख भी नहीं पाया। उसके माथे के निशान में फिर पीड़ा सी होने लगी थी।

□

इसके बाद वह तीन साल तक घर नहीं आया। प्रत्येक वर्ष उसे आषाढ़ की एकादशी की रात को नींद न आती। एक पल भी सोचे बिना वह सारी रात आँखों में बिता देता। उसी तरह उनींदीं आँखों से अगले दिन वह साहिब को छुट्टी की अरजी देते गिड़गिड़ाता, 'सर, बस एक सप्ताह, आप कहेंगे तो चार दिन में ही आ जाऊँगा।' लेकिन जब छुट्टी मिल जाती और वह सामान बाँधने लगता तो उसे भाभी की जली-कटी सुनाई देती। तभी बँधा-बँधाया सब खुल जाता।

दो साल बीते। इस तीसरे साल वह नहीं रुक सका। जब वह बिन बुलाए मेहमान की तरह अपना बिस्तर काँधे पर उठाए गाँव पहुँचा तो उसे बीसियों गहिरों के बीच उपलों का वह गहीरा (जखीरा) दिखाई नहीं दिया, जिसे अपने दोस्त की तरह वह पहचान सकता था। भाभी के हाथों का पुता हुआ गहीरा! फिर जब वह घर के पास पहुँचा तो पड़ोसियों के दरवाजे के दोनों ओर सरसों का तेल बिखरा देख उसका दिल धड़कने लगा।

भाभी ने उसे सिर-आँखों पर उठा लिया। गाँव का वही पुराना प्रेम जाग उठा। यार-दोस्त उसे मिलने आए तो भी उसे अपने चारों ओर एक उजाड़ सा दिखाई देने लगा। एक महीने की छुट्टी के सात दिन बिताकर लौटने को तैयार हो गया। सब हैरान थे, पर वह रुक नहीं पाया।

□

आज भी एकादशी की रात थी। फर्क केवल इतना था कि एकादशी श्याम पक्ष की थी। वह सारी रात आँखों में बिताकर मुरगे के बाँग देते ही उठकर बैठ गया। सुबह की गाड़ी से उसे जाना था, स्टेशन गाँव से पाँच मील दूर था। नीचे आया तो भाई उसके लिए किसी का ऊँट लेने चला गया था। भाभी उसके लिए मीठी रोटियाँ पका रही थी। वह धीरे से अंदर चला गया और अपनी वरदी पहनकर जब अपना सामान इकट्ठा कर रहा था तो उसकी भाभी मुसकराते हुए उसके पास आकर बोली, ''भाभी की यह निशानी भी सँभालकर रख ले।''

मोहन ने भाभी की ओर देखा। क्रोशिए से बुना सितारोंवाला रंग-बिरंगा एक रुमाल उसके हाथ में था। रुमाल से नजर हटाकर भाभी की ओर देखा तो उसकी आँखें लालटेन की मद्धम रोशनी में भी नगीनों सी चमकती दिखाई दीं। मोहन के मन में उथल-पुथल हो रही थी। देर तक वह भाभी की आँखों में नहीं देख सका। चुपके से रुमाल पकड़ ट्रंक में रखा और उसी में से एक हरे रंग का पतंगी कागज निकालकर भाभी को थमा दिया।

''यह क्या?'' भाभी ने पूछा, मोहन बोला नहीं।

''यह मेरे लिए लाया था क्या?'' भाभी ने कागज से अँगूठी निकाल हैरानी से पूछा, ''अरे यह तो नगीनेवाली है।''

''हाँ।'' अपने जीवन में यह 'हाँ' पिछले तीन वर्ष में वह पहली बार बोला था। फिर वह ट्रंक के कपड़े सँभालने लगा, जिनपर गिरते आँसू उसकी भाभी नहीं देख सकी। ''जुग-जुग जीवे मेरा ऐसा देवर।'' मुसकराते हुए भाभी ने अँगूठी बाएँ हाथ की छोटी उँगली में पहन ली।

२३९, दशमेश एन्क्लेव, ढकौली-१६०१०४,
जीरकपुर (मोहाली)
दूरभाष : ९३१६००१५४९

व्यंग्य

दीवाली पर निबंध मत लिखाइए

● पूरन सरमा

जब हम छोटी कक्षाओं में पढ़ते थे तो गधे, घोड़े और गाय पर निबंध के साथ-साथ दीवाली पर भी निबंध लिखवाया जाता था। इसलिए दीवाली के बारे में हमें बचपन से ही पता है कि वह कैसे मनाई जाती है। दीवाली मनाने के बारे में अब मैं अपनी पत्नी व बच्चों को बताने में बड़ा डरता हूँ। मैं तो चाहता हूँ कि उन्हें पता ही नहीं चले और दीवाली निकल जाए, परंतु दीवाली इतने शोर-शराबे से आती है कि बच्चे न तो फुलझड़ी-पटाखों के बारे में भूल पाते हैं और न ही पत्नी नई साज-सजावट व साड़ी-शृंगार को विस्मृत कर पाती है। बस, अपने राम का तो कचूमर निकलकर रह जाता है। पिछले दिनों से बड़ेवाले ने दीवाली पर निबंध लिखाने की जिद पकड़ रखी थी और मैं था कि उसे इसके बारे में दीवाली के बाद बताना चाहता था।

बाद में सच का पता चला कि बालक मुझे बना रहा था और चिढ़ा रहा था। वह वास्तव में दीवाली के बारे में जानता था, परंतु मुझे परेशान करने की दृष्टि से वह दीवाली पर निबंध लिखाने के लिए जोर डाल रहा था। इसका पता मुझे उसे दीवाली से पहले बाजार में ले जाने पर हुआ। उसने रेडीमेड कपड़े की दुकान के सामने खड़े होकर अपने लिए 'जींस' लेने की जिद की। मैंने कहा, ''बेटा थोड़े दिन ठहरो, अगले माह दिला देंगे।''

वह बोला, ''डैडी श्री, आप मुझे क्यों बना रहे हैं। दीवाली तो इस माह में है और नए कपड़े लाएँगे अगले माह में। नए कपड़े दीवाली पर पहनने की बात दीवाली के निबंध में स्पष्ट रूप से कही गई है।'' हारकर मुझे चार सौ रुपए की जींस उसे खरीदकर देनी पड़ी।

खिलौनों और पटाखों की दुकान पर भी उसने वही आलम पेश किया तो वहाँ भी डेढ़ सौ रुपए की बलि देनी पड़ी और मैं फटाफट घर लौट आया। हाथ-पाँव काँप रहे थे और साँस फूल रही थी। समझ में नहीं आया कि बालक को बिगाड़ा किसने? मैंने बच्चे को बुलाकर इत्मीनान से पूछा, ''देखो टिंकू, हम तुम्हें चॉकलेट लाकर देंगे, जरा यह तो बताओ बेटा कि तुम्हें दीवाली पर निबंध किसने लिखाया?''

चॉकलेट के चक्कर में उसने सत्य उगल दिया, ''मम्मी ने।''

''मम्मी ने! लेकिन उसने तो मुझे इनकार किया है। जरा बताओ उस निबंध में और क्या-क्या लिखाया है?''

''हाँ...हाँ...मुझे यह निबंध पूरी तरह याद है। दीवाली पर नए कपड़े आते हैं। महिलाएँ नई-नई साड़ियों में सज-सँवरकर दीपदान

सुपरिचित व्यंग्यकार। अब तक चौदह व्यंग्य-संग्रह, एक उपन्यास 'समय का सच' एवं बाल साहित्य की करीब बीस पुस्तकों का प्रकाशन; 'कन्हैयालाल सहल पुरस्कार' के साथ-साथ अनेक बार पुरस्कृत-सम्मानित।

करती हैं। इससे पहले घरों में रंग-रोगन व पेंट किए जाते हैं। घरों में चद्दरें व तकिए बदले जाते हैं। खिड़कियों पर नए परदे लगाए जाते हैं।''

मैं बीच में ही बोला, ''देखो बेटा, तुम्हारी मम्मी को दीवाली का निबंध लिखाना नहीं आता। असलियत तो यह है बेटा, इसका आध्यात्मिक व सांस्कृतिक महत्त्व नहीं समझाया तुम्हारी मम्मी ने। उसने तो आजकल होनेवाला दिखावा लिखा दिया, वरना भगवान् राम जब रावण को मारकर अयोध्या में आए तो नगरवासियों ने देसी घी के दीपक जलाए थे।''

''पता है पापाश्री! अब देसी घी नहीं रहा, इसलिए मोमबत्तियाँ जलाई जाती हैं, इसलिए तो हमें पूरे घर को सजाने के लिए दो सौ कैंडल लानी हैं।'' टिंकू ने कहा।

मैं बोला, ''नहीं, तुम समझे नहीं। दीवाली अधर्म पर धर्म की विजय का प्रतीक है तथा हमारी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का आईना है। कहने का तात्पर्य यह है कि घरों की साफ-सफाई हो तथा आदमी अपने अंदर सत्य का उजाला भरने का संकल्प ले, फिर यह कार्तिक की अमावस्या को मनाई जाती है।''

''मेरी समझ में नहीं आता कि आपने पहले तो दीवाली के निबंध के बारे में कुछ नहीं बताया और जब मम्मी ने लिखवा दिया तो मीन-मेख निकाल रहे हैं। अब आप यह कहेंगे कि दीवाली पर मिठाई भी बाजार से नहीं लाई जाती है।'' टिंकू ने व्यंग्य किया।

मैं बोला, ''देखो, तुम्हें तुम्हारी मम्मी ने बहका दिया है तथा घर में अशांति का खतरा पैदा हो गया है। मिठाई सौ रुपए किलो है, क्या खाकर लाएँगे बाजार से। मैं कहता हूँ, इस बार घर में ही बना लो।''

तभी पत्नी आ धमकी, छूटते ही बोली, ''क्या हुआ, बाजार हो आए? मेरी साड़ी लाए?''

हाथों के तोते उड़ गए, अटकता सा बोला, ''ऐसा था कमले (कमला), आज तो टिंकू ने खाली करा दिया, कल शायद बोनस मिल

जाएगा तो हम दोनों बाजार चले चलेंगे।''

''मैं साफ कहे देती हूँ। बोनस के भरोसे दीवाली नहीं मनेगी और जो भी लोन ले सकते हो, ले लो।'

''फेस्टीवल एडवांस है, उधर तुम्हारे दोस्त दीपक से हजार-दो हजार उधार मार लाओ, वरना गत वर्ष की तरह दीवाली फीकी रह जाएगी। फिर मुझसे मत कहना कि दीवाली अधूरी रह गई, लक्ष्मीजी नहीं आईं।''

मैंने कहा, ''तुम व्यर्थ की बातें कर रही हो। महँगाई में दीवाली का अर्थ क्या रह जाता है। फिर तुमने दीवाली का जो निबंध टिंकू को लिखाया है, वह भी उल्टा-सीधा लिखा दिया है। वह नई चद्दरों, तकियों, गिलाफों तथा नए परदों की माँग के साथ महँगी दुकान से मिठाई लाने की माँग कर रहा है।''

''करेगा क्यों नहीं? पड़ोस में कम धूम मच रही है क्या? वर्माजी ने सारे घर का कायाकल्प करके धर दिया है। सारी कॉलोनी में हम अकेले ही बचे हैं, जो फटीचरों की तरह रह रहे हैं। बारह महीने का त्योहार है, गरीब-से-गरीब भी इसे उत्साह से मनाता है।''

तभी टिंकू बोला, ''हाँ, दीवालीवाले निबंध में यह भी लिखा गया है कि इसे लोग पूरे उत्साह और उमंग से मनाते हैं।''

मैं बोला, ''लेकिन आप लोगों ने ज्यादा जोर डाला तो मेरा बी.पी. लो आ जाएगा तथा उमंग व उत्साह दोनों हवा हो जाएँगे। मैंने तुमसे कहा भी था कि बच्चों को सांस्कृतिक विरासत तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ही बताना, परंतु तुमने भौतिक आवश्यकताओं की भावभूमि में दीवाली का निबंध लिखा दिया।''

''लेकिन इस मरे निबंध को पकड़कर क्यों बैठ गए हैं? दीवाली वर्षों से मनाई जाती रही है।''

''अरे भागवान्, परीक्षक बच्चों से परीक्षा में दीवाली का निबंध आजकल इसलिए नहीं लिखाता, क्योंकि उसके अपने बच्चे दीवाली की माँगें उठा सकते हैं।''

''लेकिन दीवाली की खरीद को आप टालने पर क्यों तुले हैं? जगह-जगह सेल के खेल चल रहे हैं। दीवाली की विशेष छूटों का लाभ क्या हम नहीं ले पाएँगे?'' पत्नी बिलबिलाई।

मैं बोला, ''देखो टिंकू, दो मिनट बाहर जाओ, मैं तुम्हारी मम्मी से बात करना चाहता हूँ।''

''आप यही तो बात करेंगे कि टिंकू को दीवाली की खरीद से अलग रखो, वरना यह सारा मासिक बजट ऐसा बिगाड़ेगा कि वर्ष भर याद रहेगा।'' टिंकू बोला।

''नहीं बेटा, तुम जाओ, घर की कई बातों में बच्चों को बीच में नहीं बोलना चाहिए।''

टिंकू अनमना सा चला गया और मैंने पत्नी के चरण छू लिये और बोला, ''कमले, ये लो दीवाली की खरीद के कुल एक हजार रुपए, इससे ज्यादा मैं कुछ नहीं कर सकता।''

पत्नी ने एक हजार रुपए पर्स के हवाले किए और बोली, ''कोई बात नहीं, आप ज्यादा-से-ज्यादा कोशिश करें, वरना आपकी माली हालत को देखते हुए मेरी साड़ी, सजावट के लिए तो ये पर्याप्त हैं। बाकी दीवाली-पूजन की व्यवस्था आप स्वयं झेलें।''

''इस बार हम पूजन स्थगित कर देंगे। वर्षों से कर रहे हैं, हम रोशनी देखने निकल जाएँगे, मेहमान-दोस्तों को मिठाई खिलाने से बच जाएँगे।''

''यह आपका निजी मसला है। आप तो जाकर अपना पुराना कुरता-पाजामा धोबी से धुला लें, आपके नए कपड़े तो आने से रहे।'' पत्नी ने कहा और तभी टिंकू आकर बोला, ''डैडीश्री, दीवाली पर निबंध लिखने का कोई महत्त्व तो है नहीं, फिर यह लिखवाया क्यों जाता है?''

मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। मैं बोला, ''देखो बेटा, क्रॉस-क्वेश्चन मत किया करो। दीवाली पर निबंध तो लिखो, लेकिन जिद मत करो, अब तुमने लिख लिया तो लिख लिया, परंतु उसे याद मत करो।''

''हाँ डैडीश्री, इसी में फायदा है।''

''इसलिए तुम जाओ और दोस्तों में जाकर खेलो। मुझे ये दो-चार दिन कुछ ज्यादा ही टेंशन के हैं, हो सके तो कोई दर्द-निवारक टिकिया मुझे लाकर दो।'' मैंने कहा।

पत्नी मुझे नींद की गोली दे गई और उल्लू का पट्ठा टिंकू दीवाली का निबंध जोर-जोर से याद करने लगा। मेरे ऊपर नींद की गोली का कोई असर नहीं हुआ। मैं अपनी धड़कन रोके आज भी दीवाली के निकल जाने की प्रतीक्षा में हूँ। मेरा तो सभी से यही कहना है कि वे बच्चों को दीवाली का निबंध कभी न लिखावें, वरना दीवाली जी का जंजाल बन जाएगी।

''यह आपका निजी मसला है। आप तो जाकर अपना पुराना कुरता-पाजामा धोबी से धुला लें, आपके नए कपड़े तो आने से रहे।'' पत्नी ने कहा और तभी टिंकू आकर बोला, ''डैडीश्री, दीवाली पर निबंध लिखने का कोई महत्त्व तो है नहीं, फिर यह लिखवाया क्यों जाता है?''

मेरी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। मैं बोला, ''देखो बेटा, क्रॉस-क्वेश्चन मत किया करो। दीवाली पर निबंध तो लिखो, लेकिन जिद मत करो, अब तुमने लिख लिया तो लिख लिया, परंतु उसे याद मत करो।''

''हाँ डैडीश्री, इसी में फायदा है।''

''इसलिए तुम जाओ और दोस्तों में जाकर खेलो। मुझे ये दो-चार दिन कुछ ज्यादा ही टेंशन के हैं, हो सके तो कोई दर्द-निवारक टिकिया मुझे लाकर दो।'' मैंने कहा।

१२४/६१-६२, अग्रवाल फार्म,
मानसरोवर, जयपुर-३०२०२० (राजस्थान)
दूरभाष : ०९८२८०२४५००

कहानी

एकांत

● विजय कुमार सिंह

तीव्र इच्छा हो रही थी कि उसे एकांत मिले, जिसमें वह अपने घर की सुबहों को याद कर सके, रात में खिड़की के बाहर फैले अंधकार की मुलायम सिलवटों का स्पर्श कर सके, मन हो तो एकाध पुस्तक लेकर पढ़ सके, कहीं कुछ गुनगुना सके और ऐसा करके वह अपने इधर-उधर बिखरे अपनेपन को जतन से समेट सके। एकांत उसके लिए बहुत जरूरी था, परंतु यहाँ इस अनजाने घर में उसे कोई भी अकेली होने ही नहीं देता था। संभव है कि इन सबको उससे बहुत प्यार हो, लेकिन घनघोर बरसात से नाजुक पौधा बह जाता है, दम घुटने से मर जाता है, यह बात इन लोगों को समझाना आसान नहीं था।

सुपरिचित लेखक। कादंबिनी, दैनिक जागरण, नवभारत टाइम्स, हिंदुस्तान राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रचनाएँ प्रकाशित।

दोपहर में थोड़ी देर के लिए एकांत संभव हो सकता था, लेकिन तब अनु अपनी सहेलियों के साथ घुस आई। उनकी खिलखिलाहट से सारा घर काँप उठा। वे सभी एक ही बात को पकड़े बैठी थीं कि अभी फिल्म देखने चलेंगे। बहुत आनाकानी की, पर उन्होंने खींचातानी कर तैयार कर ही लिया। घर की बड़ी-बूढ़ी औरतों ने सलाह भी दी कि 'घर में सबके साथ हिलो-मिलो, ऐसे अकेले नहीं बैठना चाहिए। यह तो अनु सँभाल लेगी, इसे अकेला रहने ही नहीं देगी। बहुत बोलनेवाली और मिलनसार है हमारी अनु।' सास ने कहा था। रोज कोई-न-कोई मिलने आता। बातें वही बँधी-बँधाई एक जैसी। इस कंगन की गढ़ाई बहुत सुंदर है। यह साड़ी आपने कहाँ से ली? विवाह के समय की है, सगाई की नहीं। यह तो अलग है। उसमें तो मोतियों की बूटियाँ कढ़ी थीं और बरतनों में पूरा एक डिनर सेट, लेकिन किसी ने भी उसकी पढ़ाई-लिखाई, गाने-बजाने के शौक में कोई रुचि नहीं दिखाई। अनु बस सबसे यही कहती कि 'मेरी भाभी अच्छा गाती है। वह कितनी पढ़ी-लिखी है, उसने क्या-क्या सीखा है, उसे क्या पसंद है—इस बात की कोई चर्चा ही नहीं। मेरी भाभी की स्किन बहुत सुंदर है या बाल बहुत लंबे हैं—जैसी एक ही तरह की बातें। कुछ देर के लिए ही एकांत देने की बात तो उनकी समझ में ही नहीं आती। उसे लगता है कि अगर थोड़े समय के लिए उसे एकांत मिल जाए तो अच्छा रहे।

यह घर वैसे ही आवाजों का घर था—हो-हो, शोर-शराबा, भाग-दौड़, खिलखिलाहट। लगता—जैसे किसी को एकांत की जरूरत ही न हो। शाम के बाद सारा समय शरद का होता था। वह काम से लौटकर आता तो उसके लिए तैयार होना पड़ता। उसके साथ बाहर जाना पड़ता। और शरद को जैसी बातें आती थीं, वैसी उसकी प्रेम की बातें सुननी पड़तीं। वह बहुत ही अलग दुनिया में आ पहुँची थी। ज्यादा बोलना उसे पसंद नहीं था। वह अपने घर में अकेली थी, इसलिए थोक की किताबों, संगीत, चित्रों के बीच पल-बढ़कर वह बड़ी हुई थी। उसने कितने उत्साह और लगन से बँगला सीखी थी, विशेषकर रवींद्र संगीत के लिए। उसमें कितना उत्साह था कि वह इतने सुंदर गीतों को गा सकेगी। सबको सुना सकेगी। शादी के बाद पंद्रह दिन के लिए बाहर घूमने गए तो वहाँ पहाड़ों में घूमते हुए या झरने का पानी अंजुरी में भरते हुए या ठंडी हरी-हरी हरियाली का स्पर्श करते हुए एक बार भी शरद को याद नहीं आई कि वह उससे एकाध गीत सुने। इसमें शरद की गलती नहीं, वह संगीत का आदमी नहीं था। मनपसंद कितने ही गीत उसके होंठों पर जमकर रह गए।

हिल स्टेशन की भीनी-भीनी सुबह उसे बहुत अच्छी लगती। शरद साथ में न होता, तब भी उसे बाहर जाकर हवा को सूँघना अच्छा लगता। उसे इस तरह अकेले आनंद में डूबे देख शरद अकुला जाता और आलिंगन में बाँध उसे आग्रहपूर्वक कमरे में ले आता। शरद को खुले में घूमना-फिरना पसंद नहीं था। एकाध बार तो बहुत नाराज हुई। उसने सोचा कि उसकी इस नाराजगी से शरद को उसके स्वभाव का सहज ही परिचय मिल जाए तो उसे राहत मिल जाएगी, लेकिन आश्चर्य कि उसके नाराजगी भरे शब्दों को शरद ने फूलों की मार की तरह झेल लिया। उसे लाड़-प्यार का गुस्सा समझ वह हँस पड़ा, खिलखिलाकर हँसा। उसका गुस्सा शरद को और खुश कर गया। उसे पहली बार महसूस हुआ कि शरद को अपनी बात समझा सके, ऐसा कोई माध्यम उसके पास नहीं है।

इसलिए वापस आने के बाद एकांत चाहने की उसकी इच्छा और तीव्र हो गई। उसे कुछ पल ही, जिन्हें वह अपना कह सके, मिल जाए तो वही उसके लिए बहुत है। घर में तमाम लोगों की बातें और शोरगुल के बीच स्टीरियों की चिचियाहट में उसे बोलना भी अच्छा नहीं लगता। मौका मिलते ही अगर वह बाहर बैठने या छत पर जाती तो तुरंत ही कोई उसके पीछे-पीछे आ पहुँचता, 'इस तरह अकेली क्यों? क्या हुआ?' इस घर की यही एक सीधी समझ थी कि कुछ होता है, तभी आदमी अकेले बैठता है।

शरद को अचानक मुंबई जाना पड़ा, 'कंपनी का जरूरी काम है, इसलिए जाना पड़ रहा है', यह बात शरद ने उससे कई बार कही और घर छोड़ा, तब तक एक ही बात कहता रहा कि 'तू अकेली पड़ जाएगी, तुझे अच्छा नहीं लगेगा। तू अपने घर हो आ, कुछ दिन अपने मम्मी-पापा से मिल आ।' वह नहीं गई। जब उसे इस घर में ही एकांत ढूँढ़ना है तो यहाँ से भागने का कोई लाभ नहीं। पंद्रह दिन तक शरद को लौटना नहीं था। इन पंद्रह दिनों तक प्रत्येक क्षण उसके लिए बेहद मूल्यवान था। उसे इन

क्षणों को बहुत ही जतन से सँभालना था। रात को वह प्रथम प्रहर था, जबकि शरद की नजरें उससे चिपकी हुई नहीं थीं, खिड़की में से मोगरे की अधखिली कलियाँ दिखाई दे रही थीं, हवा में उनकी सुगंध फैली हुई थी, गाना गाने का उसका मन हुआ, फिर कुछ सोचकर उसने अपने गाए गीतों का कैसेट बजाकर सुना। बहुत दिनों बाद सुनी अपनी ही आवाज उसे कितनी अपरिचित लगी। देर रात तक वह पढ़ती रही और फिर डबलबैड की नरम-नरम चादर पर आजादी से लोटपोट करती हुई छोटी सी लड़की बन गई। माँ से लिपटी हो, इस प्रकार वह तकिए को दबाए रही। खूब अच्छी नींद आई। लंबे समय बाद उसने देर तक किताब पढ़ी थी। इसलिए सवेरे उसकी आँखों में गुलाब के फूलों का रंग था। अनु ने मजाक किया, 'लगता है भाभी, रात भर सोई नहीं। अकेले अच्छा नहीं लगा।' लेकिन वह संतोष से भरी-भरी हँसी। पंद्रह दिन सरसराते हुए बीत गए।

शरद वापस आ गया था और फिर शरद की घने अंधकार में सात समुंदर पार कर धीरे-धीरे उस तक पहुँचती आवाज, उसे हिला-डुला रही थी। बहुत अकेले पड़ गई थी? मेरे बिना अच्छा नहीं लगता होगा न। शरद के हाथों का स्पर्श इतना हल्का था कि अनुभव नहीं कर पा रही थी। उसे रोमांच तो था, लेकिन शरद के स्पर्श का नहीं। यकायक उसके समूचे अस्तित्व में एक मधुर गीत फैल गया। उस गीत का प्रत्येक स्वर शीतल जल के छींटों की तरह भिगोता रहा। भीतर के इस रुनझुन संगीत के साथ किसी का और कोई संबंध नहीं था। आकाश को स्पर्श करते वृक्षों के बीच वह नितांत अकेली अपने प्रिय बँगला गीत को गाते हुए घूम रही थी—

तुमि गोर पाओ नाहि परिचय'' पाओ नाहि परिचय!

घूमती-फिरती वह मन के उस प्रदेश में पहुँच गई थी, जहाँ शरद या फिर किसी दूसरे का प्रवेश संभव नहीं था। उसका एकांत उसके अंदर ही था, वह अकेली थी, बिल्कुल अकेली!

१३८५/१३, गोविंद पुरी
कालकाजी, नई दिल्ली-११००१९
दूरभाष : ०९९७१७२८०४४

किसलाया नव चैतन्य

गीत

● दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'

मत बरसो इस तरह बादलो

मत बरसो इस तरह बादलो
बहे हिमालय ही।

सही नहीं है इतना ऊँचा,
मेरु कहीं कोई,
तल से लेकर शिख तक लेकिन
मिट्टी ही सोई,

देख रहा जग ढह-ढह गिरते,
पक्के आलय ही।
मत बरसो इस तरह बादलो
बहे हिमालय ही।

नहीं पहुँच वह तुम तक सकता,
व्यर्थ न क्रोध करो,
वह तो जड़-अविचल, तुम जंगम
इतना बोध करो।

गँवा प्रतिष्ठा देगा सारी
हृदय जगा भय ही।
मत बरसो इस तरह बादलो
बहे हिमालय ही।

देवभूमि है मेरु हिमालय
कोप नहीं अच्छा,
मिला गुहाओं में ही जन को
जीवन पथ सच्चा।

गहन ध्यान ने सम्मोहन पर
लिखी सदा जय ही।
मत बरसो इस तरह बादलो,
बहे हिमालय ही।

एक सावनी परिदृश्य

लेकर महामिलन की गहरी रोम-रोम में प्यास,
किए धुंध की ओट मेघ ही आता भू के पास।

देख दृश्य मधु स्नात, सूर्य ने,
लिए नयन निज मींच,
रहा धरा को मेघ बाँह भर
सरस बूँद से सींच।

शिखर चूमता झूम रास में जीवन का उल्लास।
किए धुंध की ओट मेघ ही आता भू के पास॥

हटा यवनिका गया लौटकर
ज्यों ही उन्मद मेघ,
पवन तर्जनी लगी पोंछने
ढरकी काजल रेख,

आई धूप सेविका दौड़ी कुशल पूछती पास।
किए धुंध की ओट मेघ ही आता भू के पास॥

लगा खेलने अंग-अंग में
किसलाया नव चैतन्य
दृग प्रसन्नता लगी मनाने
शुभागमन का धन्य,

बुनने लगी कामना मन की बासंतिक विन्यास।
किए धुंध की ओट मेघ ही आता भू के पास॥

सिविल लाइंस कोटा-३२४००१ (राज.)
दूरभाष : ०९४६०५७०८८३

आलेख

दीवाली आई, रात सुहानी ले आई

● नलिनी मिश्र

पुरा काल से लेकर आज तक ज्ञान-अज्ञान का जो सतत संघर्ष चलता रहा है, उसी का पावनतम प्रतीक युग-युग से संपोषित और अपनाया जानेवाला दीपावली-पर्व है। वे भारतीय पर्व और उत्सव, जो आनंद की रसधार बहाने में प्रमुख स्थान रखते हैं, उन सब में दीपावली इसलिए और भी अनुपम बन जाती है कि राजा-रंक, धनी-निर्धन, शिक्षित-अशिक्षित, सज्जन-दुर्जन, योद्धा-कायर, मूर्ख-विद्वान् आदि से उसका समान संबंध रहा है और रहेगा।

दीपावली का दिन गृहों की स्वच्छता तथ सजावट का दिन होता है। दुकानों में जवानी आ जाती है। उनमें लावा, लाई, गट्टा, बताशा, पात्र-प्रतिमाओं आदि का प्राचुर्य हो जाता है। सायं लक्ष्मी-पूजन के उपरांत दीपमालिका से अणु-अणु आलोकित करने का मधुर आयोजन संपन्न होता है। व्यवसायी, कृषक, छात्र, अध्यापक आदि सभी अपने गृह और उपयोगी कहे जानेवाले साधनों को दीप-ज्योति से ज्योतित कर देते हैं। इस अवसर पर विद्युत् जैसे अधुनातन वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग भी विज्ञान और संस्कृति के संबंध को स्थायी करता परिलक्षित होता है।

जागरण का प्रतीक दीप विभिन्न वर्ग के व्यक्ति के लिए प्रेरणा-पुंज बनकर आता है। साफल्य-प्राप्ति की कामनाएँ इसी दीप के आगे संपन्न होती हैं। प्राचीन हिंदी-कवियों ने दीपमालिका का विस्तृत वर्णन किया है। आधुनिक हिंदी-कवियों ने भी इसके महत्त्वांकन में पीछे रहना स्वीकार नहीं किया है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ब्रज-वधूटियों की दीपमालिका का वैशिष्ट्य निम्नलिखित पंक्तियों में प्रकट कर रहे हैं—

आज तरनि-तनया निकट परम परमा प्रकट,
ब्रज-बधुन मिली रची दीप-माला।
ज्योति-जाल जगमग दृष्टि थिर नहीं लगत,
छूट छवि को परत अति बिसाला॥

सुपरिचित लेखिका एवं चित्रकार। लखनऊ विश्वविद्यालय से 'डिप्लोमा इन आर्ट' मास्टर ट्रेनिंग परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण। 'उमंग', 'कल्प-वृक्ष', 'गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर', 'चिंतक', 'छवि', 'छोटा परिवार-सुखी परिवार', 'पश्चात्ताप', 'प्रयास', 'बापू की दिनचर्या', 'बापू की सेवा में—बा', 'भारत के अमर कलाकार', 'भारत-निर्माता', 'लक्ष्य की ओर', 'श्रीगणेशाय नमः', 'सुभाष की क्रांति', 'सृजक' आदि कला-कृतियाँ, अनेक आवरण-चित्र और अनगिनत रेखांकन प्रकाशित।

पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' दीपावली को संबोधित करते हुए उसकी अनंतता, दृढता और आलोकप्रियता का चारू चित्रण करते हैं—

सजी फूलों से रहती हो,
सुंदरी सर-सा महती हो।
ज्योति-धारा में बहती हो,
न जाने क्या-क्या कहती हो।
झलक किसकी है दृग में बसी,
क्यों नहीं पलक लगाती हो।

संसार को ज्योतिर्मय एवं नव्य जीवन-प्रवाह परिपूर्ण करने की पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' कोमल पद-गामिनी दीपावली से अनुनय कर रहे हैं—

प्रिय कोमल पद-गामिनि! मंद उतर
जीवन्मृत तरु-तण गुल्मों की पृथ्वी पर,
हँस-हँस निज पथ आलोकित कर
नूतन जीवन भर दो!
जग को ज्योतिर्मय कर दो!!

पंडित सुमित्रानंदन पंत द्वारा दीप-पंक्तियों का मोहक वर्णन प्रस्तुत है—

ये कवि के दीपों की पातें,
शलभ प्रीति शोभा पंखों से,
चंचल मन कहती घातें।
प्राण-वर्तिका जलस्र हो उज्ज्वल,
मिट्टी से उठ मिल लौ के बल,
आलोकित कर भव रजनी को,
करती हँस तारों से बातें।

श्रीमती महादेवी वर्मा विश्वास संवलित दीपक के सहज आलोक के स्वामित्व की माँग अपनी भावभीनी शैली में प्रकट कर रही हैं—

मेरे विश्वासों से द्रुततर,
सुभग, न तू बुझने का भय कर।
मैं अंचल की ओट किए हूँ,
अपनी मृदु पलकों से चंचल।
सहज-सहज मेरे दीपक जल।

पंडित रूपनारायण पांडेय 'कमलाकर' अप्सरा जैसी स्वर्ण-लोक से उतरनेवाली दीपावली को विश्व में प्रकाश बाँटनेवाली सिद्ध करते हैं—

तम-तोम का तापस तोड़ती त्यों, भ्रम-भावना-भीति भगाती हुई।
कमला की उतारती आरती सी, दु:ख-दैन्य में आग लगाती हुई॥
सुर बालिका सी यह दीपमालिका, हर्ष हिये उपजाती हुई।
चली आरती अंबर से उतरी, जग में जुग-जोति जगाती हुई॥

वसुधा की पुलकित दीपावली का रम्य रूप डॉ. हरिवंश राय 'बच्चन' की कविता में व्यक्त हुआ है—

आँख हमारी नभ-मंडल पर,
वहीं हमारा नीलम का घर।
दीपमालिका मना रही है,
रात हमारी तारोंवाली।
साथी, घर-घर आज दीवाली॥

पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' दीपोत्सव का मधुर पक्ष उद्घाटित कर रहे हैं—

बहिना, आज सजा दो धीरे-धीरे दीप-अवलियाँ,
घनी साँझ-वेला, आलोकित हो जीवन की गलियाँ ;
रूखे दीप तेल के प्यासे, भर दो पलियाँ-पलियाँ,
अंचल ओट करो खिल जाएँ, ये संध्या की कलियाँ।

डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने दीपोत्सव पर प्रकाश डाला है—

आज तुम दुहरा रहे हो प्रथा केवल,
आज घट-घट में नहीं है स्नेह-संबल।
आज जन-जन में नहीं है ज्योति का बल,
आज सूनी वर्तिका का सुलगता गुल।
दीप बुझते जा रहे हैं विवश ढुल-ढुल॥

श्री स.ही. वात्स्यायन 'अज्ञेय' जहाँ दीप को पंक्ति में देने के आग्रह से व्यक्ति के समाज में अंतर्भुक्त होने की भावना को स्वतंत्रता के साथ व्यक्त करते हैं, वहीं दीपावली में प्रत्येक दीपक के महत्त्व की घोषणा भी करते हैं—

यह दीप अकेला स्नेह भरा
है गर्व भरा मदमाता, पर।
इसको भी पंक्ति को दे दो।

डॉ. रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' दीपों के बहाने अपनी प्रेयसी का मधुर स्मरण कर रहे हैं—

तेरी रूप-शिखा में मेरे अंधकार के क्षण जल जाते।

तेरी सुधि के तारे मेरे जीवन को आकाश बनाते।
आज बन गया हूँ, मैं इन दीपों का केवल तेरे नाते।

दीपोत्सव की शाश्वता को श्री गिरिजा कुमार माथुर ने इस प्रकार प्रकट किया है—

झिलमिलाते जलते दीप धरा के सदियों से
जीवन की लौ उठती रहती
नगर, ग्राम, वन, नदियों से!

श्री गोपाल सिंह नेपाली दीपों और तारों की संख्या को समान बतला रहे हैं—

दीपावली दीपों का मेला,
झिलमिलाते महल-कुटी गलियारे।
भारत भर में उतने दीपक जलते,
जितने नभ में तारे।

श्री देवराज 'दिनेश' ने दीपावली में जलनेवाले दीपक को नवीन परिसर का उद्घाटक बतलाया है—

प्रतिवर्ष सुखद सुंदर दीवाली आती है,
जीवन के पथ पर अगणित दीप जलाती है।
यह नन्हे-नन्हे दीप नशीले हैं कितने,
इनके आगे तारों की नगरी शरमाई।
दीवाली आई, रात सुहानी ले आई।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' की वास्तविक घोषणा करनेवाली दीपमालिका का झिलमिलाता, जगमगाता और चमकीला तेजोमय प्रकाश दुर्गण-विनाश की साधना और उन्नति के पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा देता हुआ सबके मन का प्रिय बनता है तथा सभी को समान रूप से प्रभावित एवं आलोकित करता है। वह 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' का पावन संदेश देता है।

एम-१/६३, सेक्टर-बी,
अलीगंज, लखनऊ-२२६०२४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९८४७६२६५८

शत्रु

मूल : **एंटन चेखव**

अनुवाद : **सुशांत सुप्रिय**

सितंबर की एक अँधेरी रात थी। डॉक्टर किरीलोव के इकलौते छह वर्षीय पुत्र आंद्रेई की नौ बजे के थोड़ी देर बाद डिप्थीरिया से मृत्यु हो गई। डॉक्टर की पत्नी बच्चे के पलंग के पास गहरे शोक व निराशा में घुटनों के बल बैठी हुई थी। तभी दरवाजे की घंटी कर्कश आवाज में बज उठी।

घर के नौकर सुबह ही घर से बाहर भेज दिए गए थे, क्योंकि डिप्थीरिया छूत से फैलनेवाला रोग है। किरीलोव ने कमीज पहनी हुई थी। उसके कोट के बटन खुले थे। उसका चेहरा गीला और उसके बिन पुछे हाथ कारबोलिक से झुलसे हुए थे। वह वैसे ही दरवाजा खोलने चल दिया। ड्योढ़ी के अँधेरे में डॉक्टर को आगंतुक का जो रूप दिखा, वह था औसत कद, सफेद गुलूबंद, बड़ा और इतना पीला पड़ा हुआ चेहरा कि लगता था जैसे कमरे में उससे रोशनी आ गई हो।

''क्या डॉक्टर साहब घर पर हैं?'' आगंतुक के स्वर में जल्दी थी।

''हाँ! आप क्या चाहते हैं?'' किरीलोव ने उत्तर दिया।

''ओह! आपसे मिलकर खुशी हुई।'' आगंतुक ने प्रसन्न होकर अँधेरे में डॉक्टर का हाथ टटोला और उसे पा लेने पर अपने दोनों हाथों से जोर से दबाकर कहा, ''बेहद खुशी हुई। हम लोग पहले मिल चुके हैं। मेरा नाम अबोगिन है। गरमियों में ग्चुनेव परिवार में आपसे मिलने का सौभाग्य हुआ था। आपको घर पर पाकर मुझे खुशी हुई। भगवान् के लिए मुझ पर कृपा करें और फौरन मेरे साथ चलें। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, मेरी पत्नी बेहद बीमार है। मैं गाड़ी लाया हूँ।''

आगंतुक की आवाज और उसके हाव-भाव से लग रहा था कि वह बेहद घबराया हुआ है। उसकी साँस बहुत तेज चल रही थी और वह काँपती हुई आवाज में तेजी से बोल रहा था, मानो वह किसी अग्निकांड या पागल कुत्ते से बचकर भागता हुआ आ रहा हो। उसकी बात में साफदिली झलक रही थी और वह किसी सहमे हुए बच्चे जैसा लग रहा था। वह छोटे-छोटे अधूरे वाक्य बोल रहा था और बहुत सी ऐसी फालतू बातें कर रहा था, जिनका मामले से कोई लेना-देना नहीं था।

''मुझे डर था कि आप घर पर नहीं मिलेंगे।'' आगंतुक ने कहना जारी रखा, ''भगवान् के लिए आप अपना कोट पहनें और चलें। दरअसल हुआ यह कि पापचिंस्की, आप उसे जानते हैं, अलेक्जेंडर सेम्योनोविच पापचिंस्की मुझसे मिलने आया। थोड़ी देर हम लोग बैठे बातें करते रहे। फिर हमने चाय पी। एकाएक मेरी पत्नी चीखी और सीने पर हाथ रखकर कुरसी पर निढाल हो गई। उसे उठाकर हम लोग पलंग पर ले गए। मैंने अमोनिया लेकर उसकी कनपटियों पर मला और उसके मुँह पर पानी छिड़का, किंतु वह बिल्कुल मरी सी निढाल पड़ी है। मुझे डर है, उसे कहीं दिल का दौरा न पड़ा हो। आप चलिए, उसके पिता की मौत भी दिल का दौरा पड़ने से हुई थी।''

किरीलोव चुपचाप ऐसे सुनता रहा जैसे वह रूसी भाषा समझता ही न हो।

जब आगंतुक अबोगिन ने फिर पापचिंस्की और अपनी पत्नी के पिता का जिक्र किया और अँधेरे में दोबारा उसका हाथ ढूँढ़ना शुरू किया, तब उसने सिर उठाया और उदासीन भाव से हर शब्द पर बल देते हुए बोला, ''मुझे खेद है कि मैं आपके घर नहीं जा सकूँगा। पाँच मिनट पहले मेरे बेटे की मौत हो गई है।''

''अरे नहीं!'' पीछे हटते हुए अबोगिन फुसफुसाया, ''हे भगवान्! मैं कैसे गलत मौके पर आया हूँ। कैसा अभागा दिन है यह। यह कितनी अजीब बात है। यह कैसा संयोग है। कौन सोच सकता था!''

उसने दरवाजे का हत्था पकड़ लिया। वह समझ नहीं पा रहा था कि वह डॉक्टर की मिन्नत करे या लौट जाए। फिर वह किरीलोव की बाँह पकड़कर बोला, ''मैं आपकी हालत बखूबी समझता हूँ। भगवान् जानता है, ऐसे बुरे वक्त में आपको परेशान करने के लिए मैं शर्मिंदा हूँ। लेकिन मैं क्या करूँ, आप ही बताइए, मैं कहाँ जाऊँ? इस जगह आपके अलावा कोई डॉक्टर नहीं है। भगवान् के लिए आप मेरे साथ चलिए!''

□

वहाँ चुप्पी छा गई। किरीलोव अबोगिन की ओर पीठ फेरकर एक मिनट तक चुपचाप खड़ा रहा। फिर वह धीरे-धीरे ड्योढ़ी से बैठक में चला गया। उसकी चाल यंत्रवत् और अनिश्चित थी। बैठक में अनजले लैंपशेड की झालर सीधी करने और मेज पर पड़ी एक मोटी किताब के पन्ने उलटने के उसके खोए-खोए अंदाज से लग रहा था कि उस समय उसका न कोई इरादा था, न उसकी कोई इच्छा थी और न ही वह कुछ सोच पा रहा था। वह शायद यह भी भूल गया था कि बाहर ड्योढ़ी में कोई अजनबी खड़ा है। कमरे के सन्नाटे और धुँधलके में उसकी विमूढ़ता

और मुखर हो उठी थी। बैठक से कमरे की ओर बढ़ते हुए उसने अपना दाहिना पैर जरूरत से ज्यादा ऊँचा उठा लिया और फिर दरवाजे की चौखट ढूँढ़ने लगा। उसकी आकृति से एक तरह का भौंचक्कापन झलक रहा था, जैसे वह किसी अनजाने मकान में भटक आया हो। रोशनी की एक चौड़ी पट्टी कमरे की एक दीवार और किताबों की अलमारियों पर पड़ रही थी। वह रोशनी ईथर और कार्बोलिक की तीखी और भारी गंध के साथ सोनेवाले उस कमरे से आ रही थी, जिसका दरवाजा थोड़ा सा खुला हुआ था। डॉक्टर मेज के पासवाली कुरसी में जा धँसा। थोड़ी देर तक वह रोशनी में पड़ी किताबों को उनींदा सा घूरता रहा, फिर उठकर सोनेवाले कमरे में चला गया।

कमरे में मौत का सा सन्नाटा था। यहाँ की हर छोटी चीज उस तूफान का सबूत दे रही थी, जो हाल में ही यहाँ से गुजरा था। यहाँ पूर्ण निस्तब्धता थी। बक्सों, बोतलों और मर्तबानों से भरी तिपाई पर एक मोमबत्ती जल रही थी और अलमारी पर एक बड़ा लैंप जल रहा था। ये दोनों पूरे कमरे को रोशन कर रहे थे। खिड़की के पास पड़े पलंग पर एक बच्चा लेटा था, जिसकी आँखें खुली थीं और चेहरे पर अचरज का भाव था। वह हिल-डुल नहीं रहा था, किंतु उसकी खुली आँखें हर पल काली पड़कर उसके माथे में ही गहरी धँसती जा रही थीं। उसकी माँ उसकी देह पर हाथ रखे, बिस्तर में मुँह छिपाए, पलंग के पास झुकी बैठी थी। वह पलंग से पूरी तरह चिपटी हुई थी।

□

डॉक्टर मातम में झुकी बैठी अपनी पत्नी की बगल में आ खड़ा हुआ। पतलून की जेबों में हाथ डालकर और अपना सिर एक ओर झुकाकर वह अपने बेटे की ओर ताकने लगा। उसका चेहरा भावहीन था। केवल उसकी दाढ़ी पर चमक रही बूँदें ही इस बात की गवाही दे रही थीं कि वह अभी रोया है।

कमरे की उदास निस्तब्धता में भी एक अजीब सौंदर्य था, जो केवल संगीत द्वारा ही अभिव्यक्त किया जा सकता है। किरीलोव और उनकी पत्नी चुप थे। वे रोए नहीं। इस बच्चे के गुजर जाने के साथ उनका संतान पाने का स्वप्न भी वैसे ही विदा हो चुका था जैसे अपने समय से उनका यौवन विदा हो गया था। डॉक्टर की उम्र चौवालीस साल थी। उसके बाल अभी से पक गए थे और वह बूढ़ा लगता था। उसकी मुरझाई हुई पत्नी पैंतीस वर्ष की थी। आंद्रेई उनकी एकमात्र संतान थी।

अपनी पत्नी के विपरीत, डॉक्टर एक ऐसा व्यक्ति था, जो मानसिक कष्ट के समय कुछ कर डालने की जरूरत महसूस करता था। कुछ मिनट अपनी पत्नी के पास खड़े रहने के बाद वह सोनेवाले कमरे से बाहर आ गया। अपना दाहिना पैर उसी तरह जरूरत से ज्यादा उठाते हुए वह एक छोटे कमरे में गया, जहाँ एक बड़ा सोफा पड़ा था। वहाँ से होता हुआ वह रसोई में गया। रसोई और अलावघर के पास टहलते हुए वह झुककर एक छोटे से दरवाजे में घुसा और ड्योढ़ी में निकल आया।

यहाँ उसका सामना गुलूबंद पहने और फीके चेहरेवाले उस व्यक्ति से दोबारा हो गया।

''आखिर आप आ गए!'' दरवाजे के हत्थे पर हाथ रखते हुए अबोगिन ने लंबी साँस लेकर कहा, ''भगवान् के लिए चलिए।''

डॉक्टर चौंक गया। उसने अबोगिन की ओर देखा और उसे याद आ गया, फिर जैसे इस दुनिया में लौटते हुए उसने कहा, ''अजीब बात है!''

अपने गुलूबंद पर हाथ रखकर मिन्नत भरी आवाज में अबोगिन बोला, ''डॉक्टर साहब! मैं आपकी हालत अच्छी तरह समझ रहा हूँ। मैं पत्थर-दिल आदमी नहीं हूँ। मुझे आपसे पूरी हमदर्दी है। पर मैं आपसे अपने लिए प्रार्थना नहीं कर रहा हूँ। वहाँ मेरी पत्नी मर रही है। यदि आपने उसकी वह हृदय-विदारक चीख सुनी होती, उसका वह जर्द चेहरा देखा होता तो आप मेरे इस अनुनय-विनय को समझ सकते। हे ईश्वर! मुझे लगा कि आप कपड़े पहनने गए हैं। डॉक्टर साहब, समय बहुत कीमती है। मैं हाथ जोड़ता हूँ, आप मेरे साथ चलिए।''

किंतु बैठक की ओर बढ़ते हुए डॉक्टर ने एक-एक शब्द पर बल देते हुए दोबारा कहा, ''मैं आपके साथ नहीं जा सकता।''

अबोगिन उसके पीछे-पीछे गया और उसने डॉक्टर की बाँह पकड़ ली, ''मैं समझ रहा हूँ कि आप सचमुच बहुत दुःखी हैं। लेकिन मैं मामूली दाँत-दर्द के इलाज या किसी रोग के लक्षण पूछने मात्र के लिए तो आपसे चलने की जिद नहीं कर रहा!'' वह याचना भरी आवाज में बोला, ''मैं आपसे एक इनसान का जीवन बचाने के लिए कह रहा हूँ। यह जीवन व्यक्तिगत शोक के ऊपर है, डॉक्टर साहब। अब आप मेरे साथ चलिए। मानवता के नाम पर मैं आपसे बहादुरी दिखाने और धीरज रखने की प्रार्थना कर रहा हूँ।''

''मानवता! यह एक दुधारी तलवार है!'' किरीलोव ने झुँझलाकर कहा। ''इसी मानवता के नाम पर मैं आपसे कहता हूँ कि आप मुझे मत ले जाइए। यह सचमुच अजीब बात है। यहाँ मेरे लिए खड़ा होना भी मुश्किल हो रहा है और आप हैं कि मुझे 'मानवता' शब्द से धमका रहे हैं। इस समय मैं कोई भी काम करने के काबिल नहीं हूँ। मैं किसी भी तरह आपके साथ चलने के लिए राजी नहीं। दूसरी बात, यहाँ और कोई नहीं है, जिसे मैं अपनी पत्नी के पास छोड़कर जा सकूँ। नहीं, नहीं।''

किरीलोव एक कदम पीछे हट गया और और हाथ हिलाते हुए इनकार करने लगा, ''आप मुझे जाने को न कहें!'' फिर एकाएक वह

घबराकर बोला, ''मुझे क्षमा करें, आचरण-संहिता के तेरहवें खंड के मुताबिक मैं आपके साथ जाने को बाध्य हूँ। आपको हक है कि आप मेरे कोट का कॉलर पकड़कर मुझे घसीटकर ले जाएँ। अच्छी बात है। आप बेशक यही करें। लेकिन अभी मैं कोई भी काम करने के काबिल नहीं हूँ। मैं अभी बोल भी नहीं पा रहा, मुझे क्षमा करें।''

''डॉक्टर साहब, आप ऐसा न कहें।'' उसकी बाँह न छोड़ते हुए अबोगिन ने कहा, ''मुझे आपके तेरहवें खंड से क्या लेना-देना? आपकी इच्छा के खिलाफ अपने साथ चलने के लिए आपको मजबूर करने का मुझे कोई अधिकार नहीं। अगर आप चलने को राजी हैं तो ठीक, अगर नहीं तो मजबूरी में मैं आपके दिल से विनती करता हूँ। एक युवती मर रही है। आप कहते हैं कि आप के बेटे की अभी-अभी मौत हुई है। ऐसी स्थिति में तो आपको मेरी तकलीफ औरों से ज्यादा समझनी चाहिए।''

किरीलोव चुपचाप खड़ा रहा। उधर अबोगिन डॉक्टरी के महान् पेशे और उससे जुड़े त्याग और तपस्या आदि के बारे में बोलता रहा। आखिर डॉक्टर ने रुखाई से पूछा, ''क्या ज्यादा दूर जाना होगा?''

''बस, तेरह-चौदह मील। मेरे घोड़े बहुत बढ़िया हैं डॉक्टर साहब, कसम से, वे केवल एक घंटे में आपको वापस पहुँचा देंगे, बस घंटे भर में।''

डॉक्टर पर डॉक्टरी के पेशे और मानवता के संबंध में कही गई बातों से ज्यादा असर इन आखिरी शब्दों का पड़ा। एक पल सोचने के बाद उसने उसाँस भरकर कहा, ''ठीक है, चलो, चलें।''

फिर वह तेजी से कमरे में घुसा। अब उसकी चाल स्थिर थी। पलभर बाद वह अपना डॉक्टरी पेशेवाला कोट पहनकर वापस लौट आया। अबोगिन छोटे-छोटे डग भरता हुआ उसके साथ चलने लगा और कोट ठीक से पहनने में उसकी मदद करने लगा। फिर दोनों साथ-साथ घर से बाहर निकल गए।

□

बाहर अँधेरा था, लेकिन उतना गहरा नहीं, जितना ड्योढ़ी में था।

''आप यकीन मानिए, आपकी उदारता की कद्र करना मैं जानता हूँ।'' गाड़ी में डॉक्टर को बैठाते हुए वह बोला, ''लुका भाई, तुम जितनी तेजी से हाँक सकते हो, हाँको। भगवान् के लिए जल्दी करो!''

कोचवान ने घोड़े सरपट दौड़ा दिए। पूरे रास्ते किरीलोव और अबोगिन चुप रहे। अबोगिन केवल एक बार गहरी साँस लेकर बुदबुदाया, ''कैसी विकट और दारुण परिस्थिति है। जो अपने करीबी हैं, उन पर इतना प्रेम कभी नहीं उमड़ता, जितना तब, जब उन्हें खो देने का डर पैदा हो जाता है!''

जब नदी पार करने के लिए गाड़ी धीमी हुई, किरीलोव एकाएक चौंक पड़ा। लगा जैसे पानी के छप-छप की आवाज सुनकर वह दूर कहीं से वापस आ गया हो। वह अपनी जगह हिलने-डुलने लगा। फिर वह उदास स्वर में बोला, ''देखो, मुझे जाने दो। मैं बाद में आ जाऊँगा। मैं केवल अपने सहायक को अपनी पत्नी के पास भेजना चाहता हूँ। वह इस समय बिल्कुल अकेली रह गई है।''

दूसरी ओर, गाड़ी जैसे-जैसे अपने मुकाम पर पहुँच रही थी, अबोगिन और अधिक धैर्यहीन होता जा रहा था। कभी वह उठ जाता, कभी बैठता, कभी चौंककर उछल पड़ता तो कभी कोचवान के कंधे के ऊपर से आगे ताकता। अंत में गाड़ी जब धारीदार किरमिच के परदे से सजे ओसारे में जाकर रुकी, उसने जल्दी और जोर से साँस लेते हुए दूसरी मंजिल की खिड़कियों की ओर देखा, जिनसे रोशनी आ रही थी।

''यदि कुछ हो गया तो मैं सह नहीं पाऊँगा।'' अबोगिन ने डॉक्टर के साथ ड्योढ़ी की ओर बढ़ते हुए घबराहट में हाथ मलते हुए कहा। ''लेकिन परेशानी वाली कोई आवाज नहीं आ रही, इसलिए अब तक सब ठीक ही होगा।'' सन्नाटे में कुछ सुन पाने के लिए कान लगाए हुए वह बोला।

ड्योढ़ी में भी बोलने की कोई आवाज सुनाई नहीं पड़ रही थी और समूचा घर तेज रोशनी के बावजूद सोया हुआ सा लग रहा था।

सीढ़ियाँ चढ़ते हुए उसने कहा, ''न तो कोई आवाज आ रही है, न ही कोई दिखाई पड़ रहा है। कहीं कोई हलचल भी नहीं है। भगवान् करे···!''

वे दोनों ड्योढ़ी से होते हुए हॉल में पहुँचे, जहाँ एक काला पियानो रखा हुआ था और छत से फानूस लटक रहा था। यहाँ से अबोगिन डॉक्टर को एक छोटे दीवानखाने में ले गया, जो आरामदेह और आकर्षक ढंग से सजा हुआ था और जिसमें गुलाबी कांति सी झिलमिला रही थी।

''डॉक्टर साहब, आप यहाँ बैठें और इंतजार करें।'' अबोगिन ने कहा, ''मैं अभी आता हूँ। जरा जाकर देख लूँ और बता दूँ कि आप आ गए हैं।''

चारों ओर शांति थी। दूर, किसी कमरे की बैठक में किसी ने आह भरी, किसी अलमारी का शीशे का दरवाजा झनझनाया और फिर सन्नाटा छा गया। लगभग पाँच मिनट के बाद किरीलोव ने हाथों की ओर निहारना छोड़कर उस द्वार की ओर देखा, जिससे अबोगिन भीतर गया था।

अबोगिन दरवाजे के पास खड़ा था, पर वह अब वह अबोगिन नहीं लग रहा था, जो कमरे के भीतर गया था। उसके चेहरे पर स्याह परछाइयाँ तैर रही थीं। अब उसकी छवि पहले जैसी साफ नहीं लग रही थी। उसके चेहरे पर विरक्ति के भाव सा कुछ आ गया था। पता नहीं, वह डर था या शारीरिक कष्ट। उसकी नाक, मूँछें और उसका सारा चेहरा फड़क रहा था, जैसे ये सारी चीजें उसके चेहरे से फूटकर अलग निकल पड़ना चाहती हों। उसकी आँखों में पीड़ा भरी हुई थी और वह मानसिक रूप से उद्वेलित लग रहा था।

लंबे और भारी डग भरता हुआ वह दीवानखाने के बीच आ खड़ा हुआ। फिर वह आगे बढ़कर मुट्ठियाँ बाँधते हुए कराहने लगा।

''वह मुझे दगा दे गई, डॉक्टर।'' फिर 'दगा' पर बल देते हुए वह चीखा, ''मुझे छोड़ गई वह। दगा दे गई। यह सब झूठ क्यों? हे ईश्वर, यह घटिया फरेब भरी चालबाजी क्यों? यह शैतानियत भरा धोखे का जाल क्यों? मैंने उसका क्या बिगाड़ा था? आखिर वह मुझे क्यों छोड़ गई?''

डॉक्टर के उदासीन चेहरे पर जिज्ञासा की झलक उभर आई। वह उठ खड़ा हुआ और उसने अबोगिन से पूछा, ''पर मरीज कहाँ है?''

''मरीज! मरीज!'' हँसता-रोता और मुट्ठियाँ हिलाता हुआ अबोगिन चिल्लाया, ''वह मरीज नहीं, पापिन है! इतना कमीनापन! इतना ओछापन! शैतान भी ऐसी घिनौनी हरकत नहीं करता। उसने मुझे यहाँ से भेज दिया। क्यों? ताकि वह उस दलाल, उस भाँड़ के साथ भाग जाए! हे ईश्वर! इससे तो अच्छा था, वह मर जाती। यह बेवफाई मैं नहीं सह सकूँगा, बिल्कुल नहीं।''

यह सुनते ही डॉक्टर तनकर खड़ा हो गया। उसने आँसुओं से भरी अपनी आँखें झपकाईं। उसकी नुकीली दाढ़ी भी जबड़ों के साथ-साथ दाएँ-बाएँ हिल रही थी। वह भौंचक्का होकर बोला, ''क्षमा करें, इसका क्या मतलब है? मेरा बच्चा कुछ देर पहले मर गया है। मेरी पत्नी मातम में है और शोक से मरी जा रही है। इस समय वह घर में अकेली है। मैं खुद भी बड़ी मुश्किल से खड़ा हो पा रहा हूँ। तीन रातों से मैं सोया नहीं हूँ और मुझे क्या ऐसी भद्दी नौटंकी में शामिल होने के लिए यहाँ बुलाया गया हूँ? मेरी तो कुछ समझ में नहीं आ रहा।''

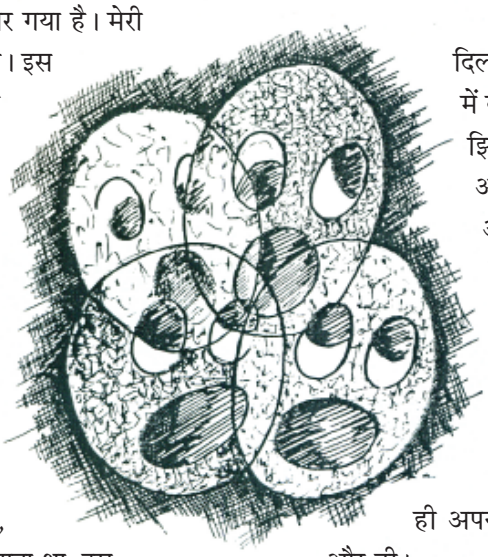

अबोगिन ने एक मुट्ठी खोली और एक मुड़ा-तुड़ा सा पुरजा फर्श पर डालकर उसे कुचल दिया, मानो वह कोई कीड़ा हो, जिसे वह नष्ट कर डालना चाहता था। अपने चेहरे के सामने मुट्ठी हिलाते हुए दाँत भींचकर वह बोला, ''और मैंने कुछ समझा ही नहीं, कुछ ध्यान ही नहीं दिया। वह रोज मेरे यहाँ आता था, इस बात पर गौर नहीं किया। यह भी नहीं सोचा कि आज वह मेरे घर बग्घी में आया था। बग्घी में क्यों? मैं अंधा और मूर्ख था, जिसने इसके बारे में सोचा ही नहीं, अंधा और मूर्ख।'' उसके चेहरे से लग रहा था जैसे किसी ने उसके पैरों को कुचल दिया हो।

डॉक्टर फिर बड़बड़ाया, ''मैं, मेरी समझ में नहीं आता कि इस सबका मतलब क्या है? यह तो किसी इनसान की बेइज्जती करना हुआ, इनसान के दुख और वेदना का उपहास करना हुआ। यह बिल्कुल नामुमकिन बात है, यह भद्दा मजाक है। मैंने अपनी जिंदगी में ऐसी बात कभी नहीं सुनी।''

उस व्यक्ति की तरह, जो अब समझ गया है कि उसका घोर अपमान किया गया है, डॉक्टर ने अपने कंधे उचकाए और बेबसी में हाथ फैला दिए। बोलने या कुछ भी कर सकने में असमर्थ, वह फिर आरामकुरसी में धँस गया।

''तो तुम अब मुझ से प्रेम नहीं करतीं, किसी दूसरे से प्यार करती हो। ठीक है, पर यह धोखा क्यों, यह ओछी दगाबाजी क्यों?'' अबोगिन रोवाँसे स्वर में बोला, ''इससे किसका भला होगा? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था? तुमने यह घटिया हरकत क्यों की, डॉक्टर!'' वह आवेग में चिल्लाता हुआ किरीलोव के पास पहुँच गया, ''आप अनजाने में मेरे दुर्भाग्य के गवाह बन गए हैं और मैं आप से सच्ची बात नहीं छिपाऊँगा। मैं कसम खाकर कहता हूँ कि मैं उस औरत से मोहब्बत करता था। मैं उसका गुलाम था। मैं उसकी पूजा करता था। मैंने उसके लिए हर चीज कुरबान कर दी। अपने संबंधियों से झगड़ा किया। नौकरी छोड़ दी। संगीत का अपना शौक छोड़ दिया। उन बातों के लिए उसे माफ कर दिया, जिनके लिए मैं अपनी बहन या माँ को कभी माफ नहीं करता। मैंने उसे कभी कड़ी निगाह से नहीं देखा। मैंने उसे कभी बुरा मानने का जरा सा भी मौका नहीं दिया। यह सब झूठ और फरेब है, क्यों? अगर तुम मुझे प्यार नहीं करती थीं तो वह साफ-साफ कह क्यों नहीं दिया इन सब मामलों में तुम मेरी राय जानती थीं!''

काँपते हुए, आँखों में आँसू भरे अबोगिन ने अपना दिल डॉक्टर के सामने खोलकर रख दिया। वह भावोद्रेक में बोल रहा था। सीने से हाथ लगाए हुए, बिना किसी झिझक के वह गोपनीय घरेलू बातें बता रहा था। असल में, एक तरह से आश्वस्त सा होता हुआ कि आखिरकार ये गोपनीय बातें अब खुल गईं। यदि इसी तरह वह घंटे भर और बोल लेता, अपने दिल की बात कह लेता, गुबार निकाल लेता तो यकीनन वह स्वस्थ महसूस करने लगता। कौन जाने, यदि डॉक्टर दोस्ताना हमदर्दी से उसकी बात सुन लेता, शायद जैसा कि अकसर होता है, वह ना-नुकुर किए बिना और अनावश्यक गलतियाँ किए बिना ही अपनी किस्मत से संतुष्ट हो जाता, लेकिन हुआ कुछ और ही।

उधर अबोगिन बोलता जा रहा था, इधर अपमानित डॉक्टर के चेहरे पर एक बदलाव सा होता दिखाई दे रहा था। उसके चेहरे पर जो स्तब्धता और उदासीनता का भाव था, वह मिट गया और उसकी जगह क्रोध और अपमान ने ले ली। उसका चेहरा और भी हठपूर्ण और कठोर हो गया। ऐसी हालत में अबोगिन ने उसे धार्मिक पादरियों जैसे भावशून्य और रूखे चेहरेवाली एक सुंदर नवयुवती की फोटो दिखाते हुए पूछा कि क्या कोई यकीन कर सकता है कि ऐसे चेहरेवाली स्त्री झूठ बोल सकती है, छल कर सकती है?

□

डॉक्टर अबोगिन के पास से पीछे हट गया और भौंचक्का होकर उसे देखने लगा।

''आप मुझे यहाँ लाए ही क्यों?'' डॉक्टर बोला। उसकी दाढ़ी हिल रही थी, ''आपने शादी की, क्योंकि आपके पास इससे अच्छा और कोई काम नहीं था और इसलिए आप अपना यह घटिया नाटक मनमाने ढंग से खेलते रहे, पर मुझे इससे क्या लेना-देना? मेरा आपके इस प्यार-मोहब्बत से क्या सरोकार? मुझे तो चैन से जीने दीजिए। आप अपनी मुक्केबाजी कीजिए, अपने मानवतावादी विचार बघारिए, वायलिन बजाइए,

मुरगे की तरह मोटे होते जाइए, पर किसी को जलील मत कीजिए। यदि आप उनका सम्मान नहीं कर सकते तो कृपा करके उनसे अलग ही रहिए।''

अबोगिन का चेहरा लाल हो गया। उसने पूछा, ''इसका मतलब क्या है?''

''इसका मतलब यह है कि लोगों के साथ यह कमीना और कुत्सित खिलवाड़ है। मैं डॉक्टर हूँ। आप डॉक्टरों को, बल्कि हर ऐसा काम करनेवाले को, जिसमें से इत्र और वेश्यावृत्ति की गंध नहीं आती, नौकर और अर्दली किस्म का आदमी समझते हैं। आप जरूर समझिए। लेकिन दु:खी व्यक्ति की भावनाओं से खिलवाड़ करने का, उसे नाटक की सामग्री समझने का आपको कोई हक नहीं।''

अबोगिन का चेहरा गुस्से से फड़क रहा था। उसने ललकारकर पूछा, ''मुझसे ऐसी बात करने की आपकी हिम्मत कैसे हुई?''

मेज पर घूँसा मारते हुए डॉक्टर चिल्लाया, ''मेरा दु:ख जानते हुए भी अपनी अनाप-शनाप बातें सुनाने के लिए मुझे यहाँ लाने की हिम्मत आपको कैसे हुई? दूसरे के दु:ख का मखौल करने का हक आपको किसने दिया?''

अबोगिन चिल्लाया, ''आप जरूर पागल हैं। कितने बेरहम हैं आप। मैं खुद कितना दु:खी हूँ और···और···!''

घृणा से मुसकराकर डॉक्टर ने कहा, ''दु:खी! आप इस शब्द का इस्तेमाल मत कीजिए। इसका आपसे कोई वास्ता नहीं। जो आवारा-निकम्मे कर्ज नहीं ले पाते, वे भी अपने को दुखी कहते हैं। मोटापे से परेशान मुरगा भी दु:खी होता है। घटिया आदमी!''

गुस्से से पिनपिनाते हुए अबोगिन ने कहा, ''जनाब, आप अपनी औकात भूल रहे हैं! ऐसी बातों का जवाब लातों से दिया जाता है!''

अबोगिन ने जल्दी से अंदर की जेब टटोलकर उसमें से नोटों की एक गड्डी निकाली और उसमें से दो नोट निकालकर मेज पर पटक दिए। नथुने फड़काते हुए उसने हिकारत से कहा, ''यह रही आपकी फीस। आपके दाम अदा हो गए।''

नोटों को जमीन पर फेंकते हुए डॉक्टर चिल्लाया, ''रुपए देने की गुस्ताखी मत कीजिए। यह अपमान इससे नहीं धुल सकता।''

अबोगिन और डॉक्टर एक-दूसरे को अपमानजनक और भद्दी-भद्दी बातें कहने लगे। उन दोनों ने जीवन भर शायद सन्निपात में भी कभी इतनी अनुचित, बेरहम और बेहूदी बातें नहीं कही थीं। दोनों में जैसे वेदनाजन्य अहं जाग गया था। जो दु:खी होते हैं, उनका अहं बहुत बढ़ जाता है। वे क्रोधी, नृशंस और अन्यायी हो जाते हैं। वे एक-दूसरे को समझने में मूर्खों से भी ज्यादा असमर्थ होते हैं। दुर्भाग्य लोगों को मिलाने की जगह अलग करता है। प्राय: यह समझा जाता है कि एक ही तरह का दु:ख पड़ने पर लोग एक-दूसरे के नजदीक आ जाते होंगे, लेकिन हकीकत यह है कि ऐसे लोग अपेक्षाकृत संतुष्ट लोगों से बहुत ज्यादा नृशंस और अन्यायी साबित होते हैं।

डॉक्टर चिल्लाया, ''मेहरबानी करके मुझे मेरे घर पहुँचा दीजिए।'' गुस्से से उसका दम फूल रहा था।

अबोगिन ने जोर से घंटी बजाई। जब उसकी पुकार पर भी कोई नहीं आया तो गुस्से में उसने घंटी फर्श पर फेंक दी। कालीन पर एक हल्की, खोखली आह सी भरती हुई घंटी खामोश हो गई।

तब एक नौकर आया।

घूँसा ताने अबोगिन जोर से चीखा, ''कहाँ मर गया था तू? बेड़ा गर्क हो तेरा! तू अभी था कहाँ? जा इस आदमी के लिए गाड़ी लाने को कह और मेरे लिए बग्घी निकलवा!'' जैसे ही नौकर जाने के लिए मुड़ा, अबोगिन फिर चिल्लाया, ''ठहर! कल से इस घर में एक भी गद्दार, दगाबाज नहीं रहेगा। सब निकल जाएँ, दफा हो जाएँ यहाँ से। मैं नए नौकर रख लूँगा। बेईमान कहीं के!''

गाड़ियों के लिए प्रतीक्षा करते समय डॉक्टर और अबोगिन खामोश रहे। नाजुक सुरुचि का भाव अबोगिन के चेहरे पर फिर लौट आया था। बड़े सभ्य तरीके से वह अपना सिर हिलाता हुआ, कुछ योजना सी बनाता हुआ कमरे में टहलता रहा। उसका गुस्सा अभी शांत नहीं हुआ था, पर वह ऐसा जाहिर करने का प्रयास कर रहा था, जैसे कमरे में शत्रु की मौजूदगी की ओर उसका ध्यान भी न गया हो। उधर डॉक्टर एक हाथ से मेज पकड़े हुए स्थिर खड़ा अबोगिन की ओर हिकारत से देख रहा था, गोया वह उसका शत्रु हो।

कुछ देर बाद जब डॉक्टर गाड़ी में बैठा अपने घर जा रहा था, उसकी आँखों में तब भी वही घृणा भाव कायम था। घंटे भर पहले जितना अँधेरा था, अब वह ज्यादा बढ़ गया था। दूज का लाल चाँद पहाड़ी के पीछे छिप गया था और उसकी रखवाली करनेवाले बादल सितारों के आस-पास काले धब्बों की तरह पड़े थे। पीछे से सड़क पर पहियों की आवाज सुनाई दी और बग्घी की लाल रंग की लालटेनों की चमक डॉक्टर की गाड़ी के आगे आ गई। वह अबोगिन था। जो प्रतिवाद करने, झगड़ा करने पर उतारू था।

पूरे रास्ते डॉक्टर अपनी शोकाकुल पत्नी या अपने मृत पुत्र आंद्रेई के बारे में नहीं बल्कि अबोगिन और उस घर में रहनेवालों के बारे में सोचता रहा, जिसे वह अभी छोड़कर आया था। उसके विचार नृशंस और अन्यायपूर्ण थे। उसने मन-ही-मन अबोगिन, उसकी बीवी, पापचिंस्की और सुगंधित गुलाबी उषा में रहनेवाले सभी लोगों पर क्षोभ प्रकट किया और रास्ते भर बराबर इन लोगों के लिए नफरत और हिकारत की बातें सोचता रहा। यहाँ तक कि उसके दिल में दर्द होने लगा और ऐसे लोगों के प्रति ऐसा ही दृष्टिकोण उसके जहन में स्थिर हो गया।

वक्त गुजरेगा और किरीलोव का दु:ख भी गुजर जाएगा। किंतु यह अन्यायपूर्ण दृष्टिकोण डॉक्टर के साथ हमेशा रहेगा—जीवनभर, उसकी मृत्यु के दिन तक।

ए-५००१, गौड़ ग्रीन सिटी,
वैभव खंड, इंदिरापुरम
गाजियाबाद-२०१०१० (उ.प्र.)
दूरभाष : ८५१२०७००८६

मेलजोल के बोल सुनाए

● राजा चौरसिया

बादल

रोज हवा के पंख लगाकर
नभ में उड़ते बादल काले
बूँदाबाँदी और झड़ी है
गरमी पर तो मार पड़ी है
सभी ओर पानी ही पानी
देखो पुल तक नदी चढ़ी है।

घड़-घड़ करके बरसें तड़-तड़
कभी न रहते बैठे ठाले
रात और दिन दौड़ लगाएँ
बीच-बीच बिजली चमकाएँ
ये छलकाएँ मानो गागर
इंद्रधनुष को भी झलकाएँ
धरती को करते हैं धानी
दानी ये कहलानेवाले
छाया सी शीतल बयार है
मनभावन लगती फुहार है
जंगल-जंगल मोर नाचते
हरियाली का समाचार है
घूरे के भी दिन फिरते हैं
सबसे कहते नदियाँ-नाले।

बरसात

पानी रिमझिम जुगनू टिमटिम
कितनी प्यारी है बरसात
जंगल फिर से हरे हुए हैं
नदियाँ-नाले भरे हुए हैं
और दुधमुँहे दाँतों जैसे
दिखते हैं पेड़ों के पात।

झड़ी फुलझड़ी सी मनभावन
भीग रहे सबके घर-आँगन
आसमान में ढोल बजाएँ
बादल के ये दल दिन-रात

खेतों में फैली हरियाली
इंद्रधनुष की छटा निराली
अलबेले फूलों की झाँकी
मंद गंध लगती सौगात।

रंग-बिरंगे छाते छाए
शीतल हवा सभी को भाए
मोर नाचते ता-ता थैया
चौमासे की बढ़िया बात।

खुशियाँ अपने पास

पंख अगर हैं तो उड़ने को
यह सारा आकाश
यदि श्रम से हों पूरे सपने
खुशियाँ अपने पास।

सिर्फ कल्पनाओं के द्वारा
बने न कोई बात
देर-सवेर सफल होते हैं
मेहनत वाले हाथ।

कदम बढ़ाओ क्रम-क्रम से तुम
मंजिल पर हो ध्यान
बच्चे ही तो कहलाते हैं
होनहार बिरवान।

चिड़ियों की चहकार

सबको भाए और बुलाए
चिड़ियों की चहकार
प्रतिदिन प्रात:काल जगाए
चिड़ियों की चहकार

मिसरी जैसी कितनी मीठी
बजती ज्यों सीटी पर सीटी
मेलजोल के बोल सुनाए
चिड़ियों की चहकार।

झाड़ी, झुरमुट, वन या उपवन
फुदक-फुदककर उड़ती सन-सन
सूरज का स्वागत कहलाए
चिड़ियों की चहकार।

उपरियापान
जिला : कटनी-४८३३३२ (म.प्र.)

एक लंबा अंतराल और 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी'

● राजेंद्र नागदेव

सर जे.जे. कॉलेज ऑफ आर्किटेक्चर, मुंबई से १९६६ में स्नातक होने के बाद सब सहपाठी बिखर गए थे। आजीविका हेतु अलग रास्तों पर निकल गए थे। अविनाश से फिर मुलाकात नहीं हुई। फोन पर भी कभी बात नहीं हुई। आरंभिक दिनों में एक-दो पत्र मैंने लिखे होंगे, एक-दो उसने। उसके विषय में जानकारी इतनी ही थी कि वह स्नातकोत्तर अभ्यास हेतु अमेरिका चला गया था। सन् १९६६ और २०१०···लंबा अंतराल। इतने लंबे समय में बहुत कुछ बदल जाता है। अविनाश सहपाठी ही नहीं, बहुत अच्छा मित्र था, बहुत सरल व्यक्ति। जब अमेरिका जाने का अवसर आया, अविनाश का खयाल आना स्वाभाविक था। उसके संबंध में कोई जानकारी मेरे पास नहीं थी कि किस राज्य में होगा, किस नगर में होगा, क्या कर रहा होगा आदि?

मैं और पत्नी कड़ाके की ठंड में अमेरिका आ गए हैं बेटी-दामाद के साथ कुछ समय बिताने। हम ओहायो राज्य के कोलंबस शहर से लगे उपनगर जैसे हिस्से डबलिन में हैं। यहाँ पहुँचते ही अपने कॉलेज साथी को ढूँढ़ने की इच्छा और प्रबल हो गई। इंटरनेट पर उसका नाम डाला और खोज आरंभ की। मैंने उसे ढूँढ़ लिया। साथ ही उसका फोन नंबर भी पता चल गया। वह फिलाडेल्फिया राज्य में उत्तर भारतीयों की संस्था में काम कर रहा है। एक मराठी भाषी व्यक्ति के बारे में यह जानकर प्रसन्नता हुई, क्योंकि उन दिनों मुंबई में शिवसेना के कारण हिंदी भाषियों का प्रबल विरोध चल रहा था। एक शंका मन में आई कि पता नहीं यह नंबर कितना पुराना होगा, फोन लगेगा भी या नहीं। मैंने फोन लगाया तो दूसरे छोर पर अविनाश ही था। मुझे प्रतीत हुआ जैसे मैंने कोई बड़ा पुरातात्त्विक शोध कर लिया हो। अपनी सामान्य सोच के अनुसार लगा कि जो व्यक्ति पैंतालीस वर्षों से अमेरिका में है, वह अंग्रेजी में ही बात करेगा। मैंने उसी भाषा में अपना परिचय दिया। उसने पहचान लिया। उसकी आवाज सुनाई दे रही थी, पत्नी को कह रहा था, 'मालिनी, सुनो मेरा क्लासमेट अमेरिका आया है, पैंतालीस साल बाद मुझसे बात कर रहा है।' मुझे सुखद आश्चर्य हुआ। जब उसने कहा, 'यार! अपन हिंदी में बात कर सकते हैं न। मैं साहित्यिक हिंदी नहीं जानता, पर सामान्य हिंदी बोल सकता हूँ।' हमारा वार्त्तालाप फिर हिंदी में चला। आरंभ हुआ तो पैंतालीस मिनट चलता रहा। मन-ही-मन फोन का बिल बढ़ने की चिंता हो रही थी। हमने कॉलेज के अपने सोए हुए दिनों को जाग्रत् किया। उसने हमारे उन साथियों के बारे में बताया, जो अमेरिका के अन्य नगरों में हैं। इसके बाद हमने कई बार बातचीत की। उसने बताया कि वह फिलाडेल्फिया के

कवि, चित्रकार, वास्तुकार। 'सदी के इन अंतिम दिनों में', 'एक पत्ता थरथराता रहा', 'गूँगी घंटियाँ', 'चक्रवात सा घूमता है शून्य', 'अंधी यात्राएँ', 'पत्थर में बंद आदमी', 'सूर्य गिरा है अभी-अभी नीचे', 'आवाजें अब नहीं आतीं', 'उस रात चाँद खंडहर में मिला' (काव्य-संग्रह)। 'धुंध और आकार' (यात्रावृत्त)।

नगर निगम में नगर-नियोजक के पद से सेवामुक्त होने के बाद अब समाज सेवा के कार्यों में समय बिता रहा है।

वह पेंसिल्वेनिया प्रांत के फिलाडेल्फिया शहर से लगभग तीस मील दूर एक छोटे से कस्बे में रहता है। यह स्थान कोलंबस से बहुत दूर है।

भारत वापस जाने में ४-५ दिन शेष हैं। एक दिन संध्या चार बजे अविनाश का फोन आया। उसका आग्रह था, मैं और पत्नी भारत वापसी से पहले उसके घर आएँ। दो-तीन दिन रुकें, फिर वहीं से न्यूयॉर्क चले जाएँ। हमें वापसी उड़ान भारत के लिए लेनी है। वह स्वयं हवाईअड्डे पर हमें छोड़ देगा। मैंने आनाकानी की तो उसने बेटी-दामाद से बात की। वे तुरंत हमारा कार्यक्रम बनाने में जुट गए। हम यदि रेलमार्ग से जाते तो सत्रह घंटों की यात्रा होती। इतनी लंबी यात्रा के लिए हम तैयार नहीं थे। रेल के लिए भी पहले किसी अन्य शहर जाना पड़ता। अंततः हवाईयात्रा की ऐसी टिकट मिली कि पहले फिलाडेल्फिया से विपरीत दिशा में अटलांटा जाना था। वहाँ से दूसरे विमान द्वारा फिर उलटी दिशा में फिलाडेल्फिया। हवाईयात्रा का हमें ज्यादा अनुभव नहीं है। बहुत पहले केवल एक बार इंग्लैंड की यात्रा की थी। मन में आशंका थी कि कोई समस्या न पैदा हो जाए। खासकर अटलांटा में, जहाँ विमान बदलना था। डबलिन या कोलंबस से उड़ान नहीं थी। उसके लिए हमें दूसरे शहर एटन जाना था। कार द्वारा दो घंटे की यात्रा कर एटन हवाईअड्डे पहुँचना था। उड़ान अगले दिन शाम की थी। रात में अंतिम रूप से सामान समेटा, क्योंकि अब वापस कोलंबस नहीं आना था। एटन के लिए दोपहर को रवाना हो गए। मैं, पत्नी, अमित, मीनू और साथ में मात्र सवा माह की नातिन आरोही।

हम एटन हवाईअड्डे के रास्ते पर हैं। मौसम एकदम साफ। सूरज चमक रहा है। पूरे रास्ते जेट विमानों के धुएँ से निर्मित लंबी आड़ी-तिरछी रेखाएँ एक-दूसरे को काटती हुई और धीरे-धीरे धुँधली होती हुईं। लगता

है, सफेद अधबुना कपड़ा कोई आकाश में फैला गया है। कई दिनों तक निरंतर हिमपात के बाद मौसम साफ है तो मन में स्फूर्ति है।

एटन विमानतल बहुत बड़ा नहीं है। उड़ान संबंधी औपचारिकताएँ पूरी करने लगते हैं। हमें अटलांटा में विमान बदलना है। अटलांटा विमानतल बहुत विशाल है। अगली उड़ान के बीच मात्र आधा घंटा ही मिलेगा। जरूरी है कि विमान वहाँ नियत समय पर पहुँचे। सारी औपचारिकताएँ पूर्ण करने के बाद मैं और पत्नी बोर्डिंग पास लेने हेतु प्रतीक्षालय में बैठते हैं। विमान कहीं पीछे से आनेवाला है। अभी तक पहुँचा नहीं है, हम अनिश्चितता की स्थिति में हैं। मन में आशंका है कि अटलांटा से ली जानेवाली उड़ान छूट गई तो! हम जैसे लोगों को जिन्हें विदेश यात्राओं का पर्याप्त अनुभव नहीं होता, ऐसी स्थितियाँ बहुत विचलित कर देती हैं। कुछ देर में देखते हैं कि अमित हमारी ओर आ रहा है। 'क्या हुआ?' मैंने पूछा। बताया कि हवाईअड्डे से बाहर निकलते समय उन्होंने सहज मुड़कर सूचनापट्ट देखा, पता चला कि अटलांटा से हम आगे की उड़ान नहीं पकड़ सकेंगे, क्योंकि यह उड़ान वहाँ देरी से पहुँचेगी। तय किया कि टिकट निरस्त करवाकर कल सुबह किसी अन्य विमान से जाया जाए। यह आसान कार्य नहीं था। देर तक प्रयत्न करने पर टिकट निरस्त हुई तो दूसरी समस्या आ गई। सामान विमान में लदने हेतु जा चुका था। उसे वापस लेने के लिए एक घंटा प्रतीक्षा करनी पड़ी। ये बातें बाद में याद आती हैं तो अच्छा लगता है कि चलो ऐसा एक अनुभव भी हमारे खाते चढ़ा, पर उस समय का तनाव वही जानता है, जिसने वह स्थिति झेली हो।

स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी

विकल्पहीन हम डबलिन की अनावश्यक वापसी पर निकलते हैं। वहाँ पहुँचते-पहुँचते रात के साढ़े ग्यारह बज जाते हैं। भोजन कर सोने चले जाते हैं। नींद तो क्या आती, सुबह फिर साढ़े तीन बजे जागना था। सुबह की उड़ान थी तो कोलंबस से ही, मगर हवाईअड्डे तक जाने में एक घंटा लग जाता है। आधी-अधूरी, लगभग नहीं के बराबर पारदर्शी नींद के बाद साढ़े तीन बजे जाग गए। घरेलू उड़ान होने के कारण विमानतल पर कोई विशेष जाँच आदि तो नहीं हुई, फिर भी कुछ समय लग ही गया। सामान खोलकर वहाँ के कर्मचारी ने क्रीम की एक ट्यूब निकाल ली। कहा कि छह इंच से अधिक लंबी ट्यूब नहीं ले सकते। मैंने कूड़ेदान में फेंक देने को कहा तो वह थोड़ा झिझका। उसने अपने ही एक कर्मचारी को भेजकर वह ट्यूब बाहर अमित के पास भिजवा दी। उसका यह नम्र व्यवहार अच्छा लगा। अमित बाहर से लगातार हमें संकेत कर रहा है कि हमें देरी हो रही है। हमारे साथ यह समस्या हो गई थी कि जाँच के दौरान हमारे एक बैग की जिप टूट गई थी। हम बैग को बंद करने की कोशिश कर रहे थे। अंततः बैग उसी स्थिति में किसी तरह विमान तक ले जाना पड़ा।

अटलांटा हवाईअड्डे के बारे में हमें जानकारी थी कि वह बहुत विशाल है। एक से दूसरे टर्मिनल तक पहुँचने में बहुत देर लग सकती है, जबकि समय हमारे पास आधा घंटा ही है। यह भी मालूम था कि अंदर-ही-अंदर वहाँ छोटी रेल चलती है। किंतु कहाँ से, कैसे चलती है, कल्पना नहीं थी। विमान में उपलब्ध पुस्तिका में विमानतल का नक्शा मिल गया, जिससे इस संबंध में जानकारी मिल गई। विमान से उतरते ही भागदौड़ करनी पड़ी। रेल सामने ही खड़ी है—चार डिब्बोंवाली बिना ड्राइवर की, स्वचालित। रेल से हम अपने टर्मिनल वाले स्टॉप पर उतरते हैं। यहाँ से भी टर्मिनल काफी दूर है। अनगिनत टर्मिनल हैं, जैसे कोई मुख्य टर्मिनल 'ई' है तो उसके उप टर्मिनल ई१, ई२ आदि। इनकी संख्या सौ से भी अधिक हो सकती है। हमारे पास कुछ ही मिनट हैं। यद्यपि स्पष्ट संकेतक जगह-जगह लगे हैं, फिर भी सामान के साथ बहुत भागना पड़ा। हाँफते हुए अपने टर्मिनल तक पहुँचते हैं। हम विमान के अंदर हैं। फिलाडेल्फिया हमारी अपेक्षा से कम समय में ही आ गया। विमान नियत समय से आधा घंटा पहले पहुँच गया। जब तक हम सामान लेनेवाले स्थान पर पहुँचते, विमान कंपनी की महिला कर्मचारी हमारा सामान उतार चुकी थी। बिना कोई पूछताछ किए उसने सामान हमारे सुपुर्द कर दिया। हम प्रतीक्षालय में बेंच पर बैठे हैं। 'क्याँ जाव छो?' एक अत्यंत वृद्ध भारतीय महिला पत्नी से पूछती है।

पत्नी प्रश्नवाचक दृष्टि से देखती है। मैं कहता हूँ कि पूछ रही हैं, 'कहाँ जा रहे हो?' वह महिला अकेली ही हमारीवाली उड़ान से आई थी। बेटे के आने की राह देख रही थी। विदेश में इस तरह अपने किसी देशवासी से बात कर सुखद अनुभूति होती है। धीरे-धीरे यात्रियों को लेने उनके मित्र-परिजन आते रहे। प्रतीक्षालय खाली होता रहा। अंत में वहाँ वह वृद्धा, हम दोनों और तीन वर्ष की बच्ची के साथ एक भारतीय युवती तथा दो-चार अन्य यात्री ही रह गए। युवती ने मुझसे फोन करने हेतु सिक्के माँगे। मुझे स्वयं भी अविनाश को फोन करना था। उसे कुछ सिक्के दिए और उससे फोन करने का तरीका मालूम किया। दो बार प्रयत्न करके असफल हो चुका था। हमें बैठे-बैठे बहुत देर हो चुकी है। अविनाश का कहीं अता-पता नहीं है। ऊब और अनिश्चितता को खत्म करना जरूरी था। अविनाश के घर फोन लग गया। उसकी बेटी ने अमेरिकी उच्चारण वाली अंग्रेजी में बताया कि पापा अपने किसी मित्र को लेने हवाईअड्डे गए हैं। मैंने बताया मैं ही वह मित्र हूँ। मैंने हिंदी में बात की तो उसने माँ को बुला लिया। अविनाश की पत्नी ने बताया कि वह आधे घंटे पहले घर से निकला है।

एक-एक कर सब यात्री जा रहे हैं। कुछ के रिश्तेदार आ गए थे। कुछ बाहर रास्ते से बस पकड़कर जा रहे हैं। हम ऊबने लगे हैं। अविनाश को वहाँ पहुँचने में और आधा घंटा लग गया। पत्नी पूछती है कि ४५ वर्ष

बाद अपने दोस्त को पहचान लोगे ? मैंने कहा कि वह देखो, जो नाटा-सा साँवला व्यक्ति आ रहा है, वही होना चाहिए। मैं सही था। इतने वर्ष बाद मिलने का अनुभव वह भी विदेशी धरती पर, अद्‌भुत था। प्रतीक्षालय खाली हो चुका है। केवल भारतीय वृद्धा ही पुत्र की प्रतीक्षा में बैठी है। अविनाश ने उससे बात की, इस आशय से कि क्या उसे किसी मदद की आवश्यकता तो नहीं। अविनाश ने यहाँ के नगरनिगम के अपने सेवाकाल में इस हवाईअड्डे पर काम किया था। इस कारण वह इस स्थान से अच्छी तरह परिचित है। हमने सामान उठाया और पार्किंग की ओर चल पड़े। यहाँ से हमें तीस मील दूर जाना है। गाड़ी में बैठते ही हम अपने जे.जे. कॉलेजवाले पुराने दिनों में पहुँच गए। कॉलेज परिसर···विख्यात कलाकेंद्र सर जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट इंस्टीट्यूट ऑफ अप्लाइड आर्ट के भवन···सामने दादाभाई नौरोजी मार्ग···वी.टी. स्टेशन, नौरोजी मार्ग के उस पार 'शांति भोजनालय'; वहाँ हम लंच के समय केवल साठ पैसों में 'राइसप्लेट' लिया करते थे, जिसमे नाम के विपरीत पूरियाँ, सब्जियाँ, पापड़-अचार सबकुछ हुआ करता था। सब मेरी आँखों के सामने तैर गया। अद्‌भुत अनुभव होता है एक समय से निकलकर दूसरे में चले जाना। वहाँ से वापसी, कुछ कठिन ही होती है। शीला ऊब रही होगी। बात-बात में अविनाश को बताया कि पत्नी मराठी बोल सकती है। उसे इतनी खुशी हुई कि उसने कार चलाते हुए ही पत्नी को फोन करके कहा, 'अरे सुनो, मिसेज नागदेव मराठी बोल सकती हैं। मजा आ जाएगा।' अपने देश, अपनी मिट्‌टी, अपनी भाषा से जुदा होने की पीड़ा क्या होती है, उस दिन महसूस हुआ।

तीस मील की दूरी तय करके अविनाश के कस्बे में प्रवेश करते हैं। छोटा सा, साफ-सुथरा कस्बा। चारों ओर खुलापन और हरियाली। हरियाली के मध्य सलीके स्थापित ढलवाँ छतों वाले दुमंजिले मकान। हर मकान में तलघर। यहाँ तलघर एक तरह से अनिवार्यता है। फालतू सामान रखने के अलावा टॉरनेडो-भयानक चक्रवात के समय शरण लेने हेतु इसका उपयोग किया जाता है। अविनाश ने पहले ही बता दिया था कि तीन दिन पहले आए भारी आँधी-तूफान के कारण तलघर में पानी भर गया था। पत्नी को कार्य से अवकाश लेकर एक दिन घर रहना पड़ा पानी निकालने के लिए। तब से दोनों तलघर की सफाई करने में लगे हुए हैं। हमने अगले दिन तलघर देखा तो उनकी परेशानी की कल्पना हुई। अमेरिका में श्रमिक आसानी से उपलब्ध नहीं हैं। मजदूरी इतनी अधिक देनी होती है कि सामान्यत: लोग स्वयं ही वे सारे काम कर लेते हैं, जिन्हें करना हम भारत में बेइज्जती समझते हैं। अच्छी बात यह है कि ऐसे कामों हेतु यहाँ सब आवश्यक साधन उपलब्ध हैं।

हम जब घर के रास्ते पर ही थे, फोन पर अविनाश की पत्नी ने बता दिया था कि सब लोग भोजन एक भारतीय भोजनालय में करेंगे। हवाईअड्डे से हम सीधे वहीं पहुँच जाएँ। वह अपनी एक बेटी के साथ पहुँच जाएगी। मैं थक गया था। मैंने पहले घर पहुँचकर हाथ-मुँह धोकर, फिर होटल जाने की बात की। घर पर अविनाश, उसकी पत्नी और सबसे छोटी बेटी की मदद से सामान घर में रखा।

यहाँ सब लोग कुत्ते और बिल्लियाँ पालते हैं। मैं उन घरों में जाने से घबराता हूँ, जहाँ कुत्ते होते हैं। एक बुरे अनुभव से गुजर चुका हूँ। अविनाश ने अपनी कुतिया के बारे में बताया कि जबतक उसे स्पर्श नहीं किया जाए, कुछ नहीं करती। स्पर्श करने पर स्थिति बिगड़ सकती है। हर समय वहाँ इस बात का ध्यान रखना पड़ा। उन्होंने एक सुनहरी बिल्ली भी पाली है। दोनों पशुओं को 'मुडे' सरनेम के साथ नाम दिए हैं, जैसे वे भी परिवार के ही सदस्य हों।

हम सब कुछ देर में भोजनालय के लिए प्रस्थान करते हैं। उसे एक पंजाबी सज्जन चलाते हैं। सप्ताह में एक दिन वहाँ स्वरुचि भोज होता है। आज वही है। एक लंबी मेज पर सामिष-निरामिष व्यंजन सुसज्जित थे। हमारे भोजनालय में प्रवेश करते ही व्यवस्थापकों में से एक सिख युवक हमारे पास आया और पत्नी व श्रीमती मुडे से शुद्ध मराठी में धाराप्रवाह वार्त्तालाप करने लगा। इतनी अच्छी मराठी बोलते सुना तो आश्चर्यचकित रह गए। पता चला कि वह मुंबई में ही पला-बढ़ा, वहीं उच्च शिक्षा प्राप्त की। वह मराठी के अलावा विश्व की पंद्रह भाषाएँ धाराप्रवाह बोल सकता है। उसने बताया, उसकी आकांक्षा विश्व के विभिन्न देशों में होटल व्यवसाय में ही कार्य करने की है। पारिवारिक जिम्मेदारियाँ बाधक न बनें, इसलिए उसने तय किया है कि वह अविवाहित रहेगा। उसकी उत्कट इच्छा और आत्मविश्वास से लगा कि वह अपने ध्येय में अवश्य सफल होगा। इस मनोरंजक व्यक्तित्व से मुलाकात के बाद भोजन किया। जिस तरह वहाँ उपस्थित हर व्यक्ति अविनाश से आत्मीयता और आदर के साथ मिल रहा था, लगा कि वह बहुत लोकप्रिय है। भोजन के बाद वापस घर लौटते हैं।

मौसम इन दिनों बहुत अच्छा है। बर्फ गिरनी बंद हो गई है। ठंड कम है। अविनाश की पत्नी कन्नड़ मूल की है, लेकिन मराठी ही बोलती है। वह स्थानीय अस्पताल में मनोरोग चिकित्सक है। पूरे घर में अविनाश की पूर्व अमेरिकन और वर्तमान भारतीय पत्नी और तीनों पुत्रियों के छायाचित्र लगे हुए हैं।

आज हमने कहीं और जाने का कार्यक्रम नहीं बनाया। मूल कार्यक्रम के अनुसार यहाँ न पहुँच पाने के कारण आज का दिन व्यर्थ गया। कल रविवार है। अविनाश की पत्नी के अवकाश का दिन। कल हमारा कार्यक्रम विश्व प्रसिद्ध प्रतिमा 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' देखने का है। आज दिनभर अविनाश की बेटी साथ थी। उसे हिंदी नहीं आती। घर में मराठी अच्छी बोल लेती है। वहाँ बसे हुए लोगों के सामने यह एक सांस्कृतिक प्रश्न मानसिक तनाव का कारण है कि भारत से नितांत भिन्न परिवेश में बच्चों को कैसे संस्कार दिए जाएँ कि वे अपनी जड़ों से भी जुड़े रहें और जिस देश के अब नागरिक हैं, वहाँ की संस्कृति, नियम-कानून आदि के अनुसार आचरण करने में भी असहजता का अनुभव न करें। यह सचमुच बहुत ही कठिन होता होगा।

कल संध्या और आज सुबह भोजन की मेज पर हम फिर कॉलेज के दिनों में चले गए। शीला और मालिनी क्या सोच रही होंगी, पता नहीं। भोजन में अधिकतर व्यंजन भारतीय हैं, जो लगभग हर शहर में 'पटेल

ब्रदर्स' या कुछ अन्य दुकानों पर आसानी से उपलब्ध हैं। सामान्यत: सभी भारतीय इन दुकानों में सप्ताहांत में जाकर आवश्यक सब्जियाँ, फल आदि लाकर फ्रिज में रख लेते हैं। यहाँ न तो रेहड़ी-ठेलेवाले सब्जियाँ लेकर घर-घर बेचने आते हैं, न मोहल्ले में सब्जियों अथवा परचून की छोटी-मोटी दुकानें होती हैं। फ्रिज में से खाद्य सामग्री निकाली, गरम की और मेज पर सजा दी। घरों में बहुत ही कम व्यंजन बनाए जाते हैं। सामान्यत: पति-पत्नी दोनों ही नौकरी करते हैं। अत: इतना समय भी किसी के पास नहीं होता। दुकानों में भारत के सब प्रदेशों के भोज्य पदार्थ उपलब्ध हैं, जो शायद भारत में भी हर प्रदेश में न मिलें। अचार, चटनी, पापड़, कचौरी, समोसे, ढोकला, इडली, दोसा, वड़ा-साँभर सबकुछ मिलता है। नाश्ता करते और छोटे-मोटे काम निबटाते हुए बहुत समय निकल गया। आज न्यूयॉर्क की तरफ जाना है 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' देखने। कार्यक्रम ऐसा था कि सुबह जल्दी निकलकर न्यूयॉर्क शहर में गाड़ी कहीं पार्किंग में खड़ी कर स्थानीय टूरिस्ट बस द्वारा शहर का भ्रमण करते, फिर यह विश्वप्रसिद्ध स्मारक देखते। घर से निकलने में ही विलंब हो जाने के कारण न्यूयॉर्क देखने का कार्यक्रम छोड़ देना पड़ा। हम सीधे स्मारक जाएँगे।

समुद्र में टापू पर खड़ा स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी

वे दोनों पति-पत्नी और हम, कुल चार लोग निकलते हैं। घर से कुछ ही दूर एक दुमंजिली इमारत दिखी, जिसे नींव सहित वैसा का वैसा हटाकर मूल स्थान से लगभग सौ गज दूर स्थापित किया गया है। मकान का ऐतिहासिक महत्त्व होने के कारण उसे ढहाया नहीं जा सकता था। हम उस बहुत छोटे से कस्बे की खुली-खुली, साफ-सुथरी सड़कों से गुजर रहे हैं। गंतव्य तक पहुँचने में ढाई घंटे लग सकते हैं। रास्ते में एक छोटे-से रेस्तराँ पर रुककर कॉफी पीकर पुन: यात्रा पर निकल पड़ते हैं।

न्यूयॉर्क शहर अभी दूर है। रास्ते में बाईं ओर एक हवाईअड्डा दिखाई दे रहा है। यह नेवर्क हवाईअड्डा है। इस क्षेत्र में भारतीय बहुत बड़ी संख्या में हैं, विशेषकर गुजराती। इस कारण यहाँ से भारत के लिए अनेक उड़ानें हैं, जो भारतीयों से ही भरी होती हैं। अहमदाबाद के लिए यहाँ से सीधी उड़ान है।

हम न्यूजर्सी राज्य के 'लिबर्टी स्टेट पार्क' पहुँच गए हैं। पार्किंग में गाड़ी खड़ी करते हैं। दूर समुद्र में एक द्वीप के कोने पर 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' दिखाई दे रही है। वहाँ जाने के लिए हमें टिकटें खरीदनी होंगी। पता चलता है कि टिकटें साढ़े तीन बजे तक ही मिलती हैं। हमें देरी हो गई है। हमारे पास समय बहुत कम रह गया है। अत: मालिनी टिकट लेने जल्दी-जल्दी आगे चली जाती है। वह हमसे बहुत आगे निकल गई है। उसके पीछे अविनाश है। हम बहुत पीछे हैं। पत्नी बहुत धीरे-धीरे चल रही है। यह बाद में पता चला कि पत्नी के पेट में बहुत पीड़ा थी। उस व्याधि से मुक्त होने में छह मास लग गए थे। टिकटें मिल गईं। लेकिन प्रवेश वाली लाइन में लगने से पहले सुरक्षा जाँच आवश्यक थी। उसके लिए पीछे लौटकर एक पुराने भवन में आते हैं। सुरक्षा जाँच के बाद आकर लाइन में लग जाते हैं।

यहाँ से सामने बाईं ओर न्यूयॉर्क-मैनहट्टन की गगनचुंबी अट्टालिकाएँ दिखाई दे रही हैं। इन प्रसिद्ध इमारतों के चित्र कई बार देखे हैं। विशेषकर, कॉलेज में वास्तुकला का अध्ययन करते हुए। दूरी पर होने और महासागर के किनारे की धुँध के कारण पूरा दृश्य कुछ धुँधला सा है। कई दशकों तक विश्व की सर्वोच्च इमारत होने का गौरव प्राप्त 'एंपायर एस्टेट बिल्डिंग' देखने की मुझे उत्सुकता थी। वर्षों से स्मृति में रही है इसकी छवि, अत: इमारतों के जंगल में उसे ढूँढ़ निकालने में कोई कठिनाई नहीं हुई। इमारतों की गगनरेखा में एक स्थान पर खुली जगह की ओर संकेत कर अविनाश ने बताया कि 'वर्ल्ड ट्रेड सेंटर' की दोनों इमारतें ध्वस्त होने से पहले वहाँ थीं। थोड़ी देर के लिए कुछ वर्ष पूर्व देखा गया उनके ध्वंस किए जाने का भयानक मंजर आँखों के सामने घूम गया।

'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' किनारे से दूर एक द्वीप पर है। वहाँ मोटरबोट द्वारा जाना होगा। हम उसी की लाइन में लगे हैं। भारतीय बड़ी संख्या में दिखाई दे रहे हैं, भारत के लगभग हर प्रदेश के लोग, पर अधिकतर गुजराती और दक्षिण भारतीय। कुछ लोग अधिक शिक्षित नहीं लग रहे हैं। ये गाँव-कस्बों से आए हुए वे लोग हैं, जो यहाँ नौकरी अथवा व्यवसाय कर रहे अपने बच्चों के पास कुछ समय व्यतीत करने आते हैं। बच्चों से वृद्धों तक हर आयु वर्ग के लोग।

हम मोटरबोट में जाते हैं। ऊपर-नीचे दोनों मंजिलों पर खूब चहल-पहल, खूब शोरगुल है। विश्व के सभी भागों से आए हुए लोग हैं। मोटरबोट धीरे-धीरे चलने लगी है। मौसम साफ है। हम इस दृश्य का पूरा-पूरा आनंद उठा रहे हैं। दूर तक फैला अटलांटिक महासागर। एक ओर न्यूयॉर्क की गगनचुंबी अट्टालिकाएँ। दूसरी ओर दूर एक द्वीप के छोर पर 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' का धुँधला आकार। मोटरबोट पर मँडराते सफेद समुद्री परिंदे 'सीगल्स'। मध्य में अन्य द्वीप पर विशाल पुरातन इमारत। इस द्वीप का नाम एलिस द्वीप है। इस इमारत में संग्रहालय है। यहाँ अमेरिका के आरंभिक दशकों का इतिहास सँजोकर रखा गया है। जब यूरोप और दुनिया के तमाम अन्य देशों से बेहतर जीवन की तलाश में जहाजों में भर-भरकर अत्यंत ही दयनीय अवस्था में लाखों प्रवासी आए थे। उन्हें सबसे पहले इसी इमारत में आना होता था। यहाँ उनकी जाँच होती थी। विशेष रूप से स्वास्थ्य संबंधी जाँच बहुत कठोर होती थी।

'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' प्रतिमा फ्रांस के नागरिकों ने अमेरिका के नागरिकों को सन् १८८६ में भेंट की थी, जिसे अब विश्व भर में स्वतंत्रता

के प्रतीक रूप में पहचाना जाता है। १९२४ में इसे अमेरिका द्वारा राष्ट्रीय स्मारक का दरजा दिया गया। एलिस द्वीप वह प्रवेशद्वार था, जिससे १८९२ और १९५४ के मध्य लगभग १२० लाख आप्रवासी धर्म और विचारों की स्वतंत्रता व आजीविका की तलाश में यहाँ आए थे। एलिस द्वीप को उस घटना के इतिहास के संग्रहालय के रूप में १९९० में पर्यटकों के लिए खोला गया।

आप्रवासी जब यहाँ पहुँचते तो उनके शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य की कठोर जाँच की जाती थी। इस द्वीप पर जिस आप्रवासी की सबसे पहले जाँच की गई, वह एनी मूर नाम की एक पंद्रह वर्षीया आयरिश किशोरी थी। यहाँ इटली, रूस, हंगरी, ऑस्ट्रिया, जर्मनी, इंग्लैंड, आयरलैंड, स्वीडन, यूनान, स्कॉटलैंड, स्पेन, बेल्जियम, स्विट्जरलैंड, नॉर्वे, फिनलैंड कितने ही देशों से लोग आए। अमेरिका एक ऐसे नए देश के रूप में जन्म ले रहा था, जहाँ कोई भी नागरिक स्वतंत्र होने का अनुभव कर सकता था।

अमेरिका को ब्रिटिश साम्राज्यवादियों से अपने मुक्ति संघर्ष में फ्रांस से बहुत मदद मिली थी। इसलिए दोनों देशों की मित्रता एवं स्वतंत्रता के प्रतीक के रूप में फ्रांस द्वारा 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' अमेरिका को उपहार में दी गई।

सामान्यत: आप्रवासी परिवार में से पहले कोई एक व्यक्ति आता था, फिर कुछ समय बाद परिवार के अन्य सदस्यों को बुला लेता था। उन दिनों कई महीनों की समुद्री यात्रा जहाज में करके ये आप्रवासी अत्यंत भयानक, बहुत ही दीनहीन मानसिक व शारीरिक अवस्था में एलिस द्वीप पहुँचते थे। उसके बाद उन्हें स्वास्थ्य की जाँच और रजिस्ट्रेशन की कठोर प्रक्रिया से गुजरना पड़ता था।

संक्रामक बीमारियों संबंधी जाँच तो जहाज पर ही हो जाती थी। अन्य जाँचें द्वीप पर की जाती थीं। यदि कोई गंभीर बीमारी से ग्रस्त होता अथवा मानसिक स्थिति ऐसी होती कि जीवनयापन के लिए कोई कार्य करने में अक्षम होता तो अधिकारी उसे वापस अपने देश भेज देते थे। बारह वर्ष या अधिक उम्र के बालकों को अकेले ही भेज दिया जाता था। छोटे बच्चों के साथ माँ या पिता में से किसी एक को जाना पड़ता था। ऐसे समय के दृश्य बहुत ही कारुणिक होते थे। पहले यह तय करना कि बच्चे के साथ कौन अभिभावक जाएगा और फिर उनकी अश्रुपूर्ण विदाई। सभी जाँचें पूर्ण होने के बाद आप्रवासियों को द्वीप छोड़कर अमेरिका की मुख्य भूमि पर जाने दिया जाता था। ये ही वे लोग थे, जिनसे आज का अमेरिका बना है।

हम कभी मोटरबोट के अंदर जाते हैं, कभी अधिक अच्छी तरह महासागर का अवलोकन करने बाहर डेक पर आ जाते हैं। एलिस द्वीप को पार कर हम धीरे-धीरे 'लिबर्टी आइलैंड' की दिशा में बढ़ रहे हैं। निरभ्र आकाश, अच्छी धूप, हवा में हल्की ठंडक। श्वेत समुद्री परिंदे पाँतों में इधर-उधर उड़ रहे हैं। मोटरबोट के निकट आते हैं और ऊपर से उड़ते हुए दूर चले जाते हैं या तीर की तरह तेज़ी से डुबकी लगाकर जल में ओझल हो जाते हैं। दोपहर ढल रही है। मैनहट्टन और न्यूयॉर्क की अट्टालिकाएँ धुँधली होने लगी हैं। अटलांटिक महासागर पर भी धुंध छा रही है। जल शांत है। लहरें अलसाई सी हैं। तट से जब प्रस्थान किया था तो 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' छोटी सी हरी मोमबत्ती जैसा दिखाई दे रहा था, द्वीप के एक छोर पर। वह आकार में अब बड़ा और स्पष्ट हो गया है। लगता है, इस विशाल प्रतिमा ने आकाश को अपने आकार में काट दिया है। मोटरबोट की सारी निगाहें अब मानवीय स्वतंत्रता की इस प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति पर जम गई हैं।

अमेरिका को ब्रिटिश सामाज्यवादियों से मुक्ति की क्रांति में फ्रांस ने हथियार, जहाज, धन आदि से बहुत सहायता की थी। दो देशों में इस तरह जो मैत्री संबंध बना, वह एक दिन 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' में परिणत हुआ। यह प्रतिमा १५१ फुट ऊँची है। इसका भार २२५ टन है। लोहे से बनी प्रतिमा पर ताँबे का मुलम्मा चढ़ा है। प्रतिमा हरे रंग की है। केवल मशाल से निकल रही अग्नि की लपट का रंग नारंगी है। इसे एक युवा फ्रांसीसी मूर्तिकार फ्रेड्रिक बार्थोल्डी ने बनाया था। कुछ समय तक इसे पेरिस में प्रदर्शन हेतु रखा गया, फिर अलग-अलग हिस्सों में विभाजित कर १८८५ में जहाज द्वारा अमेरिका की लंबी यात्रा पर भेज दिया गया। संपूर्ण कार्य पर बहुत अधिक खर्च आनेवाला था। अत: तय किया गया कि आधार अमेरिका द्वारा निर्मित किया जाएगा। आधार की परिकल्पना अमेरिकी वास्तुकार रिचर्ड मारिस हंट की है। बलुआ पत्थर का बना यह आधार ८९ फुट ऊँचा है। २८ अक्तूबर, १८८६ को भव्य समारोह में प्रतिमा का अनावरण किया गया। उस दिन पूरे अमेरिका में छुट्टी का दिन घोषित किया गया। स्वतंत्रता की इस महान् प्रतिमा के निकट से गुजरते हुए मन में कुछ अंतर्विरोधी विचार आ रहे हैं। आज के अमेरिका ने तो अकसर विश्व के अन्य देशों के मामलों में अनावश्यक हस्तक्षेप किया है और अपने हितों के लिए उनकी स्वायत्तता पर प्रहार किया है। यह प्रतिमा फिर भी संपूर्ण विश्व को स्वतंत्रता, बंधुत्व और शांति का संदेश आनेवाली कई शताब्दियों तक देती रहेगी।

बीस-पच्चीस मिनट में प्रतिमावाले द्वीप तक पहुँच जाते हैं। द्वीप के अंदर भी प्रतिमा तक का रास्ता बहुत लंबा है, जिसे पैदल ही तय करना है। मुझे थकान महसूस हो रही है। सामने एक छोटा सा रेस्तराँ है। सब पर्यटक वहीं जा रहे हैं। आगे जाने से पहले शरीर में कुछ शक्ति और ताजगी भर लेने। रेस्तराँ में बहुत भीड़ है। हम कुछ काउंटरों पर पंक्ति में खड़े होकर भोज्य पदार्थ लेकर बाहर खुले स्थान में आ जाते हैं। अच्छी धूप और हरे-भरे वृक्ष। मेजें और कुरसियाँ। हम एक वृक्ष के नीचे बैठते हैं। वृक्षों की पत्तियों के पीछे दूर हरे रंग की 'स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी' झाँक रही है। यों तो यह सामान्य सा रेस्तराँ है पर विश्व की महानतम प्रतिमाओं में से एक की छाया में चायपान की यह अनुभूति रोमांचक है।

दोपहर ढलने लगी है और हमें प्रतिमा को अच्छी तरह देख लेना है। इससे पहले कि मोटरबोट की वापसी का समय हो जाए। यहाँ दुनिया के तमाम देशों के लोग विभिन्न वेशभूषाओं में हैं और जैसे एक बिखरे हुए जुलूस के रूप में जा रहे हैं। सभी की नजरें रास्ते पर नहीं, प्रतिमा पर हैं। उसकी ऊँचाई, भव्यता और कलात्मकता मन-मस्तिष्क पर छा गई है। प्रतिमा में जादुई सम्मोहन है। हम प्रतिमा के पिछले हिस्से की ओर हैं।

सामने तक जाने में कुछ समय लग जाएगा, क्योंकि लोग जगह-जगह रुकते हैं, फोटो लेते हैं, फिर आगे बढ़ते हैं। हम प्रतिमा के विस्तृत आधार को घेरकर बनाए गए रास्ते पर चल रहे हैं। लोग भिन्न-भिन्न कोणों व दूरियों से प्रतिमा की भव्यता का अवलोकन कर रहे हैं। हल्के नीले निरभ्र आकाश की पृष्ठभूमि में धूप में चमकती प्रतिमा अद्‌भुत प्रभाव डालती है। हम जबसे इस क्षेत्र में पहुँचे हैं, मैं दूसरी दिशा में न्यूयॉर्क की अट्‌टालिकाओं के बीच 'एंपायर एस्टेट' की इमारत को देखता और कैमरे में उसकी छवियाँ कैद करने को व्यग्र रहा। अब सामनेवाली प्रतिमा ने ध्यान वहाँ से हटा दिया है।

हम प्रतिमा के नीचे आ गए हैं। नीचे से प्रतिमा का शीश देख सकना मुश्किल है। इतनी ऊँची प्रतिमा है कि नीचे खड़े व्यक्ति का फोटो उसके शिरस्त्राण और मशाल के साथ लेना लगभग असंभव है। अविनाश घुटनों के बल बैठकर हमारा फोटो लेने का प्रयत्न कर रहा है। उसने अंततः ऐसा एक फोटो ले ही लिया। सभी पर्यटक ऐसा ही प्रयत्न कर रहे हैं। हमने प्रतिमा की परिक्रमा पूरी कर ली है। पहले प्रतिमा के अंदर लिफ्ट द्वारा शिरस्त्राण तक पर्यटकों को ले जाने की व्यवस्था थी। अब सुरक्षा कारणों से केवल आधार की ऊँचाई तक ही जाने दिया जाता है। हम जब तक टिकट खिड़की पर पहुँचते हैं, खिड़की आज के लिए बंद हो जाती है। ऊपर से समुद्र और न्यूयॉर्क-मैनहट्‌टन की अट्‌टालिकाओं का विहंगम दृश्य देखने से हम वंचित रह जाते हैं।

शाम ढलने लगी है। पैदल चल-चलकर थक चुके लोगों का दल तट की ओर लौट चला है। किनारे पर दो मोटरबोटें लगी हैं, न्यूयॉर्क और न्यूजर्सी की ओर जानेवाली। हम न्यूजर्सी वाली बोट से वापस लौट रहे हैं। संध्या के धुँधलके में अटलांटिक की वे हिलोरें, साथ उड़ते समुद्री परिंदे, न्यूयॉर्क की ऊँची, अधिकतर गहरे रंग के काँच के आवरण वाली इमारतें, एलिस द्वीप और हवा में बढ़ती जा रही ठंड। जैसे-जैसे आगे बढ़ते जा रहे हैं, विश्व की एक महानतम प्रतिमा को धीरे-धीरे छोटा होते हुए देख रहे हैं। थोड़ी ही देर में वह एक बार फिर हरी मोमबत्ती सी दिखाई देने लगेगी। ऐसी प्रतिमाएँ आकार में भले ही छोटी हो जाएँ, उनमें निहित भावनाएँ कभी छोटी नहीं हो सकतीं। मैं यह दृश्य जी भरकर देख लेना चाहता हूँ। इस जन्म में संभवतः यहाँ फिर कभी आना न हो।

डी.के. २-१६६/१८, दानिशकुंज
कोलार रोड, भोपाल-४६२०४२
दूरभाष : ०८९८९५६९०३६

देश की पहचान है हिंदी

● **माणिक विश्वकर्मा नवरंग**

देश आजाद होने के बावजूद मानसिकता पर गुलामी का असर साफ दिखाई पड़ता है। आज भी हमें अपने विचारों को संप्रेषित करने के लिए अंग्रेजी की बैसाखी का सहारा लेना पड़ता है। बनाने को तो राष्ट्रभाषा के अनुपालन हेतु अनेक नियम-कानून बना दिए गए हैं, परिपत्र जारी होते रहते हैं, 'हिंदी दिवस' के नाम पर खूब शंख फूँके जाते हैं, लेकिन नतीजा वही ढाक के तीन पात। जहाँ थे वहीं खड़े हैं और ये ही हालत रही तो भविष्य में भी वहीं खड़े रहेंगे। कारण, अंग्रेजी बोलना गर्व की बात एवं हिंदी बोलना पिछड़ेपन का प्रतीक माना जाता है। हिंदी के खाते में कला, साहित्य एवं संगीत के मुट्‌ठी भर लोग आते हैं, जो हिंदी का ढिंढोरा पीटते फिर रहे हैं। बाकी या तो अंग्रेजी के पिछलग्गू हैं या हिंदी की जड़ों में मट्‌ठा डालने का काम कर रहे हैं। हिंदी को प्रोत्साहित करने में न तो सरकार गंभीर है, न आम नागरिक, मुझे तो भय है कि यह भाषा धीरे-धीरे अल्पसंख्यक न हो जाए।

धर्म, जाति एवं क्षेत्रवाद ने भी इस भाषा के वर्चस्व पर प्रभाव डाला है। हिंदी को महिमा मंडित करनेवाले लेख, कविताएँ एवं कार्यक्रम कम ही देखने एवं पढ़ने को मिलते हैं। हिंदी की सेवा करनेवालों को प्रोत्साहित एवं पुरस्कृत करना तो दूर उन्हें हतोत्साहित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी जाती। एक कामचोर, आलसी एवं बदतमीज, कम पढ़ा-लिखा व्यक्ति अंग्रेजी बोलने के कारण बुद्धिमान समझा जाता है एवं एक पढ़ा-लिखा, सभ्य, समझदार, कर्मठ एवं मिलनसार व्यक्ति को हिंदी बोलने के कारण लोगों की हीन भावना का शिकार होना पड़ता है। ये है, अंग्रेजी के प्रति हमारे घिनौने लगाव का कड़ुवा उदाहरण।

क्वार्टर नं. ए.एस.१४,
पावरसिटी जमनीपाली
जमनीपाली, कोरबा (छत्तीसगढ़)
दूरभाष : ०९४२४१४१८७५

बेटा विवाह के गीतों में विविध भाव

● मृदुला सिन्हा

हमारे तीज-त्योहार और सभी संस्कार समारोह पर गाए जानेवाले गीत मनोरंजन के लिए नहीं होते हैं। इन गीतों में देवी-देवताओं, विशेष तिथियों, नदियों, नक्षत्रों से हमारे आत्मीय संबंध की व्याख्या तो रहती ही है, हमारे जीवन में प्रमुख संस्कारों पर गाए जानेवाले गीतों में उन संस्कारों के प्रभाव और पारिवारिक संबंधों के विवरण भी होते हैं। बिहार की विभिन्न लोकभाषाओं भोजपुरी, मैथिली और मगही में गाए जानेवाले गीतों में भाषा का ही अंतर होता है। भाव और विचार एक ही होते हैं। सोलह संस्कारों में से मात्र विवाह संस्कार में ही दो महत्त्वपूर्ण पात्र होते हैं—दूल्हा और दुलहिन। अन्य सभी संस्कार व्यक्तिगत होते हैं। विवाह संस्कार दो व्यक्तियों का। दोनों दो परिवारों से आते हैं। खान-पान, रहन-सहन, पहनावे में थोड़ी-बहुत भिन्नता लिये हुए दो परिवारों का मिलन होता है। दोनों परिवारों के भाव और भूमिकाएँ भी भिन्न-भिन्न होती हैं। लड़का ब्याह के बाद लड़की को साथ ले आता है। लड़की का मायका छूट जाता है। जाहिर है, दोनों के मनोभाव भिन्न-भिन्न होंगे। वहीं हमारी परंपरा के अनुसार लड़की अपने साथ दहेज भी लाती है। यह तो खोज का विषय है कि अपनी कन्या को पाल-पोसकर दान करनेवाले पिता का हाथ क्यों नीचा रहता है। उसे लड़के के परिवारवालों के आगे विशेष विनम्रता दिखानी पड़ती है।

दोनों की स्थिति भिन्नता के कारण इस अवसर पर वर और वधू के घरों में गाए जानेवाले गीतों में भी भावों की भिन्नताएँ होती हैं। विवाह तय हो जाने के बाद से ही लड़के के घर में रात्रि को विवाह गीत गाने का रिवाज रहा है। कुछ गीतों की व्याख्या के साथ हम लड़के के विवाह गीतों में लोगों के मनोभावों को ढूँढ़ने का प्रयास करते हैं—

'सिर शोभे कोढ़िल के मौरी
जटा पर नाच रहा मोर
रामचंद्र दुल्हा बने
जाई बैठे कौशल्या की गोद
रामचंद्र दुल्हा बने।'

(उसके चपकन, जूते, गहने सबका नाम लेकर गीत गाया जाता है।)

उपरोक्त गीत को सुनकर कई बातें सामने आती हैं। प्रथम तो यह कि दूल्हे को सजाने में लड़कावाले कोई कोर-कसर नहीं छोड़ते। दूल्हा सजता है और बरात भी सजती है। दूसरी बात कि हर दूल्हा राम ही होता है और उसकी माँ कौशल्या। इस प्रकार भिन्न-भिन्न भाषाओं में गाए

सुप्रसिद्ध कथाकार। कहानी और उपन्यासों के अलावा मृदुलाजी बदलते भारतीय परिवेश में महिलाओं के समक्ष उपस्थित सामाजिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर निरंतर लिखती रही हैं। अनेक रचनाएँ मराठी और अंग्रेजी में भी अनूदित। 'पाँचवाँ स्तंभ' मासिक का संपादन। संप्रति गोवा की राज्यपाल।

जानेवाले गीतों में भाव एक ही है और दूल्हा राम ही है। राम द्वारा धनुष-भंग का भी वर्णन मिलता है। इन गीतों में गाँव के सभी जातियों के लोगों के वर्णन भी—

'मलिया के दुअरा झड़ाझरी मेघ हे
भिंजलन रामचंद्र दुल्हा मौरी सहित हे
मौरी जे धरिहा दुलहवा ससुर दरवजवा हे
घुरमी-घुरमी दुलहवा करिया हा सलाम हे।'

इस गीत का भाव है कि वर माली के दरवाजे पर मौरी लाने गया है। मेघ के कारण भीग गया दूल्हा। माली उसे सीख दे रहा है, ''अब मौरी मत उतारना। इसे तो अपने ससुर के दरवाजे पर ही उतारना है। वहाँ सबको झुक-झुककर प्रणाम करना।'' इस प्रकार चंदन (ब्राह्मण), जोड़ा (दर्जी), जूता (मोची) देनेवाली जातियों के परिवार विवाह में जुड़े हुए हैं। वे सजावट के समान भी देते हैं और सीख भी। ग्रामीण परस्पर-निर्भरता गीतों में भी दिखाई जाती है।

अधिकांश गीतों में दूल्हे के सजावट और उनसे उसकी शोभा का ही वर्णन होता है। कई गीतों में ससुर घर लूट लाने का इरादा दरशाया गया है—

'हाथी साजू, घोड़ा साजू, साजू हे अपन बाबा
आहो बाबा साजी चलल बरिअतिया
ससुर धरवा लूटी अयबो हे।'
'घोड़ा चढ़ल अपन पापा मूँछ फहरावे हे
अइली बाबू दाहिन भेली, अब गढ़ लूटब हे।'

बारात की शोभा बल्लम, बरछी, तलवार और अन्य हथियार हुआ करते थे। गीतों में वर्णित भावों से तो यही पता चलता है कि दूल्हा के साथ-साथ जानेवालों (बराती) की मनसा लड़कीवालों को लूटने की भी होती थी। यह भी अभिप्राय निकाला जा सकता है कि रास्ते में कोई

विघ्न-बाधा से निपटने की तैयारी हो। इतना तो सत्य है कि बारात जानेवाले पुरुषों की मानसिकता कुछ ऐसी ही रहती है। अब तो बंदूक, पिस्तौल और रिवॉल्वर का प्रयोग होता है। एक गीत की बानगी है—

'जबहिं कौन दुल्हा मौरी सँभाले
अम्मा लोट खाँसू ना
कहाँ जाएगा मोर राज दुलरुआ मत जाहूना
कहाँ जाएगा मोर सावन बूँद रिमझिम दुलरुआ मत जाहुना।'

बेटा विवाह के गीतों में माँ की भूमिका विचित्र दरशाई गई है। वह बड़े अरमान से बेटे के विवाह की तैयारी करती है। सिंदूर, सिंधारा और बहू के लिए बिअहुति साड़ी खरीदती है। लेकिन कहीं-न-कहीं उसे बेटा के खो जाने की आशंका भी है। इसलिए हर माँ बेटा को विदा करती हुई रो पड़ती है। इस भाव को दरशाते हुए महिलाएँ एक नया गीत गाने लगी हैं—

'बन्ना-बन्ना मत कर सासु अब तो बन्ना मेरा (दुलहिन का) है।
जब तक बन्ना कॉलेज जाता, तब तक बन्ना तेरा था
अब तो बन्ना 'पैकेज' कमाता, अब तो बन्ना मेरा है।'

दूल्हे को सजा-धजाकर विदा करते समय महिलाएँ बड़े वियोग से गाने लगती थीं—

'बड़ा रे जतन हम पोसलो कौन दुल्हा
आगे माई सेहो उड़ि गेल आनंद वन (ससुराल)
बसरह मोरा सुन्न भेल।'

माँ के भाव हैं। उसने बड़े जतन से अपने बेटे को पाला है। अब वह आनंद वन (ससुराल) चला गया है।

एक और बानगी है—

'जाओ-जाओ रे बन्ना ससुराल रे बन्ना
तुम दुलहिन ले आना होशियार रे बन्ना।'

बेटे को विवाह के लिए विदा करते समय उपरोक्त गीत भी गाए जाते हैं। इन विवाह गीतों में समय-समय पर राष्ट्रीय या सामाजिक समस्याओं के समावेश भी होते रहे हैं। साठ वर्ष पूर्व गाए जानेवाले एक गीत की पंक्तियाँ हैं—

'बाबा बराती साज रहा बबुए के कमरे में
दादी ने झंडा ले लिया स्वराज पाने को।'

इन विवाह गीतों के गहरे अर्थ होते हैं। अभी भी गाँवों में गाए जाते हैं। पढ़ने-लिखनेवाली लड़कियों को नहीं सिखाए जाते ये गीत। अब बरात के साथ महिलाएँ भी जाती हैं। वे भी सड़कों पर नाचती हैं। कितनी गिरावट आई है अपनी परंपराओं में। इन छोटी-छोटी बातों पर विचार नहीं होता। विवाह के बंधन ढीले ही रह जाते हैं, शीघ्र खुलने लगते हैं। दुःखी हो हम भी अचंभित है, पर हमने यह विचार नहीं किया कि होना क्या चाहिए। यह विवाह गीत संस्कार भी देते थे।

पी.टी. ६२/२०, कालकाजी,
दिल्ली-११००१९

सुधी पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. १११०७३४३९३ अथवा CBIN ०२८०२९७ में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- पत्रिका न मिलने पर १५ से २० तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया कार्यालय दिवस में २ से ५ बजे तक फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा **sahityaamrit@gmail.com** पर इ-मेल करें।

बाल-संसार

चल्लो···मुझे औड़ नईं खेलना!

● मंजुरानी जैन

नॉटी मेरी पोती है। उसका नाम नॉटी क्यों पड़ा, यह तो आप उसकी बातें पढ़कर ही जान पाएँगे। जब से वह इस घर में आई है, पहले दिन से ही उसकी हरकतों में शैतानियाँ-ही-शैतानियाँ नजर आती रही हैं। रोना शुरू हुआ तो घर में हड़कंप मच गया, 'मुन्नी को भूख लगी होगी', उसकी मम्मी दूध लेने के लिए भागती है तो कभी लगता, उसे प्यास लगी होगी। पर पास जाकर उसको देखते तो खिल-खिलाकर हँसती नजर आती। दूध की बोतल मुँह से लगाओ तो लेने को तैयार न हो। ऐसे ही आँख-मिचौनी का खेल खेलती रहती, पता नहीं कहाँ से सीखकर आई थी वह यह सब। हम उसकी हरकतें देखकर हँसने लगते तो वह दुगुने जोर से हँसने लगती थी। कभी-कभी तो हँसते-हँसते उसे खाँसी आ जाती।

नौ महीने की होते-होते उसके चेहरे पर तरह-तरह के भाव आते-जाते रहते थे और बोलने का प्रयास करने लगी थी, घुटरुअन तेजी से भागने लगती और छिपकर दूर से देखती, और हम दिख जाएँ तो ताली बजा-बजाकर, गरदन इधर-उधर करके हँसने लगती। इसी से उसका घर का नाम नॉटी पड़ गया।

तीन साल की होते-होते उसे नर्सरी में भेजना शुरू किया। ग्यारह बजते ही स्कूल जाने के लिए अपने कपड़े माँगने लगती है। दादाजी का नाम उसने 'मस्तीखोर' रख दिया है। उसे उनके साथ खेलना, भाग-दौड़ करना बहुत अच्छा लगता है। वही उसे कार से स्कूल लेकर जाते हैं और वही वापस लेकर भी आते हैं। सारे रास्ते अपनी हथेली को गोल करके उसे फोन में तब्दील कर देती है। और कभी दादी से बातें करने लगती है तो कभी मम्मी से!

'दादी, पता है? दादाजी रास्ता भूल गए। मुझे स्कूल जाने में देर हो गई। इन्को कुछ नई मालूम।'

'मम्मी, कल आप छोड़ना मुझे। देखो, हँस रए हैं। कुच चमतता नई इनको।'

दादाजी का रास्ता ऐसे कट जाता जैसे वह घर से अभी-अभी चले हों। वे चार बजे उसे वापस लेने जाते तो दूर से ही उँगली दिखा-दिखाकर चिल्ला उठती है।

'आ गए, ओ···मस्तीखोर···हा···हा···हा।' और दादाजी की उँगली पकड़कर सबको 'टा···टा···बाइ···बाइ···' करते हुए कूदती-फाँदती चल देती है पार्किंग की तरफ।

उसका एक काल्पनिक मित्र भी है—राहुल! जिससे वह जब तब

सुपरिचित रचनाकार। पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित एवं दिल्ली पाठ्यक्रम के रैपिड रीडर में सम्मिलित। संप्रति कई वर्षों तक मुंबई विश्वविद्यालय में चीफ लाइब्रेरियन के पद पर कार्य।

बातें करती रहती है और जब उससे बातें करती है तो कभी उसे डाँटती है, कभी ऑर्डर देती है, तो कभी अपनी मुश्किलों के बारे में बताती है। सारी मन की बातें···।

शाम को उसे गार्डन में ले जाने का काम मेरा है। वहाँ बच्चों के नए-नए रूप देखकर मैं हैरान रह जाती हूँ। ये इस युग के बच्चे हैं। गार्डन में जाने के लिए जितनी आतुर नॉटी रहती है, उससे कहीं अधिक उसकी दादी, यानी मैं रहती हूँ। वहाँ उसने बहुत सारे बच्चों से दोस्ती कर ली है और सब मिलकर ढेर सी बातें करते हैं। एक अलग दुनिया की बातें!

दो-तीन हफ्तों से तो मैं ही उसे लेकर जाती हूँ। पहली बार जब मैं उसे लिए-दिए वहाँ पहुँची तो कुछ छोटे तो कुछ उसकी उम्र से बड़े लड़के अपनी-अपनी माँ या आया या दादा के साथ वहाँ मौजूद थे।

वे अपने खेल में मस्त भाग-दौड़ रहे थे, कोई झूला झूल रहा था तो कोई रपटवाँ झूले पर हाथों को हवा में लहराकर रपट-रपटकर ऊपर से नीचे गार्डन की रेतीली मिट्टी में धम्म से गिर जाता है और फिर वहाँ से उठकर तीर की तरह भाग लेता है, सीढ़ियों की तरफ दूसरा-तीसरा राउंड लेने के लिए। नॉटी कुछ देर तक खड़ी यह सब देखती रही, फिर उनके पास जाकर खड़ी हो गई।

''हाइ···'' उसने अपना हाथ एक लड़के की तरफ बढ़ाया और पूछा, ''क्या नाम है टुमारा?''

''सुजय ! और तेरा?'' उसने पलटकर पूछा।

''टान्या (तान्या)!'' दोनों मुसकराए, हाथ मिलाया और बन गए दोस्त।

उनमें से कुछ उसकी नर्सरी के बच्चे भी थे। तिन्नी, अपूर्व, पम्मी और गोपाल! बस फिर सब बच्चे अपने-अपने खेल में लग गए। कुछ तो भाग-दौड़ करते-करते पसीने में तर-बतर हो गए। उनके मुँह पर लाली उभर आई थी। पर जैसे थकान का नामोनिशान नहीं। खेले जा रहे थे।

उनमें से एक बच्चा बिल्कुल चुपचाप और शांत बैठा था। वह था

अपूर्व। लगातार मेरी तरफ देख रहा था, मैं उसकी तरफ देखकर मुसकराई और उसके गालों पर हाथ फेरकर बोली, ''तुम भी खेलो, बेटा!''

जैसे वह खुल गया। बोला, ''आंटी, आपके बाल इतने छोटे क्यों हैं?''

मैं सकपकाई और बोली, ''पता है बेटा, नाई जब मेरे बाल काट रहा था तो वह कान में लगाकर म्यूजिक सुन रहा था। मैंने उससे कहा बस, और मत काटो और मत काटो! मुझे अपने बाल इतने छोटे नहीं कराने। पर उसे सुनाई नहीं दिया और उसने मेरे बाल इतने छोटे कर दिए।''

''तो आपने उसे मारा नई?'' उसका दूसरा प्रश्न तैयार था।

''नहीं बेटा, ऐसा करती तो बाजार में उसके बराबर वाली दुकान के लोग मुझे ज्यादा मारने लगते। फिर मैं क्या करती?'' मैंने भी मजे लेते हुए उससे कहा।

''अच्छा?'' वह चुप हो गया।

''मैं बी तो गई थी न आपके साथ, मैंने तो नई देखा उसका म्यूजिक।'' अचानक नॉटी बीच में टपक पड़ी। वह बराबर में ही सुजय के साथ घर-घर खेल रही थी, उसका ध्यान शायद मेरी और अपूर्व की बातों की तरफ भी था।

उसे सुजय के साथ अपने खेल में मशगूल मैं देख रही थी। मेरे दिमाग में तुरंत उसका अक्षर कौंध उठा, ''तुमको क्या मालूम? तुम तो उधर अपने दोस्त राहुल से बात करने में साथ मस्त थीं ना'' मैंने एक दाँव और फेंका, ''जैसे अब सुजय के साथ घर-घर खेल रही हो।''

नॉटी ने बड़ी दादियों की तरह अपने माथे पर अपनी छोटी सी हथेली मारी और शरमाकर टेढ़ी गरदन करके हँस पड़ी, ''अड़े!''

जान बची सो लाखों पाए। उस छोटे से बच्चे के सामने झूठी बनने से बच जो गई थी मैं।

''हाँ, मैं खाना बनाने की तैयाड़ी कड़ ड़ई हूँ। अभी मस्ती खोड़ आएगा न खाना खाने!'' उसने मुझे सूचना देते हुए कहा।

''मस्तीखोर कौन?''

आँखे घुमाकर उसने पूछा, ''तुम्हें पता नई··· ?''

''नहीं, कौन?'' मैंने अनजान बनते हुए जवाब दिया।

''हाँ, पता है···पता है···झूठ···झूठ···।'' उँगली घुमाकर बोली, ''वही···! आपका पति!''

''हे भगवान्! दादाजी नहीं बोल सकती?'' मैं जैसे आसमान से नीचे गिरी।

''नई, वो मस्ती खोड़ ई तो हैं! हमेशा छुप जाते हैं। मैं ढूँढ़ती ड़हती हूँ।'' उसने गाल फुलाकर कहा।

''अच्छा, देख, सुजय भाजी ले आया है। चल, तू घर-घर खेल अपना!'' मैंने उसका ध्यान बँटाया।

वह गृहिणी की भूमिका में आ गई थी। उसने सुजय को डाँटते हुए कहा, ''ओ···हो···इतनी देड़ कैसे कड़ दी? कितनी देड़ हो रई है। अब खाना पकाना भी बाकी है। चलो, गैस ऑन कड़के पतीला तो लगा दो!''

मैं यह सब देखकर अपनी हँसी दबा रही थी और अपूर्व अब भी मेरी ओर उसी प्रकार ध्यान से देखे जा रहा था। मैंने उसकी ओर प्रश्न भरी निगाहों से देखा। उसने फिर से एक और सवाल कर डाला—

''अच्छा आंटी, आपके बाल इतने सफेद क्यों हैं?''

'लो हो गई छुट्टी!' मैं बुदबुदाई। सवाल का जवाब देना जरूरी था।

''अरे बेटा, मैं जब पार्लर में गई तो पार्लर वाले ने मेरे बालों में इतना सारा टैलकम-पावडर डाल दिया। इतना भर दिया कि मैं उसे निकालते-निकालते थक गई, पर वह नहीं निकला। बालों में सफेदी बनी रह गई।''

इस बार चौंकने की बारी उसकी थी, ''ऐसा भी होता है, आंटी?''

उतने में करीब छह साल का लड़का गोपाल, जो यह वार्त्तालाप सुन रहा था, बोला, ''अरे नहीं यार, जब लोग दादा-दादी और नाना-नानी बन जाते हैं न, तो उन सबके बाल सफेद हो जाते हैं। मेरे दादा-दादी के बाल भी सफेद हैं, बुड्ढे हैं न!'' उसने अपना ज्ञान बघारा।

मैं और मेरे साथ बैठे अन्य लोग, सब इन बातों का बड़ा आनंद ले रहे थे।

इतने में सुजय की मम्मी आ गई। बोली, ''बेटा, अब घर जाना है। चलो, मुझे डिनर की तैयारी करनी है।'' उसने अपने कपड़ों पर लगी मिट्टी को झाड़ा और माँ का हाथ पकड़ लिया। चलते-चलते नॉटी से बोला, ''कल से मैं तेरा काम करने बाजार नहीं जाऊँगा। अपने घर पर एक नौकर रख लेना।''

''बैठा है न यह, कल इसे नौकड़ बना लेंगे!'' नॉटी ने अपूर्व की तरफ हाथ दिखाते हुए कहा। उसने उस बात का हल भी आसानी से ढूँढ़ लिया था।

''मैं और नौकर? हँह···बड़ी आई, 'नौकर' तो कहना नहीं आता। नौकर बनाएगी मुझे, हँ!'' इतना भोला भी नहीं था वह। वह तो एक नन्हा-मुन्ना दार्शनिक था। काम के सवाल करता था।

अब उसे एक प्रश्न और सूझ गया था, ''पर आंटी, यह नॉटी भी तो कितनी मोटी हो गई है।''

''तेड़ा नई खाती, कड़के!'' वह बुरी तरह चिढ़ गई थी।

''क्या बोली? सारे दिन घर बनाती रहती है, खाना पकाती रहती है। अभी एक लात मार दूँ तो सारा घर मिट्टी में मिल जाएगा, फिर रोएगी।'' कम वह भी नहीं था। अब यह दार्शनिक लड़ाकू-अवतार में आ गया था।

''मैंने तुझसे कुछ कहा ? हम तो खेल ई में तो नोकड़ बना ड़ए हैं।'' नॉटी ने उसे शांत करने में अपनी भलाई समझी।

''चल, चल, बड़ी आई।'' कहकर वह पास खड़ी अपनी आया के पास पहुँचा और उसका हाथ पकड़कर गार्डन के गेट की ओर चल दिया।

पीछे से नॉटी ने जीभ बाहर निकालकर, आँखें मिचकाकर, अपने कान के दोनों ओर अपने अँगूठे टिकाकर चारों उँगलियों को हिलाया, ''हूँ··· !''

''सुजय चला गया। चल, अब हम भी घर चलते हैं।'' मैंने नॉटी की उँगली पकड़कर कहा।

''तो क्या हुआ। मैं अभी यईं खेलूँगी।'' नॉटी गुस्से में थी, उसने जिद पकड़ ली।

''पर सुजय तो अपनी मम्मी के साथ चला गया न!'' मैंने उसे मनाते हुए कहा।

''तो क्या हुआ ? आप जाओ! मैं दूसरा कोई ढूँढ़ लूँगी।'' उसने मुझे लगभग धकेलते हुए कहा और उसका हाथ भी मुझ पर चल गया।

''अच्छा!'' मैं हतप्रभ! कुछ क्षण मैं चुपचाप बैठी रह गई। पर फिर उठकर बोली, ''तो फिर, दादी भी दूसरी ढूँढ़ लेना, मैं तो चली!''

उसने मेरी बात पर कोई कान नहीं दिया। वह अपने हथेली के फोन के साथ-साथ थोड़ा आगे सरक गई, जैसे घर के दरवाजे के बाहर निकलकर फोन पर चलते-चलते बात कर रही हो—

''हाँ, ड़ाहुल! देख न, मैं गाड़डन में अकेली हूँ, मुझे अभी यहीं··· ।''

एक सेकेंड के बाद, ''हाँ, दादी आई थी साथ!'' उसने उसकी बात का जवाब दिया।

उधर जैसे राहुल उससे कुछ पूछ रहा हो और वह ध्यान से सुन रही थी, मैं मौका पाकर तेजी से एक बड़े से पेड़ के पीछे दुबक गई। वह फिर बोली, ''पड़, उन्हें तो घड़ जाना है।''

इतने में उसका ध्यान मेरी सीट पर गया। वह खाली थी।

''अड़े, वो तो चली गईं। अब ?'' उसकी आवाज में कँपकँपी थी।

उधर राहुल शायद उसे समझा रहा था, 'नहीं, वो तुझे छोड़कर कहीं नई जा सकती।'

''हाँ, वो मुझे बहोत प्याड़ कड़ती हैं।'' वह रोवाँसी सी हो आई थी।

उसने क्या कहा, वह नॉटी को ही पता था। वह बता रही थी, ''पड़, इधड़ नई हैं ना वो, क्या कड़ूँ ?''

राहुल ने उसे सलाह दी होगी, क्योंकि वह बोल रही थी, ''अच्छा, ढूँढ़ती हूँ उन्हें।''

''दा···दी, दा···दी···ई···ई··· !'' वह आवाज दे रही थी। वहाँ बैठे कुछ लोगों को पता था कि किनारे लगे एक विशाल वृक्ष के पीछे से उसकी दादी सब देख रही है। वे एक-दूसरे को देखकर मुसकरा रहे थे।

उसका मुँह बुरी तरह लाल हो गया था, ''नई, आप इधड़ ई हो, तंग मत कड़ो ना मुझे।''

वह झूलों के आस-पास, नीचे सब जगह मुझे ढूँढ़ रही थी। उसके मित्र राहुल ने उसके दिमाग में भर दिया था कि मैं उसे छोड़कर कहीं नहीं जा सकती। वह यहाँ से वहाँ मुझे बेतहाशा खोजने में लगी थी। अब वह निराश होकर एक जगह खड़ी हो गई और उसकी आँखों से पानी बहने लगा। अपनी हथेली को फोन में तब्दील करके वह उसे कान से लगाकर राहुल से बात करने को ही थी और मैं सहसा पेड़ के पीछे से निकलकर उसके पीछे जा खड़ी हुई।

फोन कान से लगाकर, राहुल से बात करने के लिए जैसे ही वह पीछे घूमी, मैं उसे खड़ी मिल गई। उसने ऊपर देखा। वह मुझसे बुरी तरह लिपट गई और साड़ी में मुँह दिए कुछ देर ऐसे ही खड़ी रही। मेरा हाथ उसके सिर को सहला रहा था।

''सॉड़ी दादी! चल्लो, मुझे औड़ नईं खेलना!''

मैंने उसे गोद में उठा लिया और उसने अपना सिर मेरे कंधे पर रख दिया। और मैं चल पड़ी।

१०, नरूला बिल्डिंग,
पहला माला, २१वीं
रोड, चेंबूर, मुंबई-४०००७१

इस अंक की चित्रकार

नलिनी मिश्र

सुपरिचित लेखिका एवं चित्रकार। लखनऊ विश्वविद्यालय से 'डिप्लोमा इन आर्ट' मास्टर ट्रेनिंग परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण। 'उमंग', 'कल्प-वृक्ष', 'गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर', 'चिंतक', 'छवि', 'छोटा परिवार-सुखी परिवार', 'पश्चात्ताप', 'प्रयास', 'बापू की दिनचर्या', 'बापू की सेवा में—बा', 'भारत के अमर कलाकार', 'भारत-निर्माता', 'लक्ष्य की ओर', 'श्रीगणेशाय नमः', 'सुभाष की क्रांति', 'सृजक' आदि कला-कृतियाँ, अनेक आवरण-चित्र और अनगिनत रेखांकन प्रकाशित।

एम-१/६३, सेक्टर-बी,
अलीगंज, लखनऊ-२२६०२४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९८४७६२६५८

वर्ग पहेली (१३३)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ दिसंबर, २०१६ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते नवंबर २०१६ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१३१) का शुद्ध हल

१कि	२फा	य	३त	■	४अ	५पा	६व	न
७स	फा	■	८र	वि	नं	द	न	■
खे	■	९अ	ब	■	त	■	१०वा	११ज
१२त	र्क	वि	त	र्क	■	१३न	सी	बा
की	■	१४च	र	■	१५त	ट	■	न
१६मू	१७स	ल	■	१८रा	य	सा	ह	ब
१९ली	क	■	२०ट	■	२१क	र	■	द
■	२२प	२३रो	प	का	र	■	२४खी	ल
२५ह	क	ब	क	■	२६ना	सी	र	ना

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री प्रभात कुमार गुप्ता**
२३, सावित्री टावर्स
सेक्टर-९१, मोहाली-१४०३०८
(पंजाब)

२. **श्री शालिग्राम एस. तिवारी**
कांद्री मेंशन, ४०१-सी,
रूम नं. १-ए, वीर सावरकर मार्ग,
प्रभा देवी
मुंबई-४०००२५ (महा.)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग-पहेली १३१ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री ब्रह्मानंद 'खिच्ची', विजयपाल सेहलंगिया (महेंद्रगढ़), रुक्मणी संगल (पटियाला), नीरजा शर्मा (अहमदाबाद), छवि सहल, सुभाष शर्मा (दिल्ली), शिवशरण दुबे (कटनी), फकीरचंद ढुल (कैथल), भूप सिंह (हरिद्वार), श्रीप्रकाश राणे (नागपुर), रवि पारीक (अजमेर), सुखवीर सिंह चैतन्य (बिलासपुर)।

बाएँ से दाएँ—

१. भयावह स्थिति से गुजरने के बाद चित्त का स्थिर होना (२,१,२,२)
६. वृद्ध (३)
७. कागज का टुकड़ा (३)
९. शोक (२)
१०. रेखा (३)
१२. द्वार (२)
१३. सजावट (२)
१४. फरयादी (२)
१६. उपद्रव (३)
१७. सहायता (३)
१८. व (२)
२०. कुछ नहीं (२)
२१. लपलपाने का भाव (२)
२३. आक्रमण (३)
२५. पक्षी (२)
२६. नरक में रहनेवाला प्राणी (३)
२८. जाकर लौटना (१,२)
२९. पल्ला थामना (३,४)

ऊपर से नीचे—

१. अत्याचारी (३)
२. झुका हुआ (२)
३. सीता (३)
४. 'तुम' के स्थान पर आदरसूचक संबोधन (२)
५. एक प्रसिद्ध हरिभक्त और कलहप्रिय देवर्षि (३)
६. बेइज्जती करना (३,४)
८. सौंदर्य चौगुना होना (२,२,३)
१०. मान-मर्यादा (२)
११. कण (२)
१३. सदा (३)
१५. एक कीड़ा, जो लकड़ी आदि खा जाता है (३)
१९. गहराई की सीमा (२)
२०. मौसी (२)
२२. स्त्रियों को घर में ही रखने का नियम (३)
२४. राजा (३)
२५. धनागार (३)
२७. अल्प (२)
२८. टेक (२)

वर्ग पहेली (१३१) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१३३)

■	१	२		३		४	५	■
६			■		■	७		८
९		■	१०		११	■	१२	
	■	१३		■	१४	१५	■	
१६			■	■	■	१७		
	■	१८	१९		२०		■	
२१	२२	■	२३	२४		■	२५	
२६		२७	■		■	२८		
■	२९							■

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का स्वाधीनता विशेषांक वाकई प्रशंसनीय व संग्रहणीय है। इसमें वर्णित सभी रचनाएँ रोचक, खोजपूर्ण, उत्प्रेरक व ज्ञानवर्धक हैं। देश की आजादी के लिए कितनी कुरबानियाँ दी गईं, कितने कष्ट झेले गए, आजादी को कितने त्याग करने के बाद हासिल किया गया, इसकी संपूर्ण जानकारी संगृहीत है। प्रकाश मनु का 'वे उदार हृदय अंग्रेज, भारत जिनका घर बन गया' एवं श्रीकृष्ण सरल की रचनाओं के साथ संपूर्ण भारत के हर क्षेत्र, राज्य के आंदोलनों का दिग्दर्शन मानो एक ही साथ मिल गया। सारी रचनाओं को पढ़ने के बाद एक बार वे दिन, वे घटनाएँ, वे लोग व परिस्थितियाँ, वे अमानुषिक प्रताड़न की पीड़ा जैसे सब महसूस होने लगा। कुछ क्षण लगा जैसे उसे जिया, भोगा; उन दिनों को याद कर आज के परिवेश, परिस्थिति को देखते हुए अंग्रेजों के बचे हुए अवशेष की भावनात्मक पीड़ा कभी-कभी महसूस होती है। उन कुरबानियों के मूल्यांकन और व्यावहारिकता में बड़ा फासला कष्टदायक प्रतीत होता है, पीड़ा होती है। सुखद सामग्री संप्रेषण के लिए सभी को एक बार पुनः धन्यवाद।

—नंद किशोर तिवारी, वाराणसी

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक मिला। इसमें राष्ट्रभाषा हिंदी (राजभाषा हिंदी) पर कई आलेख हैं। वर्तमान में राजभाषा हिंदी की जो स्थिति है, वह चिंतनीय है। सरकारी स्तर पर हिंदी के विकास के लिए जो काम होना चाहिए, वह नहीं हो पाया है। लेखकों ने अपने आलेखों में इस पर चिंता जाहिर की है और हिंदी के विकास की वकालत भी की है। प्रकाशित व्यंग्य में मारक क्षमता का अभाव है। पत्रिका में प्रकाशित अन्य रचनाएँ सरल और रोचक हैं। यह जानकर दुःख हुआ कि आप अभी गंभीर बीमारी से जूझ रहे हैं। ईश्वर से कामना है कि पुनः स्वस्थ होकर हमारे बीच आएँ।

—श्रीकांत व्यास, पटना

हिंदी की विशिष्ट सम्मानित पत्रिका 'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक प्राप्त हुआ। राजभाषा-राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति जो उद्‌गार संपादकीय में हैं, वे अद्‌भुत चेतनापरक, उत्प्रेरक एवं यथार्थाभिव्यक्ति से समन्वित संदेशपरक हैं। आचार्य विद्यानिवास मिश्रजी का प्रतिस्मृति स्वरूप लेख 'हिंदीमय जीवन' प्रख्यात साहित्यकार चिंतक श्रीनारायण चतुर्वेदीजी के हिंदीमय व्यक्तित्व का विराट्‌ता का दर्शन कराता है। मेरा मानना है कि आज हिंदी वाले ही हिंदी की उपेक्षा कर रहे हैं, वरना हिंदी तो माँ की तरह महान् है। इसी प्रसंग में बद्री नारायण तिवारी का आलेख भी आशा की नई किरण से आश्वस्त करता है। डॉ. हरदयाल के प्रति हेमंत कुकरेती का स्मरण लेख एक प्रकार से श्रद्धांजलि स्वरूप है। उनकी रचनाओं में जीवनानुभवों की गहराई, सामयिकता की ताजगी एवं ऊर्जा के अणुकण हैं। 'कम्मो', 'सूरज' और 'शादीनामा' कहानियाँ-कथ्य-कथन-क्राफ्ट में कसी-पठनीय हैं। अश्विनी कुमार दुबे के व्यंग्य-लेख में क्षोभ-रोष-निंदा और भर्त्सना-भाव के बारीक मिश्रण हैं। सुश्री कुमुद शर्मा का लेख 'छायावादी कविता का प्रस्थान बिंदु 'इंदु'' निरापद नहीं कहा जा सकता। कृपाशंकर शर्मा 'अचूक' के दोहे सतसय्या-से गागर में सागर से गहन भाव संपन्न संयोजक हैं। श्री प्रेमपाल शर्मा का लेख 'अथ श्रीगोवर्धन तीर्थ कथा' पौराणिक प्रसंगों से परिपूर्ण प्रभावपरक पुनः-पुनः पठनीय है। मिथ-कथा की दृष्टि से जो सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्ष है, उसे विद्वान् लेखक ने अपनी दृष्टि और विवेचन क्षमता से तराशकर प्रस्तुत किया है, जो अनुसंधान मूलक-अध्ययन-वृत्ति से पूर्ण है।

—डॉ. राहुल, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का अगस्त अंक 'स्वाधीनता विशेषांक' सराहनीय तथा संग्रहणीय है। संपादक महोदय स्वस्थ रहें, यही प्रार्थना परमपिता परमात्मा से की जा रही है; उनकी कलम से उकेरे गए विचार व विश्लेषण मनन योग्य होते हैं। कई जानकारियाँ विस्तार से दी जा रही हैं। अबकी बार सिल-सिलेवार लगभग पूरे प्रांतों में की गई आजादी की लड़ाई एवं उन शहीदों तथा स्वतंत्रता सेनानियों का स्मरण किया गया, अच्छा लगा। पं. माधवराव सप्रेजी की लेखनी की साख भारत की एक राष्ट्रीयता से स्पष्ट हुआ कि विविधता में एकता ही हमारी विशेषता रही है। वंदेमातरम् का संपूर्ण गीत भावार्थ सहित प्रस्तुत किया गया, अच्छा लगा। श्री प्रकाश मनु के लेख 'वे उदार हृदय अंग्रेज, भारत जिनका घर बन गया' पढ़कर आश्चर्य लगा कि आज की पीढ़ी बैठे-बिठाए अंग्रेज बनने के लिए विदेश जाने लगी है। अंततोगत्वा हर लेख एक से बढ़कर एक, सारगर्भित जानकारी से भरपूर है।

—जमालपुरकर गंगाधर, हैदराबाद

'साहित्य-अमृत' का स्वाधीनता विशेषांक प्राप्त हुआ। स्वाधीनता-संग्राम की अछूती बलिदान गाथाओं, क्षेत्रीय योगदानों, प्रेरक प्रसंगों एवं इतिहास की आँखें खोलनेवाले शोधपरक आलेखों से सुसज्जित यह विशेषांक अत्यंत संग्रहणीय बन पड़ा है। आशा है कि इतिहासविदों एवं मर्मज्ञ शोधार्थियों की निर्मल दृष्टि पाकर अब देश के इतिहास के अनेकों धुंध भरे कक्ष नए आलोक से आलोकित हो उठेंगे और वह अपने वास्तविक स्वरूप को ग्रहण करेगा तथा जन-गण-मन को पुलकित करेगा।

—श्रीकृष्ण कुमार त्रिवेदी, फतेहपुर (उ.प्र.)

'साहित्य-अमृत' का सितंबर अंक प्राप्त हुआ। श्री हेमंत कुकेरती का संपादकीय हमें पसंद आया। आज हिंदी पिछड़ी भाषा बन गई है। 'हिंदीमय जीवन', 'राजभाषा की लड़ाई बिना खड्‌ग बिना ढाल', 'लोकगीतों में पति-पत्नी प्रेम' लेख हमें रुचिकर लगे। कहानी 'चाचाजी', 'वह अजनबी' तथा यात्रा संस्मरण 'अथ श्रीगोवर्धन तीर्थ-कथा', व्यंग्य 'सास की अटकी साँस' तथा साहित्य गतिविधियाँ खूब अच्छी लगीं।

—बद्रीप्रसाद वर्मा अनजान, गोरखपुर (उ.प्र.)

खड़े हो गए रोंगटे, पढ़ा 'साहित्य-अमृत' अशेष,
अगस्त अंक आजादी का, सुसज्जित सत्य संदेश।
'आह्वान' करता साहित्य, सींचों अमृतसम आजादी,
बलिदानों के यज्ञों पर, लिपी-पुती है यह शहजादी।
उठो-उठो, ऐ देशवासियो, आजादी का अर्थ समझ लो,

दुनिया आगे बढ़ी जा रही, राज उन्नति का ढब समझ लो।
करें प्रतिज्ञा भेदभाव से दूर, भारतजन जाग उठे,
'स्वतंत्रता' की रक्षा की सच्ची सम्मान कृति गढ़े॥

—रजनी सिंह, डिबाई (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक प्राप्त हुआ। जानकर चिंता हुई कि संपादक श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी दुबारा अस्वस्थ हो गए। ईश्वर उन्हें शीघ्र स्वस्थ करें। स्वाधीनता विशेषांक बहुत ही विशेष है, जिसमें भारत में जहाँ-जहाँ स्वतंत्रता आंदोलन हुए, वहाँ का इतिहास दिया गया। श्री प्रकाश मनु का आलेख 'वे उदार हृदय अंग्रेज, भारत जिनका घर बन गया', श्री मदन लाल का 'काकोरी कांड : ऐतिहासिक मोड़ सूचक घटना' और श्री राजेंद्र राजा का आलेख 'अदम्य साहसी क्रांतिकारी महिला : दुर्गा भाभी' आदि लेख बहुत अच्छे हैं। यह विशेषांक एक अच्छी पुस्तक है, जो यादगार रहेगी। ***—विनोद शंकर गुप्त, हिसार***

'साहित्य अमृत' के जून अंक में श्री रंजन सिंह का यात्रा संस्मरण 'इधर बुडा-उधर पेस्ट' पढ़कर वहाँ के दृश्य आँखों के सामने तैर गए। जिस आत्मीय भाव से, रोचक शैली में यह यात्रा संस्मरण लिखा गया है, वह अंत तक मन को बाँधे रहा। यह संस्मरण इसलिए भी विशिष्ट है कि इसमें उन्होंने अपने पिता प्रात:स्मरणीय श्री शंकर दयाल सिंह की यात्रा की स्मृति के प्रकाश में वे दृश्य देखे।

—विद्या विंदु सिंह, लखनऊ

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक प्राप्त हुआ। सदा की भाँति सभी रचनाएँ स्तरीय हैं, लेकिन रहिला रईस की कहानी 'शादीनामा' एक क्रांतिकारी रचना लगी। मैं लेखिका को बधाई देता हूँ कि इस रचना के माध्यम से उन्होंने मुसलिम और गैर-मुसलिम औरतों को सचेत किया है। मैं हैरान था कि मुसलिम औरतों की तंजीमें इतनी उग्र क्यों होती जा रही हैं। मुझे आज जवाब मिल गया। ***—बी.डी. बजाज, दिल्ली***

'साहित्य अमृत' के अगस्त और सितंबर अंक एक अनुपम उपहार से लगे। संपादकीय की स्वतंत्रता संबंधी विहंगम दृष्टि ने पूरे स्वाधीनता संग्राम का ही परिदृश्य उपस्थित कर दिया। चतुर्वेदीजी के सुखद स्वास्थ्य के लिए शतश: शुभकामनाएँ। श्री प्रकाश मनु का 'वे उदार हृदय अंग्रेज, भारत जिनका घर बन गया' बहुत शोधपरक लगा। यह अंक ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ शोधपरक भी लगा, जिसमें दक्षिण भारत, झारखंड और स्वर्ण अनिल रचित पूर्वोत्तर भारत के स्वातंत्र्यवीरों की जानकारी ने लेखिका के विस्तृत ज्ञान से परिचित कराया। सितंबर अंक हिंदी के अनन्यप्रेमी श्रीनारायण चतुर्वेदीजी के हिंदी प्रेम का परिचायक है। हिंदी में विश्वभाषा बनने की कितनी सामर्थ्य है, यह इन लेखों से पता लगता है। बद्रीनारायण तिवारीजी का आलेख पठनीय है। कहानियाँ, लघुकथाएँ बहुत अच्छी हैं।

—संतोष माटा, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का स्वाधीनता विशेषांक वास्तव में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण संग्रहणीय दस्तावेज है। मैंने भारत के स्वाधीनता संग्राम के बारे में इतनी अधिक सामग्री एक जगह पहले कभी नहीं देखी। देश के एक कोने से दूसरे कोने तक आपने व्यापक रूप से स्वाधीनता संग्राम के बारे में प्रामाणिक लेख एकत्र कर छापे हैं। मैं अनुमान लगा सकता हूँ कि इस विशेषांक को निकालने के पीछे आपकी और आपके साथियों एवं सहयोगियों का कितना समय और कठिन परिश्रम लगा होगा।

—प्रकाश चंद्र गुप्ता, अलवर (राज.)

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक प्राप्त हुआ। हेमंत कुकरेतीजी का राजभाषा-राष्ट्रभाषा हिंदी संपादकीय काफी अच्छा बन पड़ा है। प्रतिस्मृति 'हिंदीमय जीवन' श्री विद्यानिवास मिश्र को सदैव याद रखने योग्य है। ऐसे विचारों से तो संपोषण होता है एवं कुछ बातें हृदयंगम की जाती हैं। सारी पत्रिका पठनीय तो है ही, आज की परिस्थितियों में अपनी श्रेष्ठता के लिए भी वांछनीय है। लघुकथाएँ, कविताएँ, आलेख सभी ने आकर्षित किया और जब तक सांगोपांग पढ़ नहीं लिया, तब तक पढ़ने की जिज्ञासा ज्यों-की-त्यों बनी रही। आपकी सारी मेहनत देश-दुनिया के पाठकों को सार्थक ज्ञान, पठनीय संग्रहणीय सामग्री देकर उपकार कर रही है, इसके लिए आप सभी संपादकीय साथीगण एवं लेखकगण साधुवाद के पात्र हैं। इस अंक में सीताराम गुप्ता की 'भ्रष्टाचार', कृपाशंकर शर्मा 'अचूक' की 'मनवा आठों याम', रूपनारायण काबरा की 'सत्यं शिवं सुंदरम्', राजेंद्र परदेस की 'गृहस्थी' सहित सभी को धन्यवाद कि पाठकों को ज्ञानवर्धक सामग्री से परिचय कराया है। यथा—

जन-जन की आवाज बन जाए 'साहित्य अमृत'।
हर पाठक के मन में बस जाए 'साहित्य अमृत'॥
आज के इस दौर में इतना कहाँ मिल पाता है बंधु,
साहित्य की सरिता अविरल बहाए 'साहित्य अमृत'॥

—ओम हरित, जयपुर

साहित्य अमृत का सितंबर अंक भी विशेष स्तरीय एवं प्रशंसनीय है। संपादकीय 'राजभाषा-राष्ट्रभाषा हिंदी' चिंतन, मंथन और मनन की प्रेरणा प्रदान करता है।

—राजा चौरसिया, कटनी (म.प्र)

साहित्य अमृत का अगस्त अंक स्वाधीता विशेषांक में भरपूर ज्ञान, राष्ट्रीयता, देशप्रेम, संग्राम के सैनिकों का राष्ट्रप्रेम त्याग से भरपूर ज्ञान पाठकों को दिया है। हम एक हैं, हम भारत के जन-जन हैं, हमारी माता भारतमाता है। वंदे मातरम्।

संपादकीय में आजादी की आँधी से प्रेरित रही है। बलिदान की यह हमारी पृथ्वी कितनी पवित्र कितनी महान् है। गांधी, सुभाष, जवाहर जैसे अनन्य संग्रामियों को हमारा प्रणाम।

अंक तो श्रेष्ठ है और वह आगे-आगे बढ़ता रहा। सर्वश्रेष्ठ रहा और हमें राष्ट्रप्रेम से भी उत्प्रेरित करने में सक्रिय रहा। आप धन्यवाद के पात्र हैं। पूरा संपादक, लेखक, कवि आदि कर्मचारियों को पुन: सहृदय धन्यवाद। आप शीघ्र स्वस्थ हों। स्वास्थ्य, कर्म दोनों और भी यथावत् बढ़ते रहें, हमारी यही शुभकामनाएँ स्वीकारें।

—प्रकाश कुमार 'कृतराज', भिलाई (म.प्र.)

श्री नवीन चंद्र बाजपेई की कृति लोकार्पित

२३ अगस्त को लखनऊ के इंदिरा गांधी प्रतिष्ठान में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के कार्यकारी अध्यक्ष मान. श्री उदय प्रताप सिंह की अध्यक्षता में प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित जीवनगाथा 'घर-आँगन-देहरी से सत्ता के गलियारों तक' का लोकार्पण उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री अखिलेश यादव के करकमलों से संपन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि कन्नौज की सांसद मान. श्रीमती डिंपल यादव थीं। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में छात्र, साहित्यकार-पत्रकार, बुद्धिजीवी, चिंतक-विचारक एवं राजनीतिज्ञ सम्मिलित हुए। □

'कम्पैशन इन द ४ धार्मिक ट्रेडिशन' कृति लोकार्पित

२६ जुलाई को नई दिल्ली के रफी मार्ग स्थित कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित एवं प्रो. वेद पी. नंदा द्वारा संपादित पुस्तक 'कम्पैशन इन द ४ धार्मिक ट्रेडिशन' का लोकार्पण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक मान. श्री मोहनराव भागवत के करकमलों से संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि पूर्व उपप्रधानमंत्री मान. श्री लालकृष्ण आडवाणी थे। इस अवसर पर सर्वश्री बलराम सिंह, सरदार चिरंजीव सिंह, शगुन जैन एवं सामधोंग रिनपोछे ने अपने विचार व्यक्त किए। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

२७ जुलाई को नई दिल्ली के रफी मार्ग स्थित कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में रक्षा मंत्री मान. श्री मनोहर पर्रीकर की अध्यक्षता में पूर्व राष्ट्रपति 'भारत रत्न' डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की प्रथम पुण्यतिथि पर उनकी पावन स्मृति में प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित डॉ. कलाम पर केंद्रित डॉ. उन्नत पंडित की तीन कृतियों 'डॉ. कलाम : प्रेरणा की उड़ान' (हिंदी), 'डू यू नो : डॉ. ए.पी.जे. कलाम?' (अंग्रेजी) एवं 'प्रेरणा नू झरणु : डॉ. अब्दुल कलाम' (गुजराती) का लोकार्पण केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री मान. श्री प्रकाश जावडेकर के करकमलों से मान. श्री सुनील आंबेकर तथा मान. डॉ. विनय सहस्रबुद्धे के विशिष्ट आतिथ्य में संपन्न हुआ। इस अवसर पर 'डॉ. कलाम के स्वप्नों को साकार करने में छात्रों-युवाओं की भूमिका' विषय पर सर्वश्री विनय सहस्रबुद्धे, जी. सतीश रेड्डी, अतुल कोठारी एवं अनिल रावल ने अपने विचार व्यक्त किए। □

'वक्त के उजाले में' कृति लोकार्पित

९ सितंबर को चंडीगढ़ में हरियाणा राजभवन में डॉ. सुमिता मिश्रा (आई.ए.एस.) द्वारा रचित कविता-संग्रह 'वक्त के उजाले में' का लोकार्पण हरियाणा के माननीय राज्यपाल श्री कप्तान सिंह सोलंकी द्वारा लोकार्पण किया गया, जिसमें श्री माधव कौशिक ने पुस्तक पर अपनी टिप्पणी की। □

'सनरेज फॉर फ्राइडे' कृति लोकार्पित

१० सितंबर को चंडीगढ़ के लॉ हाउस में कॉम्पीटेंट फाउंडेशन द्वारा आयोजित, केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री श्री जगत प्रकाश नड्डा की अध्यक्षता में हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर ने किया। श्री संजय टंडन व श्रीमती प्रिया टंडन की अंग्रेजी पुस्तक 'सनरेज फॉर फ्राइडे' का लोकार्पण किया। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

विगत दिनों जामिया मिल्लिया इस्लामिया के हिंदी विभाग द्वारा आयोजित रचना पाठ कार्यक्रम में सर्वश्री स्वयं प्रकाश, हेमलता महिश्वर, अजय नावरिया ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संयोजन डॉ. रहमान मुसव्विर ने किया। इस अवसर पर हिंदी साहित्य और संस्कृति की पत्रिका 'बनास जन' के नए अंक का लोकार्पण भी किया गया। आभार डॉ. इंदु वीरेंद्र ने ज्ञापित किया। □

'हिंदी लाओ, देश बचाओ' कार्यक्रम संपन्न

श्रीनाथद्वारा (राज.) की अग्रणी साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक संस्था 'साहित्य मंडल' का तीन दिवसीय 'हिंदी लाओ, देश बचाओ' समारोह १५ सितंबर को संपन्न हुआ। प्रथम दिवस के पहले सत्र में अष्टछाप, साहित्यकार एवं प्रकाशन कक्ष का अतिथि साहित्यकारों ने अवलोकन किया। द्वितीय सत्र में विद्यालय के बाल-बालिकाओं ने नाटक, नृत्य एवं गोपी नृत्य प्रस्तुत किया। 'हिंदी-उपनिषद्-१' नामक तीसरे सत्र में देशभर से पधारे दर्जन भर साहित्यकारों ने हिंदी पर आलेख पढ़े। चौथे सत्र में लगभग पंद्रह साहित्यकारों को पटका, शॉल, श्रीनाथजी का प्रसाद, मारवाड़ी पगड़ी, श्रीनाथजी की प्रतिमा तथा प्रशस्ति-पत्र भेंट कर 'हिंदी साहित्य भूषण' की मानद् उपाधि से अलंकृत किया गया। पाँचवें और छठे सत्र में 'शतायु सम्मान-२०१६' तथा दो हजार रुपए की राशि के 'श्रीमती रामेश्वरी देवी, शिवकुमारजी साक्षी स्मृति सम्मान-२०१६' से आधा दर्जन साहित्यकार अलंकृत किए गए। सातवें सत्र में 'श्रीमती शशि कला मेहता स्मृति सम्मान-२०१६' के तहत साहित्यकारों का सम्मान किया गया। भोजनावकाश के बाद 'हिंदी हुंकृति' कार्यक्रम संपन्न हुआ तथा सायं को आठवें सत्र में एक दर्जन लेखकों को 'हिंदी साहित्य भूषण' की मानद उपाधि से अलंकृत किया तथा दसवें सत्र में लगभग पंद्रह कवियों को 'हिंदी काव्य भूषण' की मानद उपाधि के साथ प्रत्येक को पटका, माला, मारवाड़ी पगड़ी पहनाकर, शॉल ओढ़ाकर श्रीनाथजी का प्रसाद, श्रीनाथजी की छवि तथा प्रशस्ति-पत्र भेंट कर के सम्मानित किया गया। यह कार्यक्रम देर रात तक चला।

कार्यक्रम के दूसरे दिन नगर-परिक्रमण यानी हिंदी भाषा के प्रसार-प्रचार के लिए रैली निकाली गई। इसमें श्रीनाथद्वारा माध्यमिक विद्यालय के छात्र-छात्राएँ, अध्यापक-अध्यापिकाएँ तथा देशभर से पधारे कवि, लेखक, पत्रकार, संपादक एवं हिंदी-प्रेमी शामिल हुए। यह रैली पूरे गाजे-बाजे के साथ नगर के विभिन्न स्थानों का परिभ्रमण कर कार्यक्रम स्थल पर संपन्न हुई। इसके बाद साहित्य मंडल माध्यमिक विद्यालय के बालक-बालिकाओं ने राष्ट्रभाषा गान एवं हिंदी नाटक और गीत प्रस्तुत किए, इसके साथ ही संस्था द्वारा पुरस्कार वितरण कर बच्चों को सम्मानित-पुरस्कृत किया गया। दोपहर भोजनोपरांत हिंदी 'उपनिषद्-२' कार्यक्रम में प्रस्तोताओं ने हिंदी की दशा और दिशा पर अपने-अपने आलेखों का

वाचन किया। इसके बाद के छठे सत्र में लगभग एक दर्जन साहित्यकारों को 'हिंदी साहित्य शिरोमणि' की मानद उपाधि से अलंकृत किया गया। इसके अगले सत्र में पाँच हजार एक सौ राशि के विभिन्न सम्मानों के तहत आधा दर्जन साहित्यकार सम्मानित हुए। इसी तरह पाँच हजार पाँच सौ रुपए की राशि के अलग-अलग तीन पुरस्कारों से आठ साहित्यकार सम्मानित किए गए। सम्मानित-पुरस्कृत सभी महानुभावों को पटका पहनाकर, शॉल ओढ़ाकर, श्रीनाथजी का प्रसाद, श्रीनाथजी की छवि, मारवाड़ी पगड़ी पहनाकर प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए। सायं के भोजन के बाद रात्रि ९.३० से आखिल भारतीय खुला कवि सम्मेलन शुरू हुआ, जो देर रात्रि तक चला।

अंतिम दिन साहित्य कक्ष एवं पुस्तकालय के अवलोकन के बाद देश भर से आए लेखक-कवियों ने अपनी कृतियाँ साहित्य मंडल के पुस्तकालय को भेंट कीं। तत्पश्चात् 'हिंदी उपनिषद्-३' कार्यक्रम में एक दर्जन साहित्यकारों ने उनको राजभाषा हिंदी से संबंधित दिए गए अलग-अलग विषयों पर आलेख पढ़े। इसके तुरंत बाद देशभर से आमंत्रित विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के संपादकों को 'संपादक रत्न' की मानद उपाधि से अलंकृत किया गया। सम्मानस्वरूप प्रत्येक को पटका, शॉल, मारवाड़ी पगड़ी, श्रीनाथजी का प्रसाद, श्रीनाथजी की आकर्षक छवि तथा सम्मान-पत्र भेंट कर सम्मानित किया गया। इनके साथ ही आमंत्रित साहित्यकार 'हिंदी भूषण' की मानद उपाधि से सम्मानित किए गए। ग्यारह हजार रुपए की राशि के 'श्री शिव कुमार जी साक्षी स्मृति सम्मान-२०१६' डॉ. हरीश नवल को; 'हिंदी प्रचारक शताब्दी सम्मान-२०१६' डॉ. मालती शर्मा तथा पंद्रह हजार रुपए की राशि का 'श्री भगवती प्रसाद देवपुरा स्मृति सम्मान-२०१६' डॉ. चक्रधर नलिन को दिया जाना था, पर तीनों ही साहित्यकार कार्यक्रम में नहीं पहुँच सके। कार्यक्रम कई थे, जो सायं तक चलने वाले थे, परंतु गणेश विसर्जन के कारण कार्यक्रम को सीमित कर दोपहर तीन बजे ही राष्ट्रगान के साथ समापन कर दिया गया। तीन दिनों तक चले साहित्य-रसिक तथा हिंदी-प्रेमियों के इस कुंभ में देशभर से डेढ़-दो सौ साहित्यकार, पत्रकार, संपादक, कवि एवं हिंदी प्रेमियों ने भाग लिया। सभी अतिथियों के आवास की व्यवस्था बालासिनोर सदन में की गई थी तथा सभी कार्यक्रम संस्था के प्रेक्षागार में संपन्न हुए। संस्था के प्रधानमंत्री श्री श्यामप्रकाश देवपुरा, कदंब ब्रज साहित्य संस्थान, जयपुर के महामंत्री श्री विट्ठल पारीक एवं युवा कवि-लेखक श्री संजीवजी ने शानदार मंच संचालन किया। □

हिंदी दिवस समारोह संपन्न

१४ सितंबर को दिल्ली के राष्ट्रपति भवन ऑडिटोरियम में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा आयोजित हिंदी दिवस समारोह-२०१६ में भारत के राष्ट्रपति माननीय श्री प्रणब मुखर्जी, गृहमंत्री मान. श्री राजनाथ सिंह के मुख्य आतिथ्य में वर्ष २०१५-२०१६ के राजभाषा पुरस्कार प्रदान किए गए। ३०० से कम कर्मियों वाले मंत्रालय/विभाग में संसदीय कार्य मंत्रालय को प्रथम, आवास और शहरी गरीबी उपशमन मंत्रालय को द्वितीय, वित्तीय सेवाएँ विभाग को तृतीय; ३०० से अधिक कर्मियों वाले मंत्रालय/ विभाग में शहरी विकास मंत्रालय को प्रथम, अंतरिक्ष विभाग को द्वितीय एवं खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग को तृतीय; सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम में 'क' क्षेत्र में पावर फाइनेंस कॉरपोरेशन लिमिटेड को प्रथम, एन.एच.पी.सी. लिमिटेड को द्वितीय, फेरा स्क्रैप निगम लिमिटेड को तृतीय; 'ख' क्षेत्र में कोंकण रेलवे कॉरपोरेशन को प्रथम, भारतीय कपास निगम लिमिटेड को द्वितीय, भारतीय निर्यात ऋण गारंटी निगम लिमिटेड को तृतीय; 'ग' क्षेत्र में गार्डनरीच शिपबिल्डर्स एंड इंजीनियर्स लिमिटेड को प्रथम, राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड को द्वितीय, गोवा शिपयार्ड लिमिटेड को तृतीय; भारत सरकार के बोर्ड/स्वायत्त निकाय/ ट्रस्ट/सोसाइटी से 'क' क्षेत्र में तेल उद्योग विकास बोर्ड को प्रथम, भारतीय विदेश व्यापार संस्थान को द्वितीय, सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र को तृतीय; 'ख' क्षेत्र में जवाहरलाल नेहरू पत्तन न्यास को प्रथम, भाखड़ा ब्यास प्रबंध बोर्ड को द्वितीय, रा.रा.पो. आयुर्वेद कैंसर अनुसंधान संस्थान को तृतीय; 'ग' क्षेत्र में दामोदर घाटी निगम को प्रथम, केंद्रीय विद्युत अनुसंधान संस्थान को द्वितीय, समुद्री उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण को तृतीय; राष्ट्रीयकृत बैंक के 'क' क्षेत्र में पंजाब नेशनल बैंक को प्रथम, स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एंड जयपुर को द्वितीय; 'ख' क्षेत्र में बैंक ऑफ इंडिया को प्रथम, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया को द्वितीय; 'ग' क्षेत्र में सिंडिकेट बैंक को प्रथम, विजया बैंक को द्वितीय; नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के 'क' क्षेत्र वर्ग में न.रा.का.स. मथुरा एवं सदस्य सचिव न.रा.का.स. (कार्यालय) को प्रथम, न.रा.का.स. भिलाई एवं सदस्य सचिव न.रा.का.स. भिलाई (कार्यालय) को द्वितीय; 'ख' क्षेत्र वर्ग में न.रा.का.स. नागपुर एवं सदस्य सचिव न.रा.का.स. नागपुर (बैंक) को प्रथम, न.रा.का.स. चंडीगढ़ एवं सदस्य सचिव न.रा.का.स. चंडीगढ़ (कार्यालय) को द्वितीय; 'ग' क्षेत्र वर्ग में न.रा.का.स. हैदराबाद एवं सदस्य सचिव न.रा.का.स. हैदराबाद (उपक्रम) को प्रथम, न.रा.का.स. हैदराबाद एवं सदस्य सचिव न.रा.का.स. हैदराबाद (बैंक) को द्वितीय 'राजभाषा कीर्ति पुरस्कार २०१५-१६'; 'क' क्षेत्र में जल चेतना को प्रथम, भारतीय रेल को द्वितीय; 'ख' क्षेत्र में प्रयास को प्रथम, जल तरंग को द्वितीय; 'ग' क्षेत्र में सुगंध को प्रथम, राजभाषा जागृति को द्वितीय 'गृह पत्रिका पुरस्कार २०१५-१६' से; केंद्र सरकार के कर्मियों में सर्वश्री राम नारायण मीना एवं राम कुमार सिंह को प्रथम, अमलेश कुमार मिश्र को द्वितीय, दिनेश कुमार शर्मा को तृतीय, चंद्रभान सिंह, जे.पी. शर्मा एवं रणबीर सिंह को प्रोत्साहन; भारत के नागरिकों में सर्वश्री राजेश्वरी प्रसाद चंदोला को प्रथम, जयश्री घोष को द्वितीय, सुनील कांत तांगड़ी को तृतीय, दुर्गादत्त ओझा, रश्मि अग्रवाल, सत्यवीर सिंह, सुबह सिंह यादव, ओ.पी. यादव, प्रेमचंद्र स्वर्णकार, विनय कुमार शर्मा, सुरेश कुमार को प्रोत्साहन के 'राजभाषा गौरव मौलिक पुस्तक लेखन पुरस्कार-२०१५' से; उत्कृष्ट लेखों के लिए हिंदीभाषी लेखकों में सर्वश्री वीरेंद्र कुमार को प्रथम, कैलाश नाथ गुप्त को द्वितीय, राम हरि शर्मा को तृतीय तथा हिंदीतर भाषी लेखकों में सर्वश्री सदा बिहारी साहु को प्रथम, कृष्ण ठाकुर को द्वितीय एवं सुनील पेशिन को तृतीय 'राजभाषा गौरव पुरस्कार २०१५-१६' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर

गृह राज्यमंत्री श्री किरेन रिजीजू ने स्वागत उद्‌बोधन दिया। मंच पर संयुक्त सचिव डॉ. विपिन बिहारी भी विराजे थे। धन्यवाद राजभाषा विभाग के सचिव श्री अनूप श्रीवास्तव ने ज्ञापित किया। ☐

हिंदी दिवस समारोह संपन्न

विगत दिनों एन.टी.पी.सी. दादरी में आयोजित हिंदी दिवस समारोह में सर्वश्री एस.पी. सिंह, गीतिका शिव, कुँअर बेचैन, कीर्ति काले ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन श्री अतरसिंह गौतम ने तथा आभार श्री सत्यजीत पंडा ने ज्ञापित किया। ☐

'हिंदी दिवस' आयोजित

३ सितंबर को शिकागो में अमेरिका के हिंदी प्रेमी संघ तथा वर्ल्ड हिंदी फाउंडेशन द्वारा हिंदी दिवस आयोजित किया गया, जिसके मुख्य अतिथि डॉ. आयुश्फ सईद थे। प्रमुख वक्ता के रूप में अमेरिका प्रवास पर गईं प्रख्यात हिंदी लेखिका श्रीमती मृदुला बिहारी ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

अंतरराष्ट्रीय हिंदी समारोह एवं संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों अंतरराष्ट्रीय साहित्य कला मंच, मुरादाबाद द्वारा अंतरराष्ट्रीय हिंदी समारोह एवं संगोष्ठी का आयोजन इनाल्को के सभागार में किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. प्राण जग्गी, संयोजक डॉ. घनश्याम शर्मा, मुख्य अतिथि डॉ. जयपाल सिंह 'व्यस्त', अति विशिष्ट अतिथि डॉ. विद्याविंदु सिंह एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री आनंदसुमन सिंह, जोहरा अफजल, प्रदीप कुमार अग्रवाल, महाश्वेता चतुर्वेदी देवकीनंदन शर्मा, विशेष गुप्ता, महेश 'दिवाकर' थे। उद्‌घाटन सत्र में सर्वश्री अवधेश कुमार सिंह, मयंक पंवार और अंकित सिसौदिया ने एक डॉक्यूमेंट्री फिल्म दरशाई, साथ ही मंचस्थ अतिथियों ने 'हिंदी का वैश्विक पर्यावरण' ग्रंथ का लोकार्पण कर अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर आयोजित संगोष्ठी में लगभग पैंतालिस साहित्य-प्रेमियों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. मीना कौल ने किया तथा धन्यवाद डॉ. गायत्री सिंह ने ज्ञापित किया। ☐

डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल पुरस्कृत

१४ अगस्त को उदयपुर के नेहरू छात्रावास में 'अदबी उड़ान' की ओर से श्री मुरलीधर कनेरिया की अध्यक्षता में आयोजित भव्य समारोह में डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल को मुख्य अतिथि मान. श्री गुलाब चंद कटारिया द्वारा 'अदबी उड़ान बाल साहित्य पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें प्रशस्ति-पत्र, शॉल व पटका भेंट किया। संचालन श्री खुर्शीद शेख 'खुर्शीद' ने किया। ☐

डॉ. सुनीता जैन को 'व्यास सम्मान'

विगत दिनों नई दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल सेंटर के मल्टी पर्पज हॉल में के.के. बिरला फाउंडेशन की ओर से आयोजित समारोह में पश्चिम बंगाल के राज्यपाल श्री केशरीनाथ त्रिपाठी द्वारा डॉ. सुनीता जैन को उनकी काव्य-कृति 'क्षमा' की रचना के लिए '२५वें व्यास सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक चिह्न व साढ़े तीन लाख रुपए की राशि भेंट की गई। प्रो. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी व डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अमीषा अनेजा ने किया। ☐

कथालेखक श्रीकांत व्यास सम्मानित

१९-२० अगस्त को पटना में खगड़िया के कोशी महाविद्यालय के सभागार में पंद्रहवें महाधिवेशन पर आयोजित आरसी प्रसाद सिंह स्मृति पर्व के अवसर पर श्री श्रीकांत व्यास को उनकी कालजयी पुस्तक 'लक्खू दा की बताशा संस्कृति' के लिए हिंदी भाषा साहित्य परिषद् द्वारा 'नागार्जुन रजत स्मृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें प्रमाण-पत्र, शील्ड, अंग-वस्त्र और पुस्तकें भेंट की गईं। ☐

व्याख्यानमाला आयोजित

१ सितंबर को इलाहाबाद के विज्ञान परिषद् प्रयाग के तत्त्वावधान में प्रो. कृष्ण बिहारी पांडेय की अध्यक्षता में डॉ. रामकुमारी मिश्र की चौथी पुण्यतिथि के अवसर पर आयोजित व्याख्यानमाला के अंतर्गत 'बाजारवाद और हिंदी की प्रासंगिकता' विषय पर सर्वश्री हनुमान प्रसाद तिवारी, स्वामी सत्यानंद त्यागी तथा स्वामी गीतानंद गिरि ने अपने विचार व्यक्त किए। डॉ. वीना मिश्र ने अपनी माँ के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। श्रीमती मंजुलिका लक्ष्मी ने डॉ. राजकुमारी मिश्र का तथा डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने श्री कैलाश चंद्र पंत का परिचय प्रस्तुत किया। संचालन श्री देवव्रत द्विवेदी ने किया। ☐

परिचर्चा आयोजित

२७ अगस्त को नई दिल्ली के बुरांश साहित्य एवं कला केंद्र के तत्त्वावधान में गांधी शांति प्रतिष्ठान में उत्तराखंड के जनांदोलनों में उपन्यास की भावभूमि पर श्री अर्जुन सिंह रावत के उपन्यास 'हल्ला बोल' पर एक परिचर्चा का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री पंकज बिष्ट, आनंद स्वरूप वर्मा, अनिल चमड़िया, हरिसुमन बिष्ट, चारु तिवारी, प्रीति रमोला गुसाईं व व्योमेश जुगरान ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री प्रदीप वेदवाल ने किया। ☐

प्रादेशिक गजल-गोष्ठी संपन्न

२८ अगस्त को भोपाल के हिंदी भवन में डॉ. रामवल्लभ आचार्य की अध्यक्षता में, श्री बटुक चतुर्वेदी के मुख्य आतिथ्य तथा श्री महेश अग्रवाल के विशिष्ट आतिथ्य में प्रादेशिक गजल गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री हसन मुरैनवी, अनिरुद्ध सिंह सेंगर, पुष्पा पटेल, नलिन खोईवाल, परमलाल परम, मुक्ता सिकरवार, पवन कुमार आजाद, फैज रतलामी, अबरार नगमी, नरेंद्र श्रीवास्तव, विजय नामदेव, महेश शर्मा, शरद जोशी 'शलभ', जयकृष्ण चांडक, रतनसिंह सोलंकी, सी.एस. मेहरा तथा शफी लोदी रतलामी ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन श्री अशोक निर्मल ने तथा आभार श्री पंवार राजस्थानी ने व्यक्त किया। ☐

सातवाँ मीरा-स्मृति पुरस्कार हेतु प्रविष्टि आमंत्रित

मीरा फाउंडेशन, साहित्य भंडार, इलाहाबाद के सहयोग से प्रतिवर्ष

हिंदी की रचनात्मक मेधा को पुरस्कृत करने के उद्देश्य से 'मीरा स्मृति पुरस्कार' प्रदान करता है। पुरस्कार के रूप में रु. २५,०००, प्रशस्ति-पत्र और शॉल प्रदान किए जाते हैं। यह पुरस्कार एक वर्ष कहानी संकलन और दूसरे वर्ष कविता पर प्रदान किया जाता है। 'सातवाँ मीरा स्मृति पुरस्कार' २०१५ कहानी की अप्रकाशित पांडुलिपि पर प्रदान किया जाएगा। इसके लिए वही कहानीकार पात्र होंगे, जिनकी आयु ३१ दिसंबर, २०१६ को ६० वर्ष से अधिक नहीं होगी। □

श्री अमृतलाल नागर की जन्मशती पर आयोजन

विगत दिनों हिंदी के कालजयी लेखक श्री अमृतलाल नागर के जन्मशती वर्ष के उपलक्ष्य में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केंद्र द्वारा प्रो. देवेंद्र चौबे की अध्यक्षता में परिचर्चा का आयोजन किया गया, जिसमें प्रो. ऋचा नागर द्वारा संपादित एवं किताबघर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित 'मैं और मेरा मन : शरद नागर' पुस्तक एवं 'आजकल' पत्रिका के अमृतलाल नागर जन्मशती विशेषांक का विमोचन किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री रामबक्ष, विभा नागर, ऋचा नागर, दीक्षा नागर एवं एस.एम. अनवार आलम ने अपने विचार व्यक्त किए। □

श्री नलिन विलोचन शर्मा जन्मशतवार्षिकी आयोजित

विगत दिनों मुजफ्फरपुर में साहित्य अकादेमी और बी.आर. अंबेडकर बिहार वि.वि. के हिंदी विभाग के संयुक्त तत्त्वावधान में साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष श्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी की अध्यक्षता में आयोजित श्री नलिन विलोचन शर्मा जन्मशतवार्षिकी समारोह में प्रो. गोपेश्वर सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। प्रथम सत्र श्री रामवचन राय की अध्यक्षता में सर्वश्री अभिताभ राय, ऋता शुक्ल, तरुण कुमार, साधना अग्रवाल ने नलिन विलोचन शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व पर केंद्रित था। प्रपद्यवाद और नलिन विलोचन शर्मा पर केंद्रित द्वितीय सत्र में सर्वश्री सत्यकाम, नंदकिशोर नंदन, सुरेंद्र स्निग्ध ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अनुपम कुमार ने किया तथा धन्यवाद प्रो. रेवती रमण ने ज्ञापित किया। इस अवसर पर प्रो. गोपेश्वर सिंह द्वारा संपादित 'नलिन विलोचन शर्मा : रचना संचयन' का लोकार्पण भी किया गया। □

डॉ. सुशील सिद्धार्थ सम्मानित

विगत दिनों अवधी संस्थाओं और संगठनों के संघ 'अवधी पंचाइत' की बैठकी जयशंकर प्रसाद सभागार में संपन्न हुई, जिसमें डॉ. हरिओम के मुख्य आतिथ्य एवं डॉ. अखिलेश मिश्र व श्री राकेश पांडेय के विशिष्ट आतिथ्य में डॉ. सुशील सिद्धार्थ को 'अवधी शिखर सम्मान' एवं श्री पवन सिंह चौहान को 'अवधी रत्न सम्मान' से सम्मानित किया गया। सर्वश्री श्यामसुंदर दीक्षित, विनय दास, कुमार तरल, अशोक अज्ञानी, ओ.पी. जयंत, माधव बाजपेयी, विश्वंभरनाथ अवस्थी पप्पू भैया, अमित शुक्ल, प्रदीप तिवारी, विष्णु शर्मा ने वक्तव्य दिए। संचालन डॉ. रामबहादुर मिश्र ने किया तथा आभार श्री विनोद मिश्र ने ज्ञापित किया। □

श्री गिरीश पंकज सम्मानित

विगत दिनों भिलाई में श्री टी.एस. सिंह देव की अध्यक्षता एवं छत्तीसगढ़ के उच्च शिक्षा मंत्री श्री प्रेमप्रकाश पांडेय के मुख्य आतिथ्य में प्रसिद्ध व्यंग्यकार श्री गिरीश पंकज को 'वसुंधरा सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें शॉल, श्रीफल, अभिनंदन पत्र के साथ ग्यारह हजार रुपए की राशि भेंट की गई। इस अवसर पर कवि श्री शरद कोकस एवं श्री सुशील त्रिवेदी ने विचार व्यक्त किए। आभार शायर मुमताज ने ज्ञापित किया। □

काव्य-गोष्ठी संपन्न

विगत दिनों भीलवाड़ा में साहित्यिक उन्नयन को समर्पित संस्था 'सामयिकी' की मासिक रचना गोष्ठी का आयोजन श्री श्यामसुंदर सुमन की अध्यक्षता में किया गया, जिसमें सर्वश्री भँवर आर्य, रेखा लोढ़ा 'स्मित', बंशीलाल पारस, योगेंद्र योगी, जयप्रकाश भाटिया, एस.के. लोहानी, खालिस, रतन कुमार चटुल, गुलाब मीर चंदानी, पुनीता भारद्वाज, राजमती सुराणा, महेंद्र शर्मा, दिया सेन, निरंजन नीर, मनोहर चंडोलिया, राजकुमार राज ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन श्री अरुण अजीब ने किया। □

राष्ट्रीय बालसाहित्य संगोष्ठी संपन्न

५ सितंबर को भीलवाड़ा में डॉ. प्रत्यूष गुलेरी ने शिक्षक दिवस के अवसर पर 'बालवाटिका' एवं विनायक विद्यापीठ द्वारा राष्ट्रीय बालसाहित्य संगोष्ठी का आयोजन श्री तोताराम महाराज की अध्यक्षता में किया गया, जिसके उद्घाटन एवं चर्चा सत्र में मुख्य अतिथि डॉ. विनोद बब्बर तथा विशिष्ट अतिथि श्री काशीलाल शर्मा थे। सर्वश्री भैरूंलाल गर्ग, रमेश 'मयंक', कैलाश पारीक, गोवर्धन यादव, हरिसिंह पाल, राधेश्याम दाधीच, नंदकिशोर निर्झर, बंशीलाल पारस ने अपने विचार व्यक्त किए। डॉ. देवेंद्रकुमार कुमावत द्वारा सभी सहभागी साहित्यकारों का शॉल ओढ़ाकर अभिनंदन किया गया। संचालन डॉ. कैलाश पारीक ने किया। □

प्रेमचंद जयंती मनाई गई

विगत दिनों ओस्लो में भारतीय नॉर्वेजीयन एवं सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम द्वारा मुंशी प्रेमचंद जयंती मनाई गई, जिसमें प्रो. रिपुसूदन सिंह एवं प्रो. आशुतोष तिवारी को 'स्पाइल-दर्पण सांस्कृतिक पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री रिपुसूदन सिंह, संगीता, दिव्या, माया भारती, कैलाश राय, अर्जुन शुक्ल, इंदर खोसला, नौशीन इकबाल, प्रगट सिंह, सुरेशचंद्र शुक्ल, नूरी रोयसेग, इंगेर मारिये लिल्लेएंगेन, सुरेशचंद्र शुक्ल, राज कुमार, मीना मुरलीधरन ने रचना पाठ किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

भारतीय ज्ञानपीठ की बारहवीं नवलेखन प्रतियोगिता कविता तथा कहानी विधा के लिए सुनिश्चित की गई है। पांडुलिपि की गुणवत्ता के अनुसार चयनित दोनों विधाओं की पांडुलिपि पर पचास-पचास हजार रुपए का पुरस्कार प्रदान किया जाएगा। चयनित पांडुलिपि को भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशित करेगा। लेखक की प्रथम अप्रकाशित कृति १५०-२०० टंकित पृष्ठों की होनी चाहिए। लेखक अपनी जन्मतिथि सहित पूरा परिचय, प्रमाण-पत्र, पांडुलिपि ३१ अक्तूबर तक भारतीय ज्ञानपीठ १८, इंस्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली-११०००३ पर भेज सकते हैं। □

काव्य समारोह संपन्न

२० अगस्त को नई दिल्ली के पी-एच.डी. चैंबर्स ऑफ कॉमर्स के सभागार में साहित्य को समर्पित संस्था 'परंपरा' का अठारहवाँ समारोह डॉ. हरिवंश राय बच्चन की स्मृति में आयोजित किया गया, जिसमें डॉ. अजित कुमार को 'परंपरा विशिष्ट सम्मान', डॉ. नरेंद्र मोहन को 'परंपरा ऋतुराज वरिष्ठ सम्मान' तथा सर्वश्री लीलाधर मंडलोई, बुद्धिनाथ मिश्र, नरेंद्र दीपक व पवन कुमार को 'परंपरा ऋतुराज सम्मान' से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री काशीनाथ मेमानी, राजेश रेड्डी, ताहिर फराज, पवन दीक्षित, सुरेंद्र शर्मा, अशोक चक्रधर, लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, किरण मेमानी ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन प्रो. अशोक चक्रधर ने किया। □

कवि-सम्मेलन संपन्न

११ सितंबर वरिष्ठ भाजपा नेता एवं संवेदनशील साहित्यकार श्री शांताकुमार के ८३वें जन्म दिवस की पूर्व संख्या पर को रचना साहित्य एवं कला मंच पालपुर द्वारा यामिनी परिसर में एक सम्मान-कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिस में प्रदेश के बीस वरिष्ठ कवियों ने अपनी कविताओं का पाठ किया। श्री शांताकुमार ने पहली बार अपनी साहित्यिक यात्रा पर विस्तारपूर्वक अपने मन की अनकही बातें कहीं। श्रीमती संतोष शैलजा ने अन्य प्रमुख कवियों, यथा सर्वश्री परमानंद शर्मा, ओम अवस्थी, पीयूष गुलेरी, सरोज परमार आदि के साथ अपनी कविताएँ सुनाईं। कथाकार डॉ. सुशील कुमार फुल्ल ने मंच संचालन किया तथा श्री शांताकुमार से संबद्ध अनेक संस्मरण सुनाए। □

हिंदी साहित्य सम्मेलन संपन्न

१० सितंबर को नई दिल्ली के दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी हॉल में 'हिंदी पखवाड़े' के अवसर पर श्री सुरेश चंद्र दुबे की अध्यक्षता, डॉ. नरेंद्र कोहली के मुख्य आतिथ्य एवं डॉ. रमा शर्मा के विशिष्ट आतिथ्य में सर्वश्री हरीश नवल, शंभूनाथ पांडे, रामगोपाल शर्मा, सर्वेश, राकेश भारद्वाज, योगेंद्र सिंह मान, दिनेश शर्मा, विनय शुक्ल 'विनम्र', प्रियंका राय, दीपक गोस्वामी, जगदीश भारद्वाज, जयप्रकाश शर्मा को सम्मानित किया गया। इस अवसर के समापन पर विचार गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री रमा शर्मा, रामशरण गौड़, सुरेश चंद्र दुबे व इंदिरा मोहन ने अपने विचार व्यक्त किए। □

त्रिवार्षिक प्रांतीय अधिवेशन संपन्न

२०-२१ अगस्त को गुड़गाँव के सभागार में हरियाणा साहित्य अकादमी के सौजन्य से अखिल भारतीय साहित्य परिषद्, हरियाणा के दो दिवसीय अठारहवें त्रिवार्षिक प्रांतीय अधिवेशन के उद्घाटन सत्र में सर्वश्री पवन जिंदल, किरणमयी, श्रीधर पराड़कर, शिवकुमार खंडेलवाल ने अपने विचार व्यक्त किए। द्वितीय सत्र में डॉ. राधेश्याम शर्मा की अध्यक्षता में 'पत्रकारिता का राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य' विषय पर गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें डॉ. कुमुद शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। रात्रिकाल में आयोजित काव्य संध्या में हरियाणा के विभिन्न जिलों से आए लगभग ४० कवियों ने रचना पाठ किया। समापन सत्र में 'साहित्यधारा में गैर-साहित्यिक स्वर' विषय पर डॉ. नंदलाल मेहता ने अपने विचार व्यक्त किए। □

राष्ट्रकवि श्री दिनकर जयंती समारोह संपन्न

१७-१८ सितंबर को रायपुर में प्रथम दिवस महाराजा अग्रसेन महाविद्यालय ऑडिटोरियम समता कॉलोनी एवं द्वितीय दिवस विप्रा भवन में कार्यक्रम आयोजित किए गए, जिसमें श्री गुलाब सिंह कँवर 'गुलाब' की दो पुस्तकों—'गुलाब की पँखुड़ियाँ' एवं 'उजाले की ओर' का विमोचन किया गया। मुख्य अतिथि श्री गौरीशंकर अग्रवाल एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री जगदीश मित्तल, परमार, बलवीर सिंह 'करुण', सुमित ओरछा, महेश शर्मा थे। इस अवसर पर बाल साहित्यकार श्री शंभुलाल शर्मा 'बसंत' को 'राष्ट्रकवि दिनकर साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में २३ साहित्यिक प्रतिभाओं का सम्मान किया गया, ८ पुस्तकों का विमोचन किया गया तथा विभिन्न प्रदेशों के कवियों द्वारा काव्य पाठ किया गया, जिनमें सर्वश्री अजनी कुमार 'अंकुर', शंभुलाल शर्मा 'बसंत', अमित दुबे, अजय सनाढ्य, जगत सिंह ठाकुर, अमित परासर शर्मा, दिलीप गुप्ता, रुक्मणी देवी सिंह, संजय बहिदार, संतोष पैंकरा, मिलन मलरिहा, दिनेश दिव्य, रामकुमार पटेल, सुमन अग्निहोत्री, मनमोहन सिंह ठाकुर, गुलाब सिंह कँवर 'गुलाब' शामिल थे। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

फरवरी २००९ से वाराणसी से नियमित प्रकाशित होनेवाली साहित्यिक पारिवारिक मासिक पत्रिका 'सोच विचार' द्वारा 'ग्राम्य कथा प्रतियोगिता' आयोजित की जा रही है, जिसके अंतर्गत १०००-३००० शब्दों की कहानी हिंदी भाषा में सर्वथा मौलिक, अप्रकाशित एवं ग्रामीण परिवेश/ग्राम्य पृष्ठभूमि पर होनी चाहिए। यह रचना किसी भी आयु/जाति/वर्ग/लिंग का व्यक्ति ३० नवंबर तक लेखक अपने पूरे पते एवं पासपोर्ट साइज फोटो के साथ संपादकीय कार्यालय के ६७/१३५ (ए), ईश्वरगंगी, वाराणसी-२२१००१ (उ.प्र.) पर भेज सकते हैं। पुरस्कार का निर्णय निर्णायक मंडल द्वारा लिया जाएगा, जिसकी पुरस्कार राशि प्रथम ५०००/-, द्वितीय २५००/- एवं प्रोत्साहन पुरस्कार तृतीय १५००/- व ५००/- होगी। □

साहित्यिक क्षति

श्री प्रभाकर श्रोत्रिय नहीं रहे

१५ सितंबर को हिंदी के वरिष्ठ लेखक श्री प्रभाकर श्रोत्रिय (७६) का निधन हो गया। वे लंबे समय से बीमार चल रहे थे। उनके परिवार में पत्नी, पुत्र, पुत्रवधू एवं पुत्री हैं। प्रभाकर श्रोत्रिय का जन्म मध्य प्रदेश के जावरा में १९ दिसंबर, १९३८ को हुआ था। हिंदी साहित्य में उनकी पहचान प्रखर आलोचक और नाटककार के रूप में थी। वे कई पत्र-पत्रिकाओं के संपादक रहे।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।